इस्लाम

एक परिचय

इस्लाम के तीन बुनियादी अक़ायद

(इस्लाम के तीन मूलभूत विश्वास)

इस्लाम

—मुकम्मल दीन
मुस्तक़िल तहज़ीब

अबुल हसन अली नदवी (रह॰)
(अली मियाँ)

इस्लाम

एक परिचय

अबुल हसन अली नदवी (रह०)
(अली मियाँ)

एम० एच० ट्रस्ट, दायरा शाह अलमुल्लाह
तकिया कलाँ, रायबरेली (यू०पी०)

—: प्रकाशक :—

मोहम्मद हसनी ट्रस्ट

तकिया कलाँ रायबरेली

सातवां संस्सकरण 15000

सन् 2008 ई०

पहला	:	15 हज़ार
दूसरा	:	3 हज़ार
तीसरा	:	3 हज़ार
चौथा	:	10 हज़ार
पाँचवा	:	10 हज़ार
छटा	:	8 हज़ार

विषय सूची

परिभाषिक शब्दावली

मअ़बूद : ऐसी हस्ती जिनके सामने झुका जाये और इबादत की जाये।

शिर्क : ग़ैर अल्लाह को इलाह (खुदा) बना लेना। अल्लाह की ज़ात मे किसी को शरीक करना।

तौबः : अल्लाह से माफी मांगना। अपने गुनाह (पाप) पर नदामत (पश्चाताप) के साथ और आइन्दा (आगे) न करने के इरादे के साथ।

कुफ्र : अल्लाह के दीन और उसकी शरीअ़त का इन्कार, उसकी सत्ता से बग़ावत और उसके आदेशों की अवहेलना, चाहे किसी तरीके और अ़लामत से ज़ाहिर हो।

रक्अ़त : नमाज़ मे खड़ा होकर कुरआन पढ़ना एक रक्अ़त और सज्दे के बाद दूसरी बार खड़े होकर पढ़ना दूसरी रक्अ़त हुई

तौहीद : अल्लाह को उसकी ज़ात और सिफ़ात (गुण) में एक मानना, अल्लाह की ख़ालिस इबादत और पूरी इताअ़त (आज्ञा–पालन) जो अकेले उसी का हक़ है।

खुतब–ए–जुमा : जुमा की नमाज़ से पहले तक़रीर (सम्बोधन) जिसमें अल्लाह की स्तुति हो और अल्लाह के रसूल सल्ल० पर दुरूद व सलाम और अच्छी व नेक बातों का हुक्म हो।

सुन्नत : वह काम जो फ़र्ज़ (अनिवार्य) न हो, लेकिन अल्लाह के रसूल सल्ल० ने किया हो और करने को कहा हो या पसन्द किया हो।

उम्मत : जमाअत (समुदाय) और क़ौम।

सअ़ी : हज में एक ख़ास जगह दौड़ने और तेज़ चलने को कहते हैं।

इस्तिन्जा : पाख़ाना और पेशाब के बाद पाकी व पवित्रता के लिए पानी, ढेले का प्रयोग।

शरअ़ी : दीन के अनुसार कार्य।

ज़बीह : अल्लाह के नाम पर ज़िबह किया हुआ जानवर।

दुरूद : अल्लाह के रसूल मुहम्मद सल्ल0 के लिए रहमत की दुआ।

अरकान : बुनियादें, स्तम्भ।

तदफ़ीन : दफ़न करना (मृत्यु के बाद) अन्त्येष्टि।

आयत : कुरआन का एक वाक्य।

खुलअ़ : पति–पत्नी के न निभने पर पत्नी अपने पति से (कुछ दे दिला कर) छुटकारा पा ले इसको खुलअ़ कहते हैं।

प्राक्कथन

आज वसुन्धरा अपनी तमाम विशालताओं के बावजूद एक घर की तरह हो गई है जिसमें रहने वाले लोग यद्यपि विभिन्न क़ौमों, सम्प्रदायों और वर्गों से सम्बन्ध रखते हों, किन्तु वे एक ही घर के रहने वाले हैं। वसुधैव कुटुम्बकम। अतएव सहअस्तित्व, जो सभ्य और शान्तिपूर्ण जीवन का माना हुआ सिद्धान्त है, के लिए और विभिन्न क़ौमों, सम्प्रदायों और आबादी के विभिन्न तत्वों की एकात्मकता, विश्वास, प्रेम व सम्मान तथा सहयोग व सहभागिता के लिए आवश्यक है कि हर क़ौम, दूसरी क़ौम के मिज़ाज व अभिरूचि तथा उसकी धार्मिक परम्पराओं व आस्थाओं से न केवल परिचित हो अपितु उनके विषय में उसमें उदारता हो।

लेकिन यह कितने दु:ख का विषय है कि एक घर के रहने वाले लोग, एक क्षेत्र के वासी, बाज़ारो और मंडियों मे साथ आने जाने वाले, शिक्षण संस्थाओं, कार्यालयों, कचहरियों में एक साथ उठने बैठने वाले, रेलों, बसों हवाई जहाज़ों में साथ यात्रा करने वाले, और जिन को आसानी से एक दूसरे से परिचय के अवसर प्राप्त हों, वह एक दूसरे की आस्था, उपासना, धार्मिक शिक्षा और विशेषताओं से लगभग ऐसे अन्जान और अजनबी हों, जैसे एक दूसरे से, प्राचीन समय की तरह, जब कि आज जैसी सुविधाएं उपलब्ध न थीं, एकदम ख़बर न होती थी।

हिन्दुस्तान में लगभग एक हज़ार वर्ष से हिन्दु–मुसलमान इकट्ठा रहते हैं शहरों, क़सबों, देहातों और मुहल्लों में उनकी मिली जुली आबादी निवास करती है। बाज़ारों मंडियों, शिक्षण संस्थाओं कचेहरियों और अब सौ वर्ष से भी अधिक हो रहा है कि राजनैतिक आन्दोलनों सामाजिक कार्यो, स्टेशन और डाक घरों, रेलों और बसो में उनको एक दूसरे से मिलने जुलने और एक दूसरे को जानने पहचानने के अवसर आसानी से प्राप्त हैं। लेकिन यह दुनिया की आश्चर्यजनक घटना और एक प्रकार की पहेली है जिसका बूझना आसान नहीं कि एक को दूसरे के धार्मिक विश्वास, सभ्यता व रहन सहन, तौर तरीक़े

और क़ौमी विशेषताओं से लगभग उतनी अनभिज्ञता और अजनबियत है जैसी पुराने समय में प्रायः दो देशों के वासियों के बीच हुआ करती थी। हर एक का ज्ञान दूसरे के प्रति, दोषपूर्ण, सरसरी और अधिकतर सुनी सुनाई बातों और कल्पनाओं पर आधारित है। प्रत्येक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय के बारे में तीव्र भ्रान्तियों से ग्रसित, और कभी कभी घृणा फैलाने वाले साहित्य, राजनीतिक प्रोपगन्डे, विशाक्त इतिहास, पाठ्यक्रम की किताबों और अप्रमाणित दास्तानों और कहानियों के आधार पर अपने मन मस्तिष्क में उसकी एक ग़लत और घिनावनी तस्वीर क़ायम किये हुए हैं। एक सम्प्रदाय के उदार प्रवृत्ति, नेकदिल और सादा तबीअ़त व सहज स्वभाव के लोगों से यदि दूसरे सम्प्रदाय के मूलभूत विश्वास, रीति रिवाज, और रहन सहन के सिद्धान्तों के बारे में पूछा जाये तो या तो वे अज्ञानता व्यक्त करेंगे अथवा ऐसे उत्तर देंगे कि जिनसे एक जानकार आदमी को बे–इख़्तियार हंसी आ जायेगी। लेखक को जो प्रायः यात्रा करता है, और रेलों और बसों में हर वर्ग और हर स्तर के लोगों से उसका मिलना जुलना होता है, अनेक बार इसका अनुभव हुआ है लेकिन यह हंसी की बात नहीं रोने का मुक़ाम है कि सैकड़ों वर्ष से साथ रहने के बावजूद हम एक दूसरे से इतने अपरिचित हैं। इसका उत्तरदायित्व मात्र एक सम्प्रदाय पर नहीं, सब पर है। और विशेषकर धार्मिक, सामाजिक कार्य करने वालों, देश से सच्चा प्रेम रखने वालों और मानवता के प्रेमियों पर है कि उन्होंने एक दूसरे से सही ढंग पर परिचित कराने का गम्भीर प्रयास नहीं किया अथवा किया तो अपर्याप्त। सभ्य संसार में अब यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया गया है कि प्रेम व श्रद्धा, विश्वास व शान्ति के साथ रहने और नेक उद्देश्यों के लिए एक दूसरे से सहयोग करने के लिए एक दूसरे से सम्बन्धित सही ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। आबादी के हर तत्व, और हर सम्प्रदाय और हर गिरोह को ज्ञात होना चाहिये कि दूसरा तत्व, दूसरा सम्प्रदाय और गिरोह किन सिद्धान्तों पर आस्था रखता है, किन नियमों का अपने को पाबन्द और उन को अपने लिए ज़रूरी समझता है। उसकी सभ्यता और संस्कृति का विशेष रंग क्या है? उस को जीवन के कौन से मूल्य व मान्यताएं प्रिय हैं? उसको आन्तरिक शान्ति और भरोसेमन्द जीवन यापन के लिए क्या चीज़ें वांछित हैं? कौन सी आस्थाएं और

उद्देश्य उसको जान से अधिक प्यारे और औलाद से अधिक प्रिय हैं? हमें उस से बातचीत करने में, उस के साथ सुख और दुःख के क्षण, बिताने में किन भावनाओं का ध्यान रखना चाहिये? सह अस्तित्व के लिए, जो सभ्य व शान्तिपूर्ण जीवन का माना हुआ सिद्धान्त है, पहली शर्त है कि ज़रूरी हद तक एक दूसरे के प्रति जानकारी हासिल हो।

प्रेम व मुहब्बत के साथ रहने, हंसने बोलने, जीवन का आनन्द उठाने और एक दूसरे पर भरोसा करने और एक दूसरे की सभ्यता व पंथ के प्रति आदर व सम्मान की दौलत से हम वंचित हैं। इस वस्तुस्थिति का नुक़सान हिन्दुओं–मुसलमानों को समान रूप से पहुंचता है, और जो देश तथा अन्ततः मानव जाति को नुक़सान पहुंचाती है। विभिन्न सम्प्रदायों के बीच बड़ी–बड़ी खाइयाँ क़ायम है कि कुछ सम्प्रदायो और इसके कहने में कोई डर व हर्ज नहीं कि विशेषकर मुसलमानो की क्षमताएं और शक्ति अपनी सफ़ाई और बचाव में ख़र्च हो रही है।

जहां तक मुसलमानो के पिछले युग और उसके इतिहास का प्रश्न है, और यह कि मुसलमानों ने देश के विकास और निर्माण, तथा संगठन व संजोने में क्या रोल अदा किया है, सभ्यता व संस्कृति, साहित्य और ज्ञान तथा कला–कौशल के क्षेत्र में क्या अभिवृद्धि की, और क्या क्या यादगारें छोड़ीं तो इस विषय पर अच्छी किताबें लेखकों की लेखनी से निकल चुकी हैं, और स्वयं इस पुस्तक के लेखक की किताब "हिन्दुस्तानी मुसलमान" कई वर्ष हुए अरबी, उर्दू और अंग्रेजी में प्रकाशित हो चुकी है, किन्तु यह इतिहास का विषय है और अधिकतर विद्यार्थियों और शोध कार्य करने वालों का है।

इसी प्रकार आवश्यकता एक ऐसी किताब की थी जिसमें मुसलमान जो कुछ हैं और जैसे कुछ हैं, इस से हटकर कि उनको कैसा होना चाहिए, उनको उनके असली रंग व रूप में उनके हमवतनों के सामने पेश कर दिया जाये। न चित्रकारी की जाये, न कल्पना की उड़ान हो, न अतिश्योक्ति से काम लिया जाये और न कंजूसी न हक़तल्फ़ी से। इसके लिए लेखक ने

"हिन्दुस्तानी मुसलमान एक नज़र में" लिखी जो उर्दू, हिन्दी, अंग्रेज़ी मे कई वर्ष हुए प्रकाशित हो चुकी है।

लेकिन इसी के साथ एक ऐसी किताब की ज़रूरत बाक़ी थी जो हल्की फुल्की हो और जिसका पढ़ना आसान हो और जिस में इस्लाम की सही तस्वीर पेश की गई हो तथा उसका संक्षिप्त परिचय आ गया हो। मेरे कई मित्र इस ज़रूरत को पूरी करने की बात बार–बार मुझ से कहते रहे। और मुझे उत्प्रेरित करते रहे।

हर्ष का विषय है कि प्रिय सैय्यद अब्दुल्लाह हसनी नदवी ने संकलन का यह कार्य बड़े परिश्रम और संयम से किया और लेखक की अनेक किताबों के वे अंश बड़ी सफलतापूर्वक एकत्र कर संकलित कर दिये जो उक्त आवश्यकता की पूर्ति करते हैं और जो इस्लाम की सही तस्वीर के साथ–साथ उसका संक्षिप्त व सारगर्भित परिचय प्रस्तुत करते हैं। मेरे प्रिय मुहम्मद हसन अंसारी, जिन्होंने मेरी कई पुस्तकों का हिन्दी में अनुवाद किया है, ने इसे हिन्दी में अनुदित कर हिन्दी भाषा भाषी भाई बहनों के लिए विशेषकर और गै़र मुस्लिम भाई बहनों के लिए इसे ग्राहय बना दिया है। श्री राम कुमार तिवारी, एम॰ए॰ (संस्कृत) इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रति मैं आभार ज्ञापन हूं कि जिन्होंने हिन्दी अनुवाद की पाण्डुलिपि को पढ़ा और अपने बहुमूल्य सुझाव दिये।

आशा है कि प्रस्तुत पुस्तक, जो हर प्रकार से लाभप्रद, महत्वपूर्ण और प्रमाणिक है, सभी सम्प्रदायों, शिक्षित समाज और न्याय प्रिय लोगों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

सैय्यद अबुल हसन अली नदवी
तकिया कलां, रायबरेली,
(अली मिया) 25 सितम्बर, 1995 ई0

दो शब्द

इस्लाम के परिचयात्मक विषय पर अनेक पुस्तकें लिखी गई हैं, और अनेकों लेखकों ने इस्लाम का परिचय कराने और उसके मूल सिद्धान्तों का उल्लेख व वर्णन करने का सफल प्रयास किया है। वे सब और उनके प्रयास सराहनीय हैं। लेकिन इस्लाम का परिचय विषय पर एक ऐसी किताब की ज़रूरत महसूस की जा रही है जो संक्षिप्त भी हो और सारगर्भित भी जो सहज भी हो और सन्तुलित भी और जिस के पढ़ने से इस्लाम की सही और सच्ची तस्वीर भी पढ़ने वालों के सामने आ जाये। क्योंकि स्वयं मुसलमानों का एक बड़ा तब्क़ा और विशेषकर भारत में रहने वाले बहुत से मुसलमान अज्ञानता का शिकार हैं।

इस संकलन की तैयारी में इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि जो भी संकलित किया जाये वह विश्वविख्यात लेखक, महान विचारक और प्रसिद्ध इतिहासकार श्रद्धेय सैय्यद अबुल हसन अली नदवी की पुस्तकों से लिया जाये, क्योंकि अपने संतुलित, सारगर्भित और सौम्य विचारों के लिए जो लोकप्रियता और ख्याति श्रद्धेय नदवी को प्राप्त है वह किसी अन्य समकालीन व्यक्ति को प्राप्त नहीं है और जिस प्रकार विभिन्न वर्गों को आप पर भरोसा है, आपकी निष्ठा, सहृदयता और मानवता के प्रति आप के प्रेम पर विश्वास है वह आप ही का हिस्सा है। इस प्रकार इस पुस्तक को लेखक की महान कृतियों का, विषय वस्तु से सम्बन्धित, सुगन्ध फैलाने वाला सारगर्भित संग्रह कह सकते हैं जिसके अधिकतर अंश ''अरकाने अरबा'' (चार स्तम्भ) ''दस्तूरे हयात'' (जीवन–संहिता) और ''हिन्दुस्तानी मुसलमान एक दृष्टि में'' से लिये गये हैं।

संकलन कार्य में जिन प्रियजनों ने अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया है उनमें से सर्व श्री रिसालुद्दीन नदवी, वसी सुलेमान नदवी के नाम उल्लेखनीय हैं। हम उनके प्रति आभार व्यक्त करते हैं। अल्लाह से प्रार्थना

भी करते हैं कि वह इस प्रयास को सफल बनाये और इस पुस्तक को इस्लाम के परिचय का साधन और स्रोत बनाकर हिदायत (सन्मार्ग) का ज़रीआ़ बनाए।

अब्दुल्लाह हसनी नदवी
संकलनकर्ता

अध्याय–एक

इस्लाम का अर्थ और क्षेत्र

इस्लाम रब के सामने पूरी सुपुर्दगी और अपने को बिना शर्त रब के हवाले (surrender) करने का नाम है। इस्लाम दीन धर्म पूरी ज़िन्दगी को अपने घेरे में लिए हुए है, यह एक बुनयादी सच है जो बन्दे व रब (भक्त और ईश्वर) के सम्बन्ध को समझे बिना समझ में नहीं आ सकता। हर मुसलमान रब का आज्ञाकारी बन्दा है, और उसका सम्बन्ध खुदा से स्थायी है, आम है, गहरा भी है और व्यापक भी, सीमित और भरपूर भी। कुरआन मजीद में है –

अनुवाद – "ऐ ईमान वालो, इस्लाम में पूरे दाख़िल हो जाओ और शैतान के पीछे न चलो, वह तो तुम्हारा खुला दुश्मन है।"

(सूरः अलबक़रः 208)

यहां रिज़र्वेशन नहीं, आरक्षण नहीं, कि इतना आप का है और इतना हमारा, इतना देश का, इतना स्टेट का, इतना रब का और इतना ख़ानदान और क़बीले का, इतना दीन धर्म का और इतना राजनीतिक लाभ का। इसमे जो कुछ है वह सब रब का है, यहां सब इबादत ही इबादत है। मुसलमान की पूरी ज़िन्दगी खुदा के सामने मुहताजी और दासता है। यहां दीन का दायरा पूरी ज़िन्दगी पर हावी है, और इसमें किसी को कोई संशोधन करने का कोई हक़ नहीं। बड़े बड़े विद्धानों और धार्मिक नेताओं को भी इन चीज़ों का कोई हक़ नहीं। बड़े बड़े विद्वानों और धार्मिक नेताओं को भी इन चीज़ों में जो कुरआन मजीद से साबित हैं, एक शब्द, एक अक्षर, के संशोधन की इजाज़त नहीं।

अल्लाह मुताल्बा करता है, इस्लाम मुताल्बा और मांग करता है, उसकी अपेक्षा है कि पूरे के पूरे दाख़िल हो जाओ। मैं सफ़ाई से कहता हूँ और अपना फ़र्ज़ समझता हूँ कि साफ़ कहूं कि हम मुसलमानों का रहन सहन, शादी ब्याह के तरीक़े, विरासत के तरीक़े और हम मुसलमानों के मुआमले शरीअत से दूर हैं और बहुत दूर हैं। कुछ लोग तो ऐसे हैं जो अक़ीदे (विश्वास) में दीन के पाबन्द हैं, तौहीद (अद्धैतवाद) के बारे में उनका ज़ेहन साफ़ है,

रिसालत (अल्लाह के सन्देश को उसके बन्दों तक पहुंचाने का सिलसिला पैग़म्बरी, ईशदूत) के बारे में, आस्था के बारे में, जो बुनयादी अक़ीदे हैं, उनके बारे में उनकी सोच और समझ साफ़ है, लेकिन इबादत में कच्चे हैं। और बहुत से वह हैं जो अक़ीदे व इबादत में पक्के हैं, लेकिन मुआमला और अख़लाक़, आचार व्यवहार को न पूछिये, इनमें बड़े अविश्वसनीय किसी के मुआमले में पड़ेंगे तो ख़ियानत (गबन, हेराफ़ेरी) से न चूकेंगे, नाप तौल में कमी करेंगे, तिजारत करेंगे और उसमें साझेदारी होगी तो उसमें नाइन्साफ़ी और ख़ियानत करेंगे, अपने पड़ोसी को दुख पहुंचायेगा। ह़दीस में आता है –

अनुवाद – "मुसलमान वह है जिस की ज़बान, हाथ (यातना, कष्ट, तकलीफ़) से मुसलमान सुरक्षित रहें।"

अनुवाद – "तुम में से कोई मोमिन नहीं हो सकता जब तक उसका पड़ोसी उसकी यातना से असके नुक़सान से सुरक्षित न हो जाये।"

मुसलमानों का एक तबक़ा ऐसा है कि न पूछिये, उसने आचार व्यवहार को दीन से ख़ारिज कर रखा है और यह समझ रखा है कि बस अक़ाइद व इबादत ही हैं, न मुआमले की सफ़ाई न वअ़दा की पाबन्दी, न अमानत का ख़याल, न इन्साफ़ के साथ बंटवारा, कोई चीज़ नहीं। बन्दों के हक़ की अदायगी नहीं, नाते, रिश्तों और हक़दारों के बारे में बिल्कुल आज़ाद। नौकरों के साथ, मुआमलात में, तिजारत और ज़िन्दगी के दूसरे क्षेत्रों में भी मनमानी कार्रवाई करते हैं।

अल्लाह के रसूल ह़॰ मुहम्मद सल्ल॰ ने जिन मुसलमानों को तैयार किया था वह सहाबा थे, वह दीन के पूरी अनुयायी थे, वह दीन के सांचे में ढल गये थे, उनके अक़ाइद उनकी इबादत, उनके मुआमले, उनका आचरण उनकी रस्में, उनके आयोजन, उनकी विजय, उनकी हुकूमत व शासन व्यवस्था सब चीज़ें और जीवन के सब विभाग शरीअ़त के अनुसार थे [1]

1. अल्लाह (परमेश्वर) के प्रत्येक आज्ञाकारी भक्त को इन तमाम बातों का ख़्याल रखाना चाहिए। इसका सर्वोत्कृष्ट नमूना मुहम्मद सल्ल0 का उत्कृष्ट गुणों से परिपूर्ण व्यक्तित्व था, और फिर सहाबा की ज़िन्दगी जिस की एक झलक "आचरण की सभ्यता" के बयान मे नज़र आयेगी, जो इस पुस्तक के पृष्ट 91 से प्रारम्भ होते हैं। अल्लाह के हर मानने वाले को वैसी ही ज़िन्दगी गुज़ारने की कोशिश करनी चाहिए।

इस्लाम में अक़ीदे (विश्वास) का महत्व

भक्ति और बन्दगी की बुनियाद अक़ीदा (विश्वास) और ईमान के सही होने पर है। जिसके अक़ीदे में ख़लल, विश्वास में विकार और ईमान में बिगाड़ हो उसकी न कोई इबादत मक़बूल न उसका कोई कर्म सही माना जायेगा और जिसका अक़ीदा दुरूस्त और ईमान सही हो उसका थोड़ा अमल (कर्म) भी बहुत है। इसलिए सबसे पहले उन बातों को मअ़लूम करने की ज़रूरत है जिन पर अक़ीदा रखना, ईमान लाना और उस के अनुसार आचरण करना आवश्यक है और जिन पर विश्वास के बिना कोई व्यक्ति मुसलमान कहलाने का अधिकारी नहीं यह वह शर्त है जो तमाम दुनिया के मुसलमानों के लिए एक समान है।

इस्लाम के आधारभूत (विश्वास) अक़ीदे

1. तौहीद (अद्वैतवाद का विश्वास इस्लाम का विशुद्ध और बे मेल विश्वास है। इसके अन्तर्गत भक्त और ईश्वर उपासक और उपास्य के बीच दुआ और इबादत के लिए किसी बिचौलिये की ज़रूरत नहीं है। इस अक़ीदे में न अनेक और बहुसंख्य देवताओं और माअ़बूदों (जिसकी पूजा की जाय) की गुंजाइश है, न ईश्वर के अवतार अथवा छाया की परिकल्पना की और न हीं खुदा के किसी मख़लूक़ (प्राणी) में सरायत (घुल मिल जाने) कर जाने और दोनों को मिलाकर एक हो जाने के विश्वास की कोई गुजाईश है। बल्कि एक अल्लाह जो किसी का मुहताज नहीं, के एकत्व की स्वीकारोक्ति और उसका इक़रार है जिसके न कोई बाप है न बेटा और न खुदाई में कोई उसका शरीक व साथी। इसी प्रकार सृष्टि की रचना, पैदाईश, संसार की व्यवस्था व संचालन, ज़मीन व आसमान का प्रभुत्व उसी के हाथ में है। अर्थात इस सृष्टि का एक बनाने वाला है जो हमेशा से है और हमेशा रहेगा। वह सर्वगुण सम्पन्न है और हर प्रकार के अवगुण व कमज़ोरियों से अछूता है। समस्त

प्राणी और समस्त ज्ञान उसके परिज्ञान में है।

यह पूरी सृष्टि (Universe) उसी के इरादे से है। वह ज़िन्दा है, सुनने वाला, देखने वाला है, न कोई उसकी तरह है, न उसका कोई मुक़ाबिल और बराबरी वाला। वह बेमिसाल (अद्वितीय) है, किसी मदद का मुहताज नहीं, सृष्टि के चलाने और उसकी व्यवस्था करने में उसका कोई शरीक, साथी और मददगार नहीं। इबादत का केवल वही मुस्तहिक़, और उसी का हक़ है, सिर्फ वही है जो रोगी को रोगमुक्ति देता, प्राणी को रोज़ी देता है और उनकी तकलीफों को दूर करता है। अल्लाह के अलावा दूसरों को मअ़बूद बनाना, उनके सामने अत्यन्त पतन, दीनता और आजिज़ी की अभिव्यक्ति, उनको सज्दः करना (माथा टेकना), उनसे दुआ़ और ऐसी चीज़ों में मदद मांगना जो मानव शक्ति से परे और केवल अल्लाह की क़ुदरत (सामर्थ्य) से सम्बन्ध रखती हैं (जैसे सन्तान देना, क़िसमत अच्छी बुरी करना, हर जगह मदद के लिए पहुंच जाना हर फ़ासले की बात सुन लेना, दिल की बातों और छुपी हुई बातों को जान लेना), इस्लाम में यह शिर्क है, और सब से बड़ा पाप है जो बिना तौबा के क्षमा नहीं होता।

क़ुरआन मजीद में कहा गया है कि "उसकी शान यह है कि जब वह किसी चीज़ का इरादा करता है तो उससे कह देता है कि "हो जा," तो वह हो जाती है।

(सूरः यासीन–82)

अल्लाह न किसी के शरीर में उतरता है, न किसी का रूप धारण करता है न उसका कोई अवतार है और न वह किसी जगह अथवा दिशा में सीमित है, जो वह चाहता है सो होता है, जो नहीं चाहता नहीं होता, वह ग़नी (सर्वसम्पन्न) और बेनियाज़ (जो किसी का मुहताज न हो) है, किसी चीज़ का भी मुहताज नहीं, उस पर किसी का हुक्म नहीं चलता, उससे पूछा नहीं जा सकता कि वह क्या कर रहा है? उसके अ़लावा कोई (वास्तविक) हाकिम नहीं।

2. तक़दीर अच्छी हो या बुरी अल्लाह की तरफ़ से है, वह पेश आने वाली चीज़ों को पेश आने और घटित होने से पहले जानता और उन को अस्तित्व में लाता है।

3. उसके प्रतिष्ठा प्राप्त फ़रिश्ते (देवदूत) हैं, ख़ुदा की मख़लूक़ (कृत) शैतान भी हैं जो आदमियों के लिए बिगाड़ का कारण बनते हैं और उसी की मख़लूक़ में से जिन्नात भी हैं।

4. कुरआन अल्लाह की वाणी है। उसके शब्द अल्लाह की तरफ़ से हैं, वह परिपूर्ण हैं, उसमें कोई कमीबेशी और तबदीली न हुई है और न हो सकती है, वह हर कमीबेशी और तबदीली से सुरक्षित है। जो व्यक्ति इस में कमी अथवा ज़ियादती (तहरीफ) का क़ायल हो वह मुसलमान नहीं।

5. मुर्दों को अपने शरीर के साथ मरने के बाद ज़िन्दा होना निश्चित है, जज़ा (बदला) व सज़ा और हिसाब निश्चित है। जन्नत दोज़ख़ निश्चित है।

6. पैग़म्बरों का अल्लाह की तरफ से दुनिया में आना निश्चित है, यक़ीनी है और उनकी ज़बानी और उनके माध्यम से ख़ुदा का अपने बन्दों का हुक्म करना और शिक्षा देना निश्चित है, बरहक़ है। मोहम्मद सल्ल॰ ख़ुदा के अन्तिम पैग़म्बर हैं, आप के बाद कोई नबी नहीं। आप का आह्वान और पैग़म्बरी सारी दुनिया के लिए है। इस विशिष्टता में और इस जैसी दूसरी विशेषताओं मे वह सब नबियों मे अफ़ज़ल व उत्कृष्ट है। आप की रिसालत और पैग़म्बरी पर ईमान लाये बिना ईमान विश्वसनीय नहीं, और कोई दीन हक़ नहीं, इस्लाम ही अकेला दीन हक़ है। शरीअ़त के आदेशों से बड़े से बड़ा ऋषि–मुनि और परहेज़गार व इबादतगुज़ार लोगों को भी छूट नहीं है।

7. हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ मोहम्मद सल्ल0 के बाद इमाम और ख़लीफ़ा–ए–बरहक़ थे, फिर हज़रत उमर (रज़ि॰), फिर हज़रत उस्मान ग़नी (रज़ि॰), फिर हज़रत अ़ली (रज़ि॰) सहाबा मुसलमानों

के धार्मिक नेता और पथ प्रदर्शक हैं, उनको बुरा भला कहना हराम है और उनका मान सम्मान वाजिब व अनिवार्य है।

तौहीद ढ्ढऐकेश्वरवादढ्ढ का विश्वास मुसलमानों की अन्तर्राष्ट्रीय निशानी है

तौहीद मुसलमानों के सांस्कृति की निशानी और चिन्ह है, जो विश्वासों से लेकर कर्मों तक और इबादत (पूजा–पाठ) से लेकर हर सुख व दुख के अवसर पर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ेगा। उनके मस्जिद के मीनारों से पांच बार इसकी घोषणा की जाती है कि अल्लाह के अतिरिक्त कोई पूज्यनीय नहीं, उनके भवनों और मकानों को भी इसलामी दृष्टिकोण से मूर्ति पूजा और शिर्क की निशानियों से सुरक्षित रहना चाहिए। स्टेचू, मूर्तियां, तस्वीर व फोटो आदि उनके लिए नाजाइज़ (अवैध) हैं। यहां तक कि बच्चों के खिलौने आदि में भी इसका ध्यान रखना चाहिए। धार्मिक कार्यक्रम हो या राष्ट्रीय पर्व हों, राजनेताओं का जन्म दिन हो अथवा ध र्मगुरूओं का, तस्वीरों और मूर्तियों के सामने झुकना, उनके समक्ष हाथ जोड़ कर खड़े होना, या उनको हार फूल पहनाना, इन सभी कार्यों से मुसलमानों को रोका गया है और यह सभी कार्य उसके ऐकेशवादी संस्कृति के विरूद्ध हैं।

आखिरत ढ्ढमहाप्रलयढ्ढ के विषय में कुरआन का विवरण और उसके तर्क

अल्लाह तआला के एक होने और उसके गुणों के बारे में अन्बिया (सन्देशवाहक) अलैहिस्सलाम लोगों को सर्वप्रथम बताते हैं। उसके बाद दूसरा बड़ा ज्ञान जो वे संसार को देते हैं और जो उनके अतिरिक्त किसी और माध्यम से प्राप्त भी नहीं किया जा सकता, वह इस बात का ज्ञान है कि इन्सान मर कर पुनः जन्म लेगा और यह कि ब्रह्माण्ड टूट फूट कर पुनः निर्मित होगा। इस दूसरे जन्म में व्यक्ति को अपने पहले जीवन के कर्मो का हिसाब देना होगा और उसने दुनिया की ज़िन्दगी में जो कुछ किया होगा

उसको उसका फल मिलेगा।

मनुष्य के पास इस ज्ञान की प्राप्ति के लिए अम्बिया (सन्देष्टाओं) को छोड़ कर कोई दूसरा साधन व माध्यम नहीं है। मनुष्य के पास किसी वस्तु के बारे में ज्ञान प्राप्त करने के जो स्त्रोत हैं उनसे न यह ज्ञान प्रारम्भ में प्राप्त किया जा सकता है और न ही उस ज्ञान के द्वारा इस ज्ञान को रद्द किया जा सकता है।

अब मनुष्य के लिए दो ही पथ रह जाते हैं या अम्बिया अलैहिस्सलाम पर भरोसा करके उनके दावे को तर्कों की कसौटी पर कस कर उनकी बात को सत्य मान ले अथवा किसी तर्क या प्रमाण पर दृष्टि डाले बग़ैर उनकी बात का इन्कार कर दे।

अनुवाद– "आप कह दीजिए कि जो मखलूक़ (सृष्टि) भी आसमानों और ज़मीन में है, उनमें से किसी को ग़ैब (अप्रत्यक्ष) का ज्ञान नहीं, अल्लाह को छोड़ कर (और इस लिए) उन्हें पता नहीं कि वह कब उठाए जाएंगे। बल्कि आखिरत के बारे में उनकी समझ बिल्कुल बेकार हो गई है बल्कि वह उसके बारे में धोके में हैं बल्कि वह उससे बिल्कल अन्धे हैं।" (सूरः नम्ल : 55,56)

लेकिन जैसा कि ऊपर कहा गया है भविष्य में पेश आने वाली बड़ी घटना के प्रमाण और उसके पेश आने की सम्भावना इस दुनिया और उसकी ज़िन्दगी में मिलते हैं, जिससे एक समझदार आदमी यह अनुमान लगा सकता है कि यह घटना हर प्रकार से सम्भव है और अक़्ल व बुद्धि की रोशनी में उसमें सन्देह का कोई अवसर नहीं है।

उसका एक बड़ा प्रमाण स्वयं मनुष्य का जन्म और उसकी ज़िन्दगी है, यह सर्वप्रथम कुछ भी न था फिर वह वीर्य के बून्द से खून, गोश्त, हड्डी फिर पूरे इन्सानी ढांचे में ढला, उसके बाद वह क्रमशः बचपन, जवानी और अधेड़ उम्र की आयु को पार करके बूढ़ा होता है। वह अपनी इस अल्पायु में कितने मरहलों से होता हुआ गुज़रता है। अब बुढ़ापे में फिर उस का हाल बचपन वाला हो जाता है अर्थात उसका उलटा सफर आरम्भ हो जाता है।

उसकी शक्तियां एक–एक करके क्षीण होती जाती हैं, बुद्धि और दिमाग़ ने उसका साथ छोड़ दिया, वह बच्चे के समान लाचार व मजबूर, दूसरों के देख रेख का मोहताज, वह अपने आप को भूलने लगता है, उसके लिए हर जानी–पहचानी चीज़ अनजानी होती है, इस स्थान पर पहुंच कर यात्रा का एक भाग समाप्त होता है लेकिन उसकी यात्रा का अन्त नहीं हुआ, केवल यात्रा के बीच का एक पड़ाव आ गया है जिसका नाम मृत्यू और बरज़ख (क़ब्र) की ज़िन्दगी है।

अतः जिसको मनुष्य की अस्ल व वास्तविका (मिट्टी और पानी) का पता है, फिर उसके आरम्भ और जन्म के बारे में उसे ज्ञान है, वह मरने के बाद पुनः जीवित होने के बारे में क्योंकर सन्देह कर सकता है और जिसने एक व्यक्ति में इतने बहुत से परिवर्तन देखे हों, उसे एक अन्तिम परिवर्तन के बारे में क्या मुश्किल हो सकती है।

मृत्यू के पुनः जीवित होने का दूसरा खुला हुआ नमूना पृथ्वी का दोबारा जीवित हो उठने के दृश्य हैं, जो बार–बार आंखों के सामने आते रहते हैं, यह धरती जिसके भीतर हज़ारों पैदा होने वाले इन्सान और ज़िन्दा रहने वाले पशुओं की ज़िन्दगी की अमानतें (धरोहर) और ख़ज़ाने हैं। वह मृत्यावस्था में पड़ी होती हैं, उसके होंठों पर सूख कर पपड़ियां पड़ जाती हैं। वह मिट्टी का एक बेकार व बेजान लाश होती है जिसके अन्दर न स्वयं कोई ज़िन्दगी होती है और न दूसरे के लिए ज़िन्दगी का कोई सामान, लेकिन जब उसके होंठों पर आकाशीय अमृत बूंदें गिरती हैं और वह हलक़ को तर करते हुए सीने तक पहुंच जाती हैं तो वह धरती मौत की नींद से अचानक उठ जाती है उसमें ज़िन्दगी की शक्ति और जवानी का जोश दौड़ जाता है, वह झूमती और मस्त होती प्रतीत होती है, वह हीरे जवाहरात के खज़ाने उगल देती है, सुगन्धित हरयाली, लहलहाती हुई खेती, और पृथ्वी के त्वचा पर उभरे हुए और फैल जाने वाले कीड़े, और जमीन के कीड़ों की ज़िन्दगी उसकी ज़िन्दगी के सामान का पता देती है, वर्षा और बहार के मौसम में ज़मीन की ज़िन्दगी का यह दृष्य अपनी आंखों से किसने नहीं देखा?

पुनर्जन्म के तर्क व प्रमाण हर स्थान पर देखे जा सकते हैं और प्रत्येक व्यक्ति उन्हें देख है फिर वे बादलों को उठाती हैं, फिर जिस तरह चाहता है आसमान में फैला देता है और उन्हें परतियों और टुक्ड़ों का रूप देता है, फिर तुम देखते हो कि उसके बीच वर्षा की बून्दें टपकी चली आती हैं फिर जब वह अपने बन्दों में से जिस पर चाहता है उसे बरसा देता है तो वह खुश हो उठते हैं और इससे पहले तो वह इस बरसाए जाने के बारे में मायूस थे। तो अल्लाह की रहमत की निशानियों की ओर देखो वह किस तरह ज़मीन को उसे मुर्दा होने के बाद ज़िन्दा करता है, बेशक वह मुर्दों को ज़िन्दा करने वाला है और वह हर चीज़ पर क़ादिर (सामर्थयवान) है।"

(सूरः रूम–48–50)

अनुवाद– "और अल्लाह ही तो है जो हवाएं चलाता है फिर वे बादल को उभरती हैं, फिर हम उसे किसी सूखी निर्जीव ज़मीन की तरफ हांक देते हैं, फिर हम ज़मीन को उसके मुर्दा होने के बाद ज़िन्दा कर देते हैं और इस तरह मरने के बाद ज़िन्दा हो कर उठना होगा।"

(सूरः फातिर–9)

अनुवाद– "और यह चीज़ भी उसकी निशानियों में से है तुम देखते हो कि धरती दबी पड़ी (अर्थाथ) सूखी है, फिर जब हम उस पर पानी बरसाते हैं तो वह लहलहाने लगती है और फूल जाती है, तो जिसने ज़मीन को ज़िन्दा किया वही मुर्दों को भी ज़िन्दा करने वाला है बेशक वह हर चीज़ पर क़ादिर (सामर्थ्य) है।"

(सूरः हामीम सज्दः–39)

अनुवाद– "और जिसने आसमान से एक खास मात्रा में पानी उतारा, फिर हमने उससे मुर्दा ज़मीन को जिला दिया, इसी तरह तुम ज़मीन से निकाले जाओगे।"

(सूरः जुख्रुफ 11)

इन दो निशानियों और खुल हुए दो नमूनों के सिवा भी ब्रह्माण्ड

पुनर्जन्म के नमूने और दृश्य दिन व रात पेश करता रहता है। यहां हर पल, हर क्षण वस्तुएं बनती और बन कर बिगड़ती रहती हैं। एक बेजान व मुर्दा वस्तु से जीती–जागती ज़िन्दा चीज़ निकलती है और एक जानदार चलती, फिरती हुई चीज़ एक पल में मुर्दा हो जाती है। बहुत सी वस्तुओं से उनकी गुणों व विशेषताओं से विरूद्ध दूसरी विशेषताएं सामने आती हैं, बहुत सी मख़लूक़ में बराबर सेल्स के बनने व बिगड़ने का सिलसिला चलता रहता है। जिसने अल्लाह तआला की इस सामर्थता, मखलूकात की जन्म और इस पूरे ब्रह्माण्ड के प्रबन्ध का कुछ भी अध्यायन किया होगा उसको एक पल के लिए भी पुनर्जन्म में सन्देह नहीं हो सकता और उसके लिए उसमें निसन्देह कोई सन्देह का अवसर नहीं है।

अनुवाद– "क्या लोगों ने देखा नहीं कि अल्लाह किस तरह सृष्टि (कायनात) को पहली बार पैदा करता है? फिर उसको दोहराएगा, यह अल्लाह के लिए बहुत आसान है। कहदीजिए ज़मीन में चलो फिरो और देखो कि उसने किस तरह पैदाइश सुरू की, फिर अल्लाह ही दोबारा उठा खड़ा करेगा, बेशक अल्लाह हर चीज़ पर कुदरत (सामर्थय) रखता है।"

(सूरः अनकबूत–19–20)

इस्लाम के स्तम्भ

अक़ीदे के बाद इस्लाम में जिस चीज़ का सबसे बड़ा महत्व है जिस पर बड़ा ज़ोर और जिसकी बड़ी ताकीद की गई है वह इबादत है जो इन्सानों की पैदाइश का प्रथम उद्देश्य है। कुरआन मजीद में है।

अनुवाद – "और हमने जिन्न व इन्सान को सिर्फ़ इसलिए पैदा किया कि वह इबादत करें।"

इस्लामी शरीअत के अनुसार हर आक़िल–बालिग़ मुसलमान स्त्री–पुरूष पर पाँच चीज़ें फ़र्ज़ हैं और इसलिए इनको पाँच स्तम्भ कहते हैं (1) कलमः तौहीद (2) पाँच वक़्त की नमाज़ (3) अगर ज़कात की शर्तों के पूरा करें तो साल में एक बार अपने माल की ज़कात (4) रमज़ान के रोज़े (5) हज जो

सामर्थ्य रखता हो उस पर ज़िन्दगी में एक बार फ़र्ज़ है।

यह वह अनिवार्यताएं हैं जिनका इन्कार करने वाला इस्लाम की परिधि से बाहर हो जाता है और इनका बराबर छोड़ने वाला भी मुसलमानों की जमाअत से ख़ारिज है।

नमाज़ - इस्लाम का दूसरा स्तम्भ

इबादतों में प्रथम और महत्वपूर्ण स्तम्भ नमाज़ है। यह दीन का स्तम्भ और इस्लाम व मुसलमान की पहचान है। यहां तक कि इसको इस्लाम और ग़ैर –इस्लाम के बीच विभाजक रेखा (Line of Demarcation) क़रार दिया गया है। अल्लाह तआ़ला का इरशाद है –

अनुवाद "और नमाज़ पढ़ते रहो और मुशरिकों में से न होना।"

(सूरः रूम–31)

और हमारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया:

अनुवाद– "इस्लाम और कुफ़्र के बीच (विभाजक रेखा) नमाज़ को छोड़ना है।" (बुख़ारी, तिर्मिज़ी)

नमाज़ नजात (मोक्ष) की शर्त है और ईमान की रक्षक है। नमाज़ हर आज़ाद, गुलाम, अमीर–ग़रीब, बीमार और तन्दुरूस्त, मुसाफिर और मुक़ीम (ग़ैर मुसाफ़िर) हर एक पर हमेशा के लिए, हर हाल में फ़र्ज़ है और इसको अल्लाह ने हिदायत (अनुदेश) और रहनुमाई तथा तक़वा परहेज़गारी (संयम) की बुनियादी शर्त के तौर पर बयान किया है। किसी बालिग़ मुसलमान को किसी हाल में इससे छूट नहीं दी जा सकती। हां, अगर खड़े होकर न पढ़ सके तो बैठकर और बैठ कर भी न पढ़ सके तो लेटकर और अगर इसमें भी कठिनाई होती है तो संकेत से पढ़ सकता है, लेकिन नमाज़ माफ़ न होगी। यहां तक कि युद्ध क्षेत्र में भी (ख़ास तरीके पर) नमाज़ अदा करने का हुक्म है और इसे "सलातुल ख़ौफ़" कहा जाता है। सफ़र में यह रिआ़यत है कि चार रकअ़तों वाली नमाज़ (जुहर, अस्र, इशा) दो रकअ़तों में अदा करें। सफ़र में सुन्नत और नफ़िल नमाज़ें इख़्तियारी रह जाती हैं

चाहे पढ़े या न पढ़े।

नमाज़ एक ऐसा फ़र्ज़ है जिससे किसी नबी और रसूल को भी छूट नहीं है। किसी वली, आरिफ़ व मुजाहिद का तो सवाल ही नहीं, नमाज़ मोमिन के हक़ में ऐसी है जैसे मछली के हक़ मे पानी। नमाज़ मोमिन की शरणस्थली और अमन की जगह है। अल्लाह फ़रमाता है :

अनुवाद– "कुछ शक नहीं कि नमाज़ बेहयाई और बुरी बातों से रोकती है।

(सूरः अलअनकबूत–45)

नमाज़ एक आध्यात्मिक पोषण

चूंकि इन्सान को इस धरती पर अल्लाह का ख़लीफ़ा (प्रतिनिधि) बनना था और अत्यन्त संवेदनशील पद पर पदस्थापित होना था इसलिए उसमें इच्छाएं भी रखी गई हैं और उसके साथ कुछ ज़रूरतें भी साथ कर दी गई हैं। उसमें संवेग भी है और प्रेम की गरमाहट भी, दु:ख का एहसास भी और सुख की अनुभूति भी, जिज्ञासा भी, वह जिज्ञासु भी है और ज्ञानमयी भी। वह भूतल की और भूमिगत समस्त सम्पदा से लाभ उठाने और उसे अपने उद्देश्यों के लिए प्रयोग में लाने के लिए भरपूर क्षमता रखता है। इस गरिमापूर्ण पद की ज़िम्मेदारियों को निबाहने के लिए उसको उसको ऊँचे–ऊँचे पहाड़ों, वनस्पति, जीव और निर्जीव की तरह निरन्तर खड़े रहने, निरन्तर झुके रहने, (रूकूअ), निरन्तर सज्दः में रहने और निरन्तर अल्लाह के गुणगान करते रहने का पाबन्दी नहीं बनाया गया। इन तमाम तत्वों को दृष्टिगत रखते हुए मानव के लिए एक ऐसी उपासना पद्धति की आवश्यकता थी जो उस के स्वभाव, पद की ज़िम्मेदारियों, सृष्टि में उसकी प्रतिष्ठा व पद और ज़िम्मेदारी से मेल खाती हो जिसे संसार के सर्जनहार ने उसके कन्धों पर डाली है।

एक तरफ़ इबादत इन्सान के लिए ज़रूरी भी थी, क्योंकि यह उसकी प्रवृत्ति की मांग, उसके अस्तित्व का उद्देश्य, उसके अन्त:करण की आवाज़, उसकी सज्जनता और कृतज्ञता की अभिव्यक्ति और आत्मा की

खुराक है, दूसरी तरफ़ यह भी ज़रूरी था, कि यह इबादत उसके शारीरिक गठन और व्यक्तित्व के अनुरूप और उसकी नाज़ुक व महत्वपूर्ण हैसियत और सृष्टि में उसके विशिष्ट स्थान के सर्वथा अनुकूल हो और उससे मेल खाती हो, और उस परिधान (लिबास) की तरह हो जो उसके शरीर पर पूरी तरह फिट आये और उस पर अच्छा लगे, न तंग हो, न ढीला, न कम हो न ज़ियादा।

नमाज़ वास्तव में यही परिधान है जो ठीक–ठीक उसके अस्तित्व पर पूरा उतर रहा है और जिसमें किसी प्रकार की कोई कमी बेशी नज़र नहीं आती।

यह पांचों नमाज़ें (जो फ़र्ज़ की गई हैं) उन्हें निर्धारित समय में अदा करना ज़रूरी है जो अल्लाह ने निश्चित किये हैं। कुरआन मजीद में इनके समय की ओर संकेत किया गया है। इन पांच नमाज़ों के लिए रकअतें भी निर्धारित हैं जिनकी पाबन्दी ज़रूरी है।

नमाज़ कैसे पढ़ी जाये

अल्लाह ने नमाज़ को सम्मान व श्रृद्धा, लगन और तन्मयता, प्रतिष्ठा व गम्भीरता, सहयोग और सामूहिकता का ऐसा वातावरण प्रदान किया है जिसकी नज़ीर किसी अन्य धर्म में नहीं मिलती।

अब आइये मालूम करें कि नमाज़ किस प्रकार पढ़ी जाये और इसमें क्या पढ़ा जाये, कैसे खड़े हों, कैसे झुकें और किस प्रकार इसे प्रारम्भ करें और समाप्त करें।

अज़ान

सबसे पहले अज़ान को लीजिये जो पांच वक्त बुलन्द आवाज़ से कही जाती है जिसकी गुंज से कोई गांव, कोई शहर और मिली जुली आबादी वाली कोई बस्ती मुश्किल से ख़ाली होगी। अज़ान के शब्द और उस का अनुवाद इस प्रकार है :

अल्लाहु अकबर अल्लाहु अकबर '2'	अल्लाह सबसे बड़ा है। अल्लाह सबसे बड़ा है।
अशहुद अल्ला इलाहा इल्लल्लाह '2'	मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई मअ़बूद नहीं।
अशहुद अन्नामुहम्मदर्रसूलुल्लाह '2'	मैं गवाही देता हूं कि मोहम्मद स० अल्लाह के रसूल हैं।
हैय्या अलस्सलाह़ '2'	आओ नमाज़ की ओर।
हैय्या अ़लल्फ़लाह '2'	आओ कामयाबी की ओर।
अल्लाहु अकबर '2'	अल्लाह सबसे बड़ा है।
लाइलाह इल्लल्लाह '1'	नहीं है कोई मअ़बूद सिवाय अल्लाह के [1]

नमाज़ के एलान का नाम अज़ान है

नमाज़ के एलान के लिए और नमाज़ के बुलावे के तौर पर जो वाक्य कहे जाते हैं उसमें इस्लाम के उद्देश्य, अद्वैतवाद की पहचान और दीन का निचोड़ संक्षेप में सहज रूप से सारगर्भित है और इस एलान में इस्लाम की सुनिश्चित और ठोस दअ़वत सन्निहित है। अज़ान में दीन इस्लाम का सारांश और खुलासा आ गया है। अज़ान अल्लाह की बड़ाई का एलान है कि वह हर बड़े से बड़ा है फिर इसमें दोनों गवाहियां मौजूद हैं, तौहीद की गवाही भी और रिसालत की गवाही भी। अज़ान में नमाज़ की दअ़वत और पुकार है कि नमाज़ लोक परलोक दोनों में भलाई का रास्ता है। अज़ान के शब्द मन—मस्तिष्क दोनों को एक साथ सम्बोधित करते हैं, मुस्लिम, ग़ैर—मुस्लिम दोनों को आकर्षित करते हैं, सुस्त आदमी में चुस्ती पैदा करते हैं और ग़ाफ़िल को होशियार करते हैं।

1. सुबह की अज़ान में हय्या अलल फ़लाह के पश्चात 'अस्सलातु ख़ैरुम्मिनन्नौम' भी कहते हैं जिसका अर्थ है 'नमाज़' नींद से बेहतर है।

पाकी द्धतहारतत्र

नमाज़ के लिए तहारत का हुक्म दिया गया है। कुरआन मजीद में अल्लाह तआला का इरशाद है:

अनुवाद– "ऐ ईमान वालों जब तुम नमाज़ को उठो तो अपने चेहरे और अपने हाथों को कोहनियों सहित धो लिया करो और अपने सरों पर मसह कर लिया करो और अगर तुम जनाबत (मैथुन के पश्चात, स्नान की आवश्यकता, अशुचि, अपवित्रता) की हालत में हो तो (सारे शरीर को) पाक साफ़ कर लो और अगर तुम बीमार हो या सफ़र में हो या तुम में से कोई इस्तिन्जा (शौच) से आये तो तुम ने मैथुन किया हो फिर तुम को पानी न मिले तो पाक मिट्टी से तयम्मुम कर लिया करो अर्थात अपने चेहरे और हाथों को इससे मसह कर लिया करो। अल्लाह नहीं चाहता कि तुम्हारे ऊपर तंगी डाले, बल्कि वह तो चाहता है कि तुम्हें खूब पाक साफ़ रखे और तुम पर अपने नेअ़मत (वरदान) पूरी करे ताकि तुम शुक्रगुज़ारी करो।" (सूरः माइदा–6)

पाकी और वुज़ू अगर ईमान व एहतिसाब[1] के साथ अमल में आये तो वह मनुष्य के अन्दर एक प्रकार की चुस्ती को जागृत करता है और नमाज़ के स्वागत और उसे क़बूल किये जाने की क्षमता उत्पन्न करता है।

ह० मुहम्मद (सल्ल०) ने वुज़ू व तहारत में दातून करने की भी शिक्षा दी है और ताकीद की है।

---

1. ईमान व एहतिसाब का अर्थ है कि अल्लाह के वादों और उसके रसूल के बताये हुए बदले और सवाब पर पूरा विश्वास हो और वह इन क्रियाओं को निष्ठा और लगन के साथ करे। कर्म की कबूलियत और वजन में इसको बड़ा दखल है। हज़रत अबू हुरैरः रज़ि० बयान करते हैं कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फरमाया "जब मुस्लिम बन्दा वुज़ू करता है और अपना मुंह धोता है तो उसके चेहरे से हर गुनाह जो उसने अपनी निगाहों से किया है पानी के साथ या पानी की अन्तिम बूंद के साथ धुल जाता है, जब वह अपने हाथ धोता है तो उसके हाथों के सारे गुनाह जो उसके हाथों से हुए हैं वह पानी के साथ या पानी की अन्तिम बूंद के साथ निकल जाते हैं। यहां तक कि वह गुनाहों से बिल्कुल पाक–साफ हो जाता है।(तिर्मिज़ी) सहीह मुस्लिम में इतना और है कि जब वह अपने पैर धोता है तो पैरों से जिनसे चलकर उसने कोई गुनाह किया है, सब गुनाह धुल जाते हैं।"

नमाज़ से पहले वुज़ू

नमाज़ से पहले मुसलमान को वुज़ू करना होता है। वुज़ू तहारत के उस ख़ास तरीक़े का नाम जिस के बिना नमाज़ नहीं होती। वुज़ू में पहले पहुंचे तक तीन बार[1] हाथ धोये जाते हैं, फिर तीन बार कुल्ली की जाती है, फिर तीन बार नाक, पानी से साफ़ की जाती है, फिर तीन बार मुख को माथे के बालों से ठुड्डी के नीचे तक और इस कान से उस कान की लौ तक धोते हैं, फिर दाहिना हाथ कोहनियों सहित तीन बार धोकर बायां हाथ कोहनियों सहित तीन बार धोते हैं, फिर एक बार सारे सर का मसह़ करते हैं, अर्थात हाथ तर करके सर के बालों पर एक बार फेर लेते हैं, फिर दाहिना पांव टखनों तक तीन बार धोते हैं, फिर बायां पांव इसी प्रकार धोते हैं। पेशाब, पाख़ाना और रियाह (हवा) आदि ख़ारिज होने से यह वुज़ू ज़रूरी हो जाता है इसके बिना नमाज़ दुरूस्त नहीं होती, सो जाने से वुज़ू की ज़रूरत पड़ जाती है। एक वुज़ू से (अगर वह न टूटे) कई–कई वक्त की नमाज़ें पढ़ी जा सकती हैं।

मस्जिद में मुसलमान का मअ़मूल और तरीक़ा

मस्जिद जाकर अगर वुज़ू है तो उसी वक़्त नहीं तो वुज़ू करके आदमी सुन्नत या नफ़्ल पढ़े, अगर वह पढ़ चुका है तो ख़ामोश नमाज़ के इन्तिज़ार में बैठ जाये या क़ुरआन शरीफ़ की तिलावत (पाठ) अथवा वज़ीफ़ों में व्यस्त रहे। जमाअ़त का वक़्त आता है तो पहले इक़ामत कही जाती है जो जमाअ़त के शुरू होने का एलान है, इसमें सब वहीं शब्द हैं जो अज़ान में कहे जाते हैं, केवल दो वाक्य अधिक होते हैं– क़द क़ामतिस्सलाह क़द क़ामतिस्सलाह (नमाज़ खड़ी होने जा रही है, नमाज़ खड़ी होने जा रही है) यह वाक्य ह़य्य अल्‌ल फ़लाह़ के पश्चात बढ़ाये जाते हैं।

सफ़बन्दी और जमाअ़त

जो लोग मस्जिद में इधर उधर या किसी नेक काम में लगे होते

1. हर अंग तीन बार धोना सुन्नत है, वुज़ू दो या एक बार धोने से भी हो जाता है।

हैं सब सफ़ (क़तार) में आकर खड़े हो जाते हैं। इक़ामत के ख़ात्मे पर इमाम जो मुहल्लों का कोई धार्मिक विद्वान, अथवा हाफ़िज़ या कोई पढ़ा लिखा मुसलमान होता है,[1] तकबीर कहता हुआ कानो की लौ तक हाथ उठाकर नाफ़ पर हाथ बांध लेता है और नमाज़ शुरू कर देता है और इस तरह इमाम और मुक़तदी (अनुसरण करने वाले) गुलामों की तरह हाथ बांधे हुए ख़ुदा के सामने खड़े हो जाते हैं। इमाम नमाज़ियों से आगे बीच में खड़ा होता है। कुछ देर इमाम व मुक़तदी सब ख़ामोश होकर एक दुआ पढ़ते हैं जो इस प्रकार है :

"सुबहानकल्लाहुम्मा व बिहम्दिका व तबारकसमुका व तआला जद्दुका व लाइलाहा ग़ैरूक"

अनुवाद – ऐ अल्लाह तू ख़ूबियों वाला है, तेरा नाम मुबारक है, तेरी शान बुलन्द है और तेरे सिवा कोई मअ़बूद नहीं है।

फिर अगर नमाज़ जहरी होती है तो इमाम आवाज़ से क़िराअत शुरू कर देता है।[2] इस दुआ के बाद वह सूरः फ़ातिहा पढ़ता है, यह हर नमाज़ में पढ़ी जाने वाली सूरः है और क़ुरआन मजीद का आमुख (Preface) और इस्लाम का ख़ुलासा है। यह क़ुरआन का सबसे अधिक पढ़ा जाने वाला भाग है और इस्लाम में इसका बड़ा दर्जा है। सूरः फ़ातिहा का अनुवाद इस प्रकार है:

अनुवाद – शुरू अल्लाह का नाम लेकर जो बड़ा मेहरबान निहायत रहम वाला है।

---

1. इस्लाम में कोई प्रीस्ट क्लास (पुरोहित वर्ग) नहीं है जिनके बिना मुसलमानों की इबादतें न अदा हो सकें, कोई मुसलमान इस काम को कर सकता है। लेकिन अब व्यवस्था और सहूलत के कारण प्रायः मस्जिदों में इमाम और मुअज़्ज़िन मुक़र्रर हैं और चूंकि वह इस काम के लिए अपने को फ़ारिग़ कर देते हैं इसी काम पर रहते हैं इसलिए मुहल्ले अथवा मुसलमानों की जमाअत या औक़ाफ़ से इनको वेतन दिया जाता है।

2. पांच नमाज़ों में से तीन जहरी है– मग़रिब, ईशा, फ़ज्र और दो सिर्री अर्थात इनमें तकबीरों के सिवा इमाम ज़ोर से कुछ नहीं पढ़ता, वह ज़ुहर और अस्र की नमाज़ें हैं।

सब तारीफ़ें अल्लाह ही के लिए हैं जो तमाम जहानों का पालनहार है। बड़ा मेहरबान और निहायत रहम वाला। इन्साफ़ के दिन का मालिक है। ऐ अल्लाह हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझी से मदद मांगते हैं। हमको सीधे रास्ते पर चला, उन लोगों के रास्ते पर जिन पर तू अपना फ़ज़्ल व करम करता रहा, न कि उनके जिन पर गुस्सा होता रहा और न गुमराहों के।

इस सूरः के ख़त्म होने पर इमाम और मुक़तदी 'आमीन' कहते हैं। जिसका अर्थ है 'ऐ अल्लाह हमारी दुआ कुबूल फ़रमा।'

सूरः फ़ातिहा के बाद कुरआन मजीद के कसी ऐसे भाग की तिलावत का हुक्म है जो याद हो और आसानी से ज़िहन में आ जाये। इसका उद्देश्य यह है कि यह अर्थ और भाव भली प्रकार मन में बैठ जाये और इनकी जड़ें गहरी और मज़बूत हो जाएं। इसलिए कि नमाज इबादत भी है और शिक्षा भी। इमाम कुरआन शरीफ़ की कोई सूरः या कुरआन की कुछ आयतें पढ़ता है। इसके बाद इमाम तकबीर कहता है और सब नमाज़ी आधा झुक जाते हैं इसको रूकूअ़ कहते हैं, इसमें तीन बार या इससे अधिक सुब्हान रब्बियल अज़ीम (मेरा रब जो बड़ी शान वाला है, पाक है) कहा जाता है, फिर इमाम कहता है, "समेअल्लाहु लेमन हमिदः (अल्लाह ने उसको सुना जिसने उसकी स्तुति बयान की) और लोग ज़रा देर के लिए सीधे खड़े हो जाते हैं और मुक़तदी "रब्बना लकल हम्द" (ऐ हमारे रब तेरे वास्ते सब खूबियां हैं) कहते हैं। फिर इमाम अल्लाहु अकबर कहते हुए सज्दे में जाता है और मुक़तदी भी उस की पैरवी करते हैं। सज्दे में माथा और नाक ज़मीन पर होती है, दोनों हथेलियां खुली हुई ज़मीन पर टिकी होती हैं, कोहनियां ज़मीन से उठी हुई और बग़लों से अलग होती हैं, घुटने ज़मीन से लगे होते हैं। सज्दे में तीन बार या इससे अधिक "सुबहान रब्बीयल आ़ला" (मेरा रब सब से बुलन्द है) कहा जाता है, इसके बाद "अल्लाहु अकबर" कहते हुए विशेष आकृति में सीधे बैठ जाते है, फिर अल्लाहु अकबर कहते हुए इसी तरह दूसरे सज्दे में जाते हैं। सज्दः पूरी नमाज़ में खुदा के सानिध्य का सबसे अन्तिम रूप है और खुदा को सर्वाधिक प्रिय व पसन्दीदा है। हदीस

में आता है कि–

अनुवाद – "बन्दा अपने रब से सर्वाधिक क़रीब सज्दे में होता है, इसलिए इसमें खूब दुआ करो।"

(अबू दाऊद)

अतएव नमाज़ी इस क़ीमती मौक़े को ग़नीमत जानता है। फिर दूसरी रकअ़त के लिए खड़े हो जाते हैं इसकी वही तरकीब है जो पहली रकअ़त में गुज़री इस पर हर रकअ़त को क़यास करना चाहिए। हर दो रकअ़त के बाद बैठना ज़रूरी है जिसको "क़अ़दा" कहते हैं जिस क़अ़दा के बाद खड़ा होना हो उसमें अत्तहीयात पढ़ते हैं जिसका अर्थ इस प्रकार है :–

अनुवाद – "सब सलाम और रह़मतें और पाक चीज़ें अल्लाह ही के लिए हैं। ऐ अल्लाह के नबी आप पर अल्लाह की रहमत और सलाम हो और उसकी बरकत नाज़िल हो और सलाम हम पर और खुदा के नेक बन्दों पर हो। मैं इक़रार करता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई मअ़बूद नहीं और में इक़रार करता हूं कि मुहम्द सल्ल॰ उसके बन्दे और रसूल है।"

और जिस क़अ़दा के बाद सलाम फेरना होता है उसमें इस दरूद को और बढ़ा देते हैं जिसका अनुवाद यह है :

"ऐ अल्लाह, मुहम्मद सल्ल॰ और उनके घर वालों पर रह़मत नाज़िल कर जैसा कि तूने हज़रत इब्राहीम अ0 और उनकी आल पर नाज़िल फ़रमाई है। निश्चय ही तू तमाम खूबियों वाला है और बुजुर्गी वाला है ऐ अल्लाह बरकत नाज़िल कर ह॰ मुह़म्मद सल्ल॰ और उनकी आल पर जैसी बरकत नज़िल की है हज़रत इब्राहीम अ0 और उनकी आल पर यक़ीनन तू खूबियों वाला और बुजुर्गी वाला है।"

मोमिन का आत्म विश्वास

अल्लाह की स्तुति बयान करने, उसका हक़ अदा करने और हज़रत मुहम्मद सल्ल० पर दुरूद व सलाम भेजने के बाद नमाज़ी को भी इस सलाम व रहमत में से कुछ अंश अवश्य मिलता है। जिसका वह मुहताज है और जिस की कामना करता है और जो इस्लाम की पहचान है और यह मअ़लूम होता है कि वह हर जगह हर युग में नेकों के साथ है, और सलाम व सलामती में उनका साथी और बराबर का हिस्सेदार, भागीदार है। यह बात नमाज़ी में आशा और आत्मविश्वास पैदा करती है। निराशा को दूर करती है। नमाज़ नमाज़ी को उम्मत के दूसरे नमाज़ियों के साथ एक सफ़ में खड़ा कर देती है।

फिर नमाज़ी अपने लिए दुआ करता है और जहन्नम के अज़ाब, क़ब्र के अज़ाब, ज़िन्दगी व मौत की आज़माइशों से अल्लाह की पनाह चाहता है।

नमाज़ का समापन

नमाज़ की समाप्ति पर उसे हर प्रकार से भली–भांति अदा करने के बावजूद नमाज़ी अपनी भूल–चूक, अपनी कोताही को स्वीकार करता है, उसका ऐतिराफ़ करता है, मानों वह यह कहता है कि हमने आपकी वैसी इबादत न की जैसी इबादत करने का हक़ है और वह समापन पर जो दुआ पढ़ता है उसका अनुवाद इस प्रकार है :–

"ऐ अल्लाह मैंने अपने नफ़्स (अस्तित्व) पर बहुत ज़ुल्म किया है, और तेरे सिवा नहीं है कोई इन गुनाहों को मआ़फ करने वाला। बस तू अपनी विशेष कृपा से मुझ मआ़फ फ़रमा। और मुझ पर रहम फ़रमा बेशक तू ग़फ़ूरूर्रहीम है।" (सहीह़ बुख़ारी)

मुस्लिम समाज में मस्जिदों का महत्व

नमाज़ के लिए ऐसी मस्जिदें बनाई गई हैं जो अपनी सादगी,

गरिमा, शान्ति और सुख–चैन, पवित्रता व पाकीज़गी, अपने भरपूर शान्तिमय अध्यात्मिक वातावरण और तौहीद (अद्वैतवाद) के खुले हुए लक्षण में दूसरे धर्मों की इबादतगाहों से बिल्कुल भिन्न हैं। कुरआन मजीद में अल्लाह तआला का इरशाद है :

अनुवाद – "(वह) ऐसे घरों में है जिनके लिए अल्लाह ने हुक्म दिया है कि उनका अदब किया जाये और उनमें उसका नाम लिया जाये, इनमें वह लोग सुबह व शाम अल्लाह की पाकी बयान करते हैं, ऐसे लोग जिन्हें न तिजारत ग़फ़लत में डालती है, न क्रय–विक्रय अल्लाह की याद से और नमाज़ पढ़ने से और ज़कात देने से। वह डरते रहते हैं ऐसे दिन से जिसमे दिल और आंखें उलट जायेंगी।"

(सूरः नूर 36–37)

अनुवाद – "और यह कि मस्जिदें (ख़ास) अल्लह की हैं, तू अल्लाह के साथ किसी और की इबादत न कर और हर सज्दे की जगह अपना रूख़ सीधा रखा करो, और उसे (अर्थात, अल्लाह को) पुकारा करो, दीन को उसी के वास्ते ख़ालिस करके।"

(सूरः अअ्राफ़–29)

अनुवाद –"ऐ आदम की औलाद!हर सज्दागाह के मौके पर अपना लिबास पहन लिया करो।"

(सूरः अअ्राफ़ 31)

मस्जिदें, बजातौर पर, मुसलमानों के धार्मिक केन्द्र और उनकी शिक्षा–दीक्षा, और उनके सुधार व मार्गदर्शन की स्रोत बन गई थीं, इनमे मुसलमानों के सामूहिक व धार्मिक मुआ़मले हल किये जाते थे, जीवन के विभिन्न संकायों में उनको निर्देश दिये जाते थे। जब कोई बड़ी घटना घटित होती और मुसलमानों को नये निर्देश देने होते तो अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ आदेश देते कि मुसलमानों मे एलान कर दिया जाये कि आज नमाज़ मस्जिदे नबवी में पढ़ें।

मस्जिदों को यह केन्द्रत्व व व्यापता बराबर हासिल रही। सारा जीवन इसी धुरी पर घूमता था। ज्ञान वह मार्गदर्शन के स्रोत, सुधार व सन्देश के अभियान सब इसी केन्द्र से पैदा होते और फैलते थे। आज भी इन मस्जिदों में वह पुराना असर बाक़ी है।

जुमअ़ः द्धजुमाक्ष हफ़्ते की ईद

जुमा के दिन जुहर की नमाज़ के बजाय जुम्अ़े की विशिष्ट नमाज़ होती है वक़्त इसका वही है जो जुहर का है इसमें एक तरफ़ तो यह कमी कर दी गई है कि चार रकअ़त के बजाय दो रकअ़त होता है दूसरी तरफ़ यह बढ़ोत्तरी है कि नमाज़ से पहले ख़ुत्बा होता है और नमाज़ जहरी होती है। अल्लाह तआ़ला का इरशाद है :–

अनुवाद –"ऐ ईमान वालों जब जुम्ए के दिन अज़ान कही जाये तो नमाज़ के लिए चल पड़ा करो। अल्लाह की याद की तरफ और क्रय–विक्रय छोड़ दिया करो, यह तुम्हारे हक़ में बेहतर है अगर तुम कुछ समझ रखते हो।" (सुरः जुमअः–1)

हदीस में है :–

अनुवाद :–"जो तीन जुमअ़े सुस्ती और आलस में छोड़ देता है, अल्लाह उसके दिल पर मुहर लगा देता है।" (मुस्लिम)

जुम्ए की नमाज़ के लिए नहाने, दातून करने, ख़ुशबू लगाने और अधिक से अधिक पवित्रता की व्यवस्था करने का हुक्म है और इसमें नमाज़ से पूर्व ख़ुत्बा भी दिया जाता है। हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ जो ख़ुत्बा देते थे जो सम्बोधन करते थे उसमें जीवन की वास्तविकताएं साफ़ झलकती थीं।

ख़ुत्बे को बहुत ख़ामोशी और गम्भीरता के साथ सुनने का हुक्म है ताकि उसका भरपूर लाभ प्राप्त हो सके। ख़ुत्बे के दौरान बात चीत की सख़्त मनाही है, यहां तक कि अपने पास बैठे हुए आदमी को बातचीत करने से रोकना भी मना है। हदीस में आता है कि "जिसने जुमअः के दिन अपने साथी से कहा कि ख़ामोश रहो उसने भी ज़ायद और फुज़ूल बात की।"

एक अरबी खुत्बे का अनुवाद

भारत में अधिक लोकप्रिय और प्रचलित एक अरबी खुत्बे का अनुवाद यहां नमूने के तौर पर प्रस्तुत किया जा रहा है–

अनुवाद –"हम्द व सलात के बाद, "लोगों! तौहीद को अख्तेयार करो (अल्लाह को एक समझो और उसके साथ किसी को शरीक न समझो) इसलिए कि तौहीद खुदा की सबसे बड़ी फरमॉबरदारी और सबसे प्रिय अमल है। हर काम में अल्लाह से शर्म व लिहाज़ करो इसलिए कि शर्म व लिहाज़ लज्जा व भय की आदत तमाम नेकियों की बुनियाद है। अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ के आचरण को (सुन्नत) मज़बूत पकड़ो, इसलिए कि सुन्नत पर चल कर आदमी आज्ञाकारी बनता है। और जो अल्लाह व रसूल की बात मानेगा वह सीधी राह का राही और लक्ष्य को प्राप्त करने वाला होगा। दीन में जो नई नई बातें निकाली गई हैं (बिदअ़त) उन से दूर रहना, इसलिए कि इससे गुमराही में पड़ जाओगे। अपने पूरे जीवन में सत्यमार्ग अपना लो क्योंकि सच्चाई में मोक्ष और झूठ में मौत है। भलाई और नेकी को अपने जीवन में उतारो इसलिए कि अल्लाह को नेकी करने वाले प्रिय हैं। अल्लाह की रहमत से कभी निराश मत हो क्योंकि वह तमाम रहम करने वालों में सबसे ज़्यादा रहम करने वाला है। मायाजाल में न फंस जाना कि सब कुछ खो बैठो। देखो किसी को तब तक मौत नहीं आ सकती जब तक कि उसको उसके हिस्से की रोज़ी न पहुंच जाये इसलिए खुदा की हलाल व हराम, जायज़ व नाजायज़ तरीक़े की रोज़ी कमाने का प्रयास निरर्थक है। अपने कामों में खुदा पर भरोसा रखो। इसलिए कि उसको अपने ऊपर भरोसा करने वालों का बड़ा ध्यान है। दुआ में कमी न करो इसलिए कि खुदा सबकी सुनता है और सब की झोली भरता है उससे अपने गुनाहों की बख़्शिश

चाहते रहो। इससे तुम्हारे माल व औलाद में बरकत होगी। कुरआन मजीद में अल्लाह तआला फ़रमाता है :–

''तुम्हारे परवरदिगार ने कह दिया है कि मुझ से मांगो मैं दूंगा। बेशक जिन लोगों को मेरी बन्दगी इख़्तियार करने से अभिरूचि नहीं है और उनकी शान को बट्टा लगता है वह नर्क में अपमानित होकर जायेंगे''।

(सूरः मोमिन–60)

अल्लाह हमको और तुमको कुरआन की दौलत अधिकाधिक प्रदान करे और हमको और तुमको कुरआन की आयतों और उसके उपदेशों से लाभ पहुंचाये। मैं अपने लिए, तुम्हारे लिए और तमाम ईश्वरीय संविधान पर चलने वालों के लिए खुदा के रहम की दुआ करता हूं, तुम भी उससे क्षमा याचना करते रहो, बेशक वह बड़ा क्षमा करने वाला और बड़ा दया (रहम) करने वाला है।

नमाज़ें विभिन्न हैं और नमाज़ियों के मर्तबे भी विभिन्न

कुरआन मजीद में नमाज़ों का उल्लेख दो प्रकार से आता है एक का बुराई के साथ दूसरे का अच्छाई के साथ। अल्लाह तआला का इरशाद है :–

अनुवाद –''सो बड़ी ख़राबी है ऐसे नमाज़ियों के लिए जो अपनी नमाज़ को भुला बैठते हैं (और) जो ऐसे हैं कि आडम्बर करते हैं। और हक़ीर (तुच्छ) चीज़ें तक रोके रहते हैं''।

(सूरः माऊन–4–7)

दूसरे प्रकार उल्लेख करते हुए इरशाद होता है–

अनुवाद –''निश्चय ही (वह) मोमिन कामयाबी पा गये जो अपनी नमाज़ में नम्रता रखने वाले हैं।

(सूरः मूमिनून–1–2)

इसी प्रकार हज़रत मोहम्मद सल्ल० ने भी दो प्रकार की नमाज़ों का

उल्लेख किया है– एक नम्रता, विनय और तन्मयता वाली नमाज़ और एक ग़फ़लत व लापरवाही वाली नाक़िस नमाज़। अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ ने फ़रमाया, "जो मुसलमान भी अच्छी तरह वुज़ू करता है, फिर खड़े होकर दो रकअ़त नमाज़ अदा करता है, और अपने दिल और चेहरा दोनों के साथ नमाज़ में तल्लीन रहता है। तो उस पर जन्नत वाजिब हो जाती है" दूसरे प्रकार की नमाज़ के बारे में फरमाया, "आदमी नमाज़ से फ़ारिग़ भी हो जाता है और उसको उसकी नमाज़ का मात्र दसवां भाग नसीब होता है और कभी–कभी नवां, आठवां, सातवां, छठा, पांचवां, चौथाई, तिहाई और आधा।"

अल्लाह के रसूल ह0 मुहम्मद सल्ल॰ की नमाज़ सर्वोत्कृष्ट थी, हज़रत अबूबक्र रजि0 की नमाज़ किसी दूसरे की नमाज़ की अपेक्षा ह0 मुहम्मद सल्ल॰ की नमाज़ से सबसे ज़्यादा मिलती–जुलती और करीब थी, इस लिए आप सल्ल॰ ने अन्त समय में हज़रत अबूबक्र रज़ि0 को अपनी जगह इमामत का हुक्म फ़रमाया। लोगों के मर्तबे का सही अन्दाज़ा जितना नमाज़ से हो सकता है उतना किसी और चीज़ से नहीं हो सकता। नमाज़ ही वह सहीह पैमाना है जिस पर इन्सान के दीन का और इस्लाम में उसके मक़ाम का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है।

इस्लाम का तीसरा स्तम्भ ज़कात

कुरआन मजीद में सूरः तौबा की ग्यारहवीं आयत में अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया –

अनुवाद –"लेकिन अगर वह तौबा कर लें और नमाज़ के पाबन्द हो जाएं और ज़कात देने लगें तो वह तुम्हारे भाई हो जायेंगे।"

इस्लाम में ज़कात का महत्व

कुरआन मजीद में नमाज़ के साथ ज़कात का उल्लेख हर जगह आया है, इसके अलावा मुसलमानों के गुण जहां–जहां बयान किये गये हैं, वहां भी नमाज़ और ज़कात की बात एक साथ कही गई है। हज़रत मुहम्मद

सल्ल॰ ने ज़कात को इस्लाम का स्तम्भ बताया है। आपका इरशाद है कि "इस्लाम की बुनियाद पांच चीज़ों पर है, इस बात की गवाही देना कि अल्लाह के सिवा कोई मअ़बूद नहीं, नमाज़ क़ायम करना, ज़कात देना, हज करना और रमज़ान के रोज़े रखना"।

आप (सल्ल॰) से पूछा गया कि "इस्लाम क्या है?" आपने जवाब दिया कि "अल्लाह की इबादत करो और उसके साथ किसी को शरीक न करो, फ़र्ज़ नमाज़ क़ायम करो, ज़कात अदा करो और रमज़ान के रोज़े रखो।"

इस्लाम की आर्थिक व्यवस्था का मौलिक स्वरूप

कुरआन मजीद ने तमाम इन्सानी मुआ़मलों को अल्लाह के हवाले कर दिया है और इन्सान को सिर्फ एक चीज़ का ज़िम्मेदार बनाया है और वह चीज़ है ख़िलाफ़त का मन्सब। अल्लाह तआ़ला का इरशाद है :

अनुवाद –"और अल्लाह के उस माल में से उन्हें भी जो उसने तुम्हे दिया है।" (सूरः नूर–33)

"और जिस माल में से उसने तुमको दूसरों का जानशीन बनाया है उसमें से ख़र्च करो।" (सूरः हदीद–7)

"तुम्हें क्या हो गया है कि तुम अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करते हो, अन्ततः आसमान और ज़मीन सब अल्लाह ही के रह जायेंगे।" (सूरः हदीद–10)

इस वस्तुस्थिति के फलस्वरूप होना तो यह चाहिए कि इन्सान अपनी हर मिलकियत से हाथ खींच ले और उसको अपनी ज़मीन–जायदाद में तनिक भी उपयोग का हक़ बाक़ी न रहे, लेकिन अल्लाह की रहमत और हिकमत ने इन्सान के साथ यह मुआ़मला नहीं किया, यदि ऐसा होता तो इस में कोई आश्चर्य की बात न थी किन्तु इससे मानव आत्मविश्वास, हौसला और लगन, उमंग और तरंग तथा जिज्ञासा की ललक और संक्षेप में जीवन के उस रस व स्वाद से वंचित रह जाता जो उसे अपनी मेहनत का फल देख कर हासिल होता है। यह वह स्वाभाविक स्वाद है, जो बच्चों

को अपने घर और अपने माता पिता की चीज़ों को अपना बताने से प्राप्त होता है। यदि मानव इस भावना से वंचित हो जाये तो वह निष्ठा व लगन, सद्भावना, उन चीज़ों की सुरक्षा और उनके बढ़ावे की उमंग से कट कर रह जायेगा और मानव के अस्तित्व व विकास के लिए यह चीज़ें अपरिहार्य हैं। यदि जीवन में ललक और उमंग और अपना होने की भावना न हो तो यह दुनिया एक बड़ा कारख़ाना बन कर रह जायेगी। जिसमें मानव मशीन के गूंगे बहरे कलपुरज़ों की तरह सक्रिय होंगे न उनके पास दिल होगा, न आत्मा, न तुष्टि, न रस। जीवन नीरस होकर रह जायेगा। इसलिए कुरआन मजीद में माल को मानव की ओर समर्पित करने की बात बार–बार कही गई है, इरशाद होता है –

अनुवाद– "और आपस में एक दूसरे का माल नाजाइज़ तौर पर मत खाओ, और न उसे हुक्काम तक पहुंचाओ जिससे लोगों के माल का एक हिस्सा तुम गुनाह से खा जाओ यद्यपि तुम जान रहे हो।"

(सूरः बक्रः–188)

ज़कात की एक निश्चित, विशिष्ट और व्यापक व्यवस्था

जब इस्लामी समाज का भरपूर विकास हो चुका और हर पहलू से उसमें मज़बूती आ गई और वह एक ऐसी विशाल सोसाइटी बन गई जिसमें मालदार भी थे और ग़रीब भी, मध्यवर्गीय लोग भी थे और कंजूस भी, उदार, सख़ी और अनुदार तथा स्वार्थी भी, पक्के ईमान वाले भी थे और कमज़ोर ईमान वाले भी, तो अल्लाह की बड़ी हिकमत थी कि उसने ऐसी सोसाइटी के लिए ऐसा स्पष्ट और निश्चित निसाब[1] (पैमाना) निर्धारित कर दिया जिसकी मात्रा, संख्या, सिद्धान्त, व शर्तें, अलामत व निशान सब पूरी तरह स्पष्ट और निर्धारित हैं। यह निसाब न इतना अधिक है कि मध्यम वर्ग इसके बारे में परेशान हो जाये न इतना कम कि दौलतमन्द तबक़ा उदार लोगों की निगाह से गिर जाये। इसको किसी की राय या हिम्मत व हौसले पर नहीं छोड़ा गया, न भावुकता के हवाले किया गया जिसमे उतार चढ़ाव हर समय

1. वह धन जिस पर ज़कात वाजिब हो जाती है।

होता रहता है, इसको क़ानून बनाने वालों और विद्वानों अथवा शासकों के हवाले भी नहीं किया गया, इस लिए कि उन पर भी पूरा भरोसा नहीं किया जा सकता और वह भी लालसा से सुरक्षित नहीं। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए ज़कात अपने निसाब व मिक़दार (मात्रा) के साथ फ़र्ज़ की गई।

ज़कात किस चीज़ पर वाजिब है?

हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने ज़कात की मात्रा निर्धारित कर दी है और उन चीज़ों को इंगित भी कर दिया है जिन पर ज़कात फ़र्ज़ है। आपने यह भी बता दिया है कि ज़कात कब वाजिब होगी। आपने इन चीज़ों की चार क़िस्में की हैं और यह चार ऐसी हैं जिन से लगभग हम सब को वास्ता पड़ता है – (1) खेती व बाग़, (2) पशु–ऊंट, गाय, बकरी आदि, (3) सोना, चांदी आदि और (4) तिजारत (व्यापार) का माल।

ज़कात साल में एक बार फ़र्ज़ है, खेती व बाग़ का साल उस समय पूरा समझा जायेगा जब फ़सल पक जाये। अगर ज़कात हर महीने या हर हफ़्ते देनी होती तो यह दौलतमन्द लोगों के लिए बड़े घाटे की हो सकती थी और यदि जीवन में एक बार फ़र्ज़ होती तो इस का घाटा दीन–दुखियों को उठाना पड़ता इस लिए इस को हर साल अदा करने को कहा गया है। ज़कात की मात्रा का निर्धारण निसाब के मालिकों की मेहनत, प्रयास, और उनकी सहूलत व मशक़्क़त को सामने रख कर किया गया है, अतएव जो माल आदमी को अचानक और एकबारगी मिल जाये (जैसे खनन से प्राप्त धन) तो उन पर साल बीतने का इन्तिज़ार न किया जायेगा, और जिस समय वह उसको प्राप्त होगा उसी समय उसका पांचवां हिस्सा उस पर वाजिब हो जायेगा। हां, जिसकी प्राप्ति में स्वयं उसकी मेहनत शामिल हो तो उस पर दसवां हिस्सा वाजिब होगा। जैसे वह खेती व बाग़ आदि जिसके जोतने बोने का कार्य तो स्वयं करता है किन्तु उसकी न सिंचाई उसको करनी पड़ती है न उसके लिए कुआं खोदना और रहट आदि लगाना पड़ता है बल्कि बरसात के पानी से सिंचाई हो जाती है, हां यदि कोई व्यक्ति डोल अथवा किसी और साधन से उसकी सिंचाई करता है तो उस पर बीसवां

हिस्सा वाजिब होता है, अगर कोई ऐसा काम हो जिसमें बढ़ोत्तरी मालिक की मेहनत पर निर्भर हो और उसकी देख रेख व सुरक्षा उसके ज़िम्मे हो तो उस पर चालीसवां हिस्सा वाजिब होगा। नक़दी के लिए दो सौ दिरहम और सोने के लिए बीस मिस्काल[1] ग़ल्ला और फ़लों के लिए पांच वसक़ (जो ऊंट के पांच बोझ के बराबर होता है) बकरी के लिए, चालीस बकरियां, गाय के लिए तीस और ऊंट के लिए पांच निर्धारित किए गये हैं।

ज़कात टैक्स या जुर्माना नहीं, इबादत है

ज़कात कोई टैक्स या जुर्माना या सरकारी मुताल्बा नहीं है। वह नमाज़, रोज़ा की तरह इबादत है, और खुदा को खुश व राज़ी करने का एक साधन है। इसके अदा करने में एहसान की भावना नहीं होनी चाहिए और अपने को बड़ा नहीं समझना चाहिए, बल्कि विनम्रता होनी चाहिए और ज़कात लेने वाले के प्रति इहसानमन्द होना चाहिए ज़कात के अधिकारी लोगों की स्वयं तलाश करनी चाहिए यह भी बेहतर समझा गया है कि एक ही जगह के मालदारों से निकालकर वहीं के ग़रीबों में तक़सीम हो (सिवाय इसके कि वहां इसके मुस्तहक़ न पाये जाते हों) कुरआन मजीद में ज़कात की जितनी प्रशंसा की गई है सूद (ब्याज) की उतनी ही निन्दा की गई है, सूद इस्लाम में हराम है।

आवश्यकता से अधिक माल को दान करने की प्रेरणा

हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ ने माल ख़र्च करने की उम्मत को ऐसी प्रेरणा और नसीहत फ़रमायी है कि जिन को पढ़कर ऐसा विचार होने लगता है कि फ़ाज़िल माल में शायद आदमी का कोई हक़ नहीं। निम्नलिखित हदीसों को पढ़ने के बाद एक व्यक्ति, जब अपनी ज़िन्दगी का जायज़ा लेता है, और उस आराम और सुख–सुविधा को देखता है जो उसे प्राप्त है तो

---

1. हज़रत मुहम्मद सल्ल0 के ज़माने में एक मिस्क़ाल एक दीनार के बराबर था और एक दीनार दस दिरहम के बराबर इस प्रकार बीस मिस्क़ाल (बीस दीनार) दो सौ दिरहम के बराबर हुए। दो सौ दिरहम साढ़े बावन तोला चांदी के बराबर होते हैं। बीस मिस्क़ाल (या बीस दीनार) साढ़े सात तोला सोने के बराबर समझा गया है।

उसको बड़ी कठिनाई महसूस होती है और उसको हर चीज़ आवश्यकता से अधिक और फ़ाज़िल महसूस होने लगती है और यह सुन्दर वस्त्र, तरह तरह के खाने, आरामदेह सवारियां और जीवन के सुख साधन की बाहुल्यता उसको ग़लत और नाजायज़ नज़र आती है, यद्यपि यह केवल प्रेरणा की बात है, शरई हुक्म और क़ानून की बात नहीं। लेकिन हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ का आचरण यही था। आप ने फ़रमाया–

"जिसके पास एक सवारी अधिक व फ़ाज़िल हो तो जिसके पास एक भी सवारी न हो उस को दे दे। जिसके पास एक नाश्ता फ़ाज़िल हो उसको देदे जिसके पास नाश्ता न हो।"[1]

"जिसके पास दो व्यक्तियों का खाना हो तो वह तीसरे को भी खाना खिलाये, और जिसके पास तीन का खाना हो वह चौथे को शामिल करे।"[2]

"मुझ पर ईमान नहीं लाया वह व्यक्ति जो पेट भर कर सोता रहा और उसका पड़ोसी भूखा रहा, यद्यपि उसको इस बात की ख़बर थी।"[3]

एक और हदीस में है कि एक व्यक्ति हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ के पास आया और कहने लगा, "ऐ अल्लाह के रसूल! मुझे कपड़ा पहनाइये।" आप ने कहा क्या तुम्हारे कोई ऐसा पड़ोसी नहीं है जिसके पास दो जोड़े फ़ाज़िल हों। उसने निवेदन किया एक से ज़्यादह हैं। आपने फ़रमाया, "फिर अल्लाह जन्नत में उसको और तुमको जमा न करें।"[4]

इस्लाम की नज़र में इन्सान की क़ीमत व सहृदयता का महत्व

हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ ने इन्सानी मर्तबा उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति तथा सहृदयता को सर्वोत्कृष्ट बताया। मशहूर हदीसे कुदसी है कि "अल्लाह क़यामत के दिन अपने बन्दे से कहेंगे कि मैं बीमार हुआ तू मेरा हाल लेने नहीं आया, वह कहेगा, ऐ मेरे रब! मैं कैसे आपका हाल लेने आता

1. अबूदाऊद 2. तिर्मिज़ी 3. तिबरानी 4. तिबरानी।

आप तो सारे जहानों के पालनहार हैं। अल्लाह तआला फ़रमायेंगे कि तुझको मालून नहीं था कि मेरा अमुक भक्त बीमार था लेकिन तू उसे देखने नहीं गया, अगर तू उसकी इयादत करता तो मुझे उसके पास पाता। ऐ आदम की औलाद! मैंने तुझ से खाना मांगा था तूने मुझे खाना नहीं दिया, वह कहेगा ऐ मेरे रब मैं कैसे आप को खाना देता आप तो पालनहार हैं। अल्लाह तआला फरमायेगा कि तुझको ख़बर नहीं कि मेरे फ़लां बन्दे ने तुझसे खाना मांगा और तूने उसको खाना नहीं दिया, अगर तू उसको खाना खिलाता तो वह खाना मेरे पास पहुंचता। ऐ आदम की सन्तान! मैंने तुझसे पानी मांगा तूने मुझे पानी नहीं पिलाया। वह कहेगा ऐ मेरे परवरदिगार! मैं आप को कैसे पानी पिलाता आप तो सारे जहान के पालनहार हैं। अल्लाह तआला फ़रमायेगा कि मरे अमुक भक्त ने तुझ से पानी मांगा था लेकिन तूने उसको पानी नहीं पिलाया अगर तू उसको पानी पिला देता तो मुझे उसके पास पाता।"[1]

हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ ने फ़रमाया : "तुममें से कोई उस समय तक पूरा मुसलमान नहीं होगा जब तक कि अपने भाई के लिए भी वही न चाहे जो अपने लिए चाहता है।"[2]

इस्लाम का चौथा स्तम्भ रोज़ा

रोज़े का हुक्म

मुसलमानों पर रोज़ा हिजरत के बाद उस समय फ़र्ज़ किया गया जब उन पर सख़्तियों के बादल छंट गये, ग़रीबी और तंगदस्ती का दौर ख़त्म हुआ और मुसलमानों ने मदीना में इत्मिनान की सांस ली और उनकी ज़िन्दगी आराम से बसर होने लगी। ऐसा शायद इसलिए हुआ कि अगर परेशानी के दिनों में रोज़ा का हुक्म नाज़िल होता तो बहुत से लोग इसको मजबूरी का रोज़ा समझते और यह महसूस करते कि रोज़ा केवल ग़रीबों और पीड़ित लोगों के लिए है, अमीरों और खुशहाल लोगों के लिए, जो बाग़ों

1. मुस्लिम 2. बुख़ारी

और ज़मीनों के मालिक हैं, नहीं।

कुरआन मजीद में सूरः बक़रः की आयत 183–185 में रोज़ा का हुक्म नाज़िल हुआ :

अनुवाद– "ऐ ईमान वालो! तुम पर रोज़े फ़र्ज़ किये गये जैसा कि उन लोगों पर फ़र्ज़ किये गये थे जो तुमसे पूर्व हुए हैं ताकि तुम परहेज़गार बन जाओ। वह भी गिनती के चन्द रोज़ के हैं। फिर तुममें से जो व्यक्ति बीमार हो या सफ़र मे हो तो दूसरे दिनों (में रोज़े रखकर) गिनती पूरी कर दे और जो लोग इसे मुश्किल से बर्दाश्त कर सकें उनके ज़िम्मे फ़िद्यः है (कि वह) एक ग़रीब का खाना है और जो कोई ख़ुशी–ख़ुशी नेकी करे उसके हक़ में बेहतर है और अगर तुम समझो तो बेहतर तुम्हारे हक़ में भी है कि तुम रोज़े रखो। रमज़ान के महीने में कुरआन उतारा गया है वह लोगों के लिए हिदायत है, और (उसमें) खुले हुए (तर्क हैं) हिदायत और बुराई और भलाई में अन्तर करने के खुले हुक्म मौजूद हैं। सो तुम में से जो कोई इस महीनें को पाये, लाज़िम है कि वह (महीना भर) रोज़ा रखे और जो कोई बीमार हो या सफ़र में हो तो (उस पर) दूसरे दिनों का शुमार रखना (लाज़िम है) अल्लाह तुम्हारे हक़ में सहूलत चाहता है, और तुम्हारे हक़ में दुशवारी नहीं चाहता और यह कि तुम गिनती को पूरा कर लिया करो और अल्लाह की बड़ाई किया करो, इस पर कि तुम्हें राह बता दी, अजब नहीं कि तुम शुक्रगुज़ार बन जाओ।"

यह आयतें ईमान व अक़ीदा (आस्था), अक़्ल व अन्तःकरण सबको अपील करती है और बलवान बनाती हैं और सहर्ष रोज़ा के स्वागत के लिए वातावरण को अनुकूल बनाती है।

रोज़े का हुक्म कोई ऐसी चीज़ नहीं जिसका उद्देश्य अकारण मशक़्क़त और आज़माइश में डालना हो, यह साधना, प्रशिक्षण, सुधार, तपानें

और मांझने के लिए है। यह वास्तव में नैतिक दीक्षा निकेतन है जहां से आदमी परिपूर्ण होकर इस प्रकार निकलता है कि इच्छाओं की लगाम उसके हाथ में होती है, इच्छाएं उस पर शासन, नहीं करती वही इच्छाओं पर शासन करता है। जब वह मात्र अल्लाह के हुक्म से अवर्जित और पवित्र चीज़ों को त्याग देता है तो वर्जित चीज़ों से बचने का प्रयास क्यों न करेगा? जो व्यक्ति ठंडे मीठे पानी और पवित्र व स्वादिष्ट खाने को ईश्वर के आज्ञापालन में छोड़ सकता है, वह हराम व वर्जित तथा अपवित्र चीज़ों की तरफ़ नज़र उठा कर देखना कैसे गवारा कर सकता है। "ताकि तुम परहेज़गार बन जाओ" में यही भाव निहित है। आगे कहा गया है कि महीनों की गिनती को ज़्यादह न समझना, यह तो चन्द गिने चुने दिन हैं जो देखते ही देखते ख़त्म हो जाते हैं।

रोज़े की विशेषताएं और उसका महत्व

इस्लाम में रमज़ान का पूरा महीना जिसमें कुरआन नाज़िल हुआ है, रोज़ों के लिए निश्चित है जिसके दिनों में रोज़ा रखने का हुक्म है और रातों को खाने पीने की इजाज़त है। हज़रत अबू हुरैरः (रज़ि0) ने बयान किया है कि हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ ने फ़रमाया, "रमज़ान में आदम की औलाद का हर अमल (कर्म) कई गुना बढ़ा दिया जाता है, अन्य नेकी दस गुना से लेकर सात सौ गुना तक बढ़ा दी जाती है। अल्लाह तआला फ़रमाता है कि सिवाय रोज़े के इस लिए कि बेशक वह ख़ास मेरे लिए है और मैं ही उसका बदला दूंगा मेरी ख़ातिर अपना खाना और अपनी वासना सब छोड़ देता है। रोज़ेदार के लिए दो खुशियां है। एक इफ़तार के समय और एक अपने रब से मुलाक़ात के समय। और बेशक रोज़ेदार के मुंह की बू अल्लाह के नज़दीक मुश्क (कस्तूरी) से ज़्यादा अच्छी और पाकीज़ा है।"

सहल बिन सअद बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "जन्नत में एक दरवाज़ा है जिसका नाम "रय्यान" है इसके लिए केवल रोज़ेदार बुलाये जायेंगे, जो रोज़ेदारों में से होगा वही उसमें दाख़िल होगा और जो उस में दाख़िल हो जायेगा वह कभी प्यासा न होगा।"

रमज़ान के महीने में रोज़ा फ़र्ज़ करने के कुछ कारण हैं। सबसे बड़ा कारण यह है कि रमज़ान ही वह महीना है जिस में कुरआन मजीद नाज़िल हुआ, और भटकी हुई मानवता को भोर नसीब हुआ। इसलिए यह सर्वथा उचित था कि जिस प्रकार भोर के समय से रोज़े की शुरूआत होती है उसी प्रकार इस महीनें को भी जिसमें एक लम्बी और अन्धेरी रात के बाद पूरी मानवता की सुबह हुई, पूरे महीने के रोज़े के साथ सम्बद्ध कर दिया जाये। विशेषकर इसलिए और भी कि अपनी रहमत व बरकत, आध्यात्मिक और आन्तरिक शुद्धता के लिहाज़ से भी यह महीना तमाम महीनों से अफ़ज़ल (उत्कृष्ट) था और इसके दिनों को रोज़े से और रातों को इबादत से सुसज्जित करना सर्वथा उचित था।

रोज़ा और कुरआन का घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ रमज़ान में कुरआन का अधिक पाठ करते थे। इब्ने अब्बास बयान करते हैं कि हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ सबसे ज़्यादह सख़ी (उदार) थे, लेकिन रमज़ान मे जब जिबराईल मिलने आते उस समय आपकी सख़ावत (उदारता) और अिधक बढ़ जाती है। जिबराईल रमज़ान में हर रात में आप के पास आते और कुरआन का पाठ करते। जिबराईल से मुलाकात के काल में आप सख़ावत और नेकी में तेज़ हवा से भी ज़्यादह तेज़ नज़र आते।

इबादत का विश्वव्यापी मौसम और सतकर्मों की बहार

इन तमाम चीज़ों ने रमज़ान को इबादत, जाप व कुरआन के पाठ और परहेज़गारी का एक ऐसा विश्वव्यापी मौसम प्रदान कर दिया है जिसमें पूरब से पश्चिम के तमाम मुसलमान, पढ़े लिखे और अनपढ़, अमीर व ग़रीब, कमज़ोर और ताक़तवर हर वर्ग के लोग एक दूसरे के साथी और दोस्त नज़र आते हैं। यह रमज़ान एक ही समय में हर शहर, गावं, हर देहात में होता है। अमीर के महल और ग़रीब की झोपड़ी दोनों मे यह व्याप्त होता है। फलतः न कोई व्यक्ति स्वयं अपना बखान करता है न रोज़े के लिए कोई छीना झपटी और झगड़ा पैदा होता है। इसे पूरी दुनियां में देखा जा सकता

है। ऐसा प्रतीत होता है कि पूरे इस्लामी समाज पर रमज़ान में चैन सुख का ज्योतिर्मय कोई शामियाना तान दिया गया है जो लोग रोज़े के मुआमले में कुछ सुस्त और काहिल हैं वह भी आम मुसलमानों से अलग होने के डर से रोज़ा रखने पर मजबूर होते हैं और अगर किसी वजह से रोज़ा नहीं रखते तो छिप कर और शर्म के साथ खाते हैं, सिवाय कुछ नास्तिकों के और झूठों के जिनको एलानिया भी इस बेशर्मी में कोई संकोच नहीं होता है, अथवा उन बीमारों और मुसाफिरों के जिन को शरिअ़त ने छूट दी है। यह एक सामूहिक और विश्वव्यापी रोज़ा है जिससे स्वतः एक ऐसा माहौल पैदा हो जाता है जिसमें रोज़ा आसान मअ़लूम होता है, दिल नर्म पड़ जाते हैं और लोग इबादत, नम्रता, हमदर्दी व सहृदयता के कामों की ओर स्वतः आकर्षित हो जाते हैं।

पिछले पहर उठकर सहरी खाना

रात को सुबह सादिक़ (भोर) से पहले पहले (रोज़े की ताक़त पैदा करने के लिए ताकि भूख प्यास ज़्यादा न सताये) कुछ खा लिया जाता है इसको "सहरी" कहते हैं। यह सुन्नत भी है और इस पर ज़ोर भी दिया गया है। हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फ़रमाया, "सहरी खाओ इसलिए कि सहरी में बरकत है।" आपने इफ़्तार में देरी करने से मना फ़रमाया है। आप का दस्तूर यह था कि नमाज़ से पहले इफ़्तार करते, चन्द तर–खजूरें अगर मौजूद होतीं खाते अगर न मिलती तो सूखी खजूरें खा लेते अन्यथा पानी के चन्द घूंट पी लेते।

रोज़े का सार और उसकी सुरक्षा

इस्लामी शरीअ़त ने रोज़े के बाह्य स्वरूप के साथ उस के सार व हक़ीक़त पर भी बल दिया है। उसने रोज़ेदार के लिए रोज़े की हालत मे केवल खाने पीने और संभोग ही को हराम नहीं किया बल्कि हर उस चीज़ को वर्जित किया है जो रोज़े के उद्देश्यों के विपरीत और उसकी हिकमतों के लिए हानिकारक है। उसने रोज़े को विनय व परहेज़गारी, दिल व ज़बान की पवित्रता के घेरे में घेर दिया है। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुम में से

कोई रोज़े से हो तो न बकवास करे न शोर व शरारत करे, अगर कोई उसको गाली दे और लड़ने–झगड़ने पर आमादा हो तो कह दे कि मैं रोज़े से हूं। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिस ने झूठ बोलना और उस पर अमल करना न छोड़ा तो अल्लाह को उसकी कोई ज़रूरत नहीं कि वह अपना खाना–पीना छोड़े। "वह रोज़ा जो परहेज़गारी से खाली हो वह ऐसा है, जैसे आत्माविहीन शरीर। नबी सल्ल० ने फ़रमाया, "कितने रोज़ेदार हैं जिनको उनके रोज़े से सिवाय भूख प्यास के कुछ हाथ नहीं लगता और कितने ऐसे इबादतगुज़ार हैं कि जिनको अपने क़ियाम में रात जागने के सिवा कुछ नहीं मिलता।" आप ने फ़रमाया, "रोज़ा ढाल है जब तक उसको फाड़ न डाला जाये।"

इस्लामी रोज़ा केवल कुछ चीज़ों से मनाही करने का नाम नहीं, जिसमे केवल खाने, पीने, ग़ीबत, चुग़लख़ोरी[1], लड़ाई–झगड़े और गाली–गलौज से मना किया गया हो, वह बहुत सी ऐसी बातों का भी मजमुआ (संकलन) है जिन्हें करने के लिए कहा गया है। यह इबादत, तिलावत (कुरआन का पाठ), जाप, अल्लाह की याद, हमदर्दी व सहृदयता और ग़रीबों की मदद करने का ज़माना है। नबी सल्ल० ने फ़रमाया, "इसमें जो किसी एक कार्य से ईश्वर का सानिध्य प्राप्त करना चाहेगा वह दूसरे दिनों के फ़र्ज़ के अदायगी के बराबर समझा जायेगा और जो इस में फ़र्ज़ अदा करेगा वह उसकी तरह होगा जो अन्य दिनों में सत्तर फ़र्ज़ अदा करे। यह सब्र (धैर्य) का महीना है और सब्र का बदला जन्नत है और ग़मख़्वारी (सहृदयता) का महीना है।" आपने फ़रमाया "जो रोज़ेदार को इफ़्तार कराये उसको रोज़ेदार के बराबर बदला मिलेगा, और रोज़ेदार के सवाब में कोई कमी नहीं की जायेगी।" रोज़े के महीनों में तरावीह की नमाज़ पढ़ी जाती है। नबी सल्ल० ने तीन दिन तरावीह की नमाज़ पढ़कर उसको इसलिए छोड़ दिया था कि कहीं यह उम्मत पर फ़र्ज़ न हो जाये और मशक़्क़त का कारण बने।

इन सब चीज़ों ने मिल कर रमज़ान को जश्ने आम, तिलावत का मौसम और परहेज़गारों के हक़ में बहार (बसन्त) का मौसम बना दिया है।

1. किसी के पीठ पीछे ऐसे अवगुण बयान करना जो उसमें हों (अनु0)

इसमें मुसलमान की धार्मिक भावना, इबादत का शौक़, और धर्म के प्रति आस्था पूरी तरह प्रकट हो जाती है और उसके दिलों की नरमी, उनकी तौबा, ईश्वर से लगाव, प्रायश्चित की भावना और नेक कामों में एक दूसरे से आगे निकलने की भावना अपनी चरम सीमा पर होती है।

एतिकाफ़

रमज़ान की अन्तिम दहाई मे एअ़तिकाफ़ बड़े सवाब का काम है यह एक प्रिय सुन्नत भी है रमज़ान के उद्‌देश्यों की पूर्ति का अवसर भी इससे प्राप्त होता है। एअ़तिकाफ़ के दौरान मस्जिद में रहकर और एक प्रकार से अल्लाह के दर पर पड़े रहकर नमाज़, तिलावत, अल्लाह की याद, तस्बीह, तकबीर, तह़मीद, तौबा व इस्तिग़फ़ार और नबी सल्ल० पर दुरूद में व्यवस्त रहना मुस्तह़ब है।

एतिकाफ़ की ह़ालत में पेशाब, पाख़ाना और नापाक हो जाने पर नहाने के अलावा मस्जिद से बाहर जाना मना है वुजू भी मस्जिद ही की सीमा में किया जाये।

हज़रत मुहम्मद सल्ल० रमज़ान की अन्तिम दहाई में बराबर एतिकाफ़ फ़रमाते थे।

शबे क़द्र

अल्लाह ने अपनी ह़िकमत व रह़मत से शबे क़द्र को रमज़ान की अन्तिम दहाई में निहित कर रखा है ताकि मुसलमान इसकी तलाश में रहें उनकी तलब और हिम्मत बढ़े और वह यह सब आख़िरी रातें उसकी लालच में इबादत और दुआ में गुज़ारें। नबी सल्ल० जब रमज़ान की अन्तिम दहाई शुरू होती थी, पूरी रात जागते थे, और अपने घर वालों को भी जगाते थे और कमर कस लेते थे। आपने फ़रमाया, "शबे क़द्र रमज़ान की अन्तिम दहाई की ताक़ रातों में तलाश करो।"

कुरआन मजीद में सूरः क़द्र में शबेक़द्र के महत्व को बयान किया गया है। अल्लाह तआ़ला का इर्शाद है :–

अनुवाद– "बेशक हमने इसे (कुरआन को) शबेकद्र में उतारा है, और आपको खबर है कि शबे कद्र क्या है? शबेकद्र हज़ार महीनों से बढ़ कर है। इस रात फ़रिश्ते और रूहुलकुद्स उतरते हैं अपने पालनहार के हुक्म से हर अच्छी बात के लिए सलामती (ही सलामती) है वह रहती है सुबह होने तक।"

ईद के चांद पर रमज़ान ख़त्म हो जाता है

दिन गुज़रते देर नहीं लगती और 29–30 की औक़ात ही क्या। अभी इबादत के मतवालों का जी भी नहीं भरा था कि चांद रात आ गई। रमज़ान ने चलने की तैयारी की और अगले साल फिर आने का वअ़दा कर के मुसलमानों से विदा ली। ईद का चांद निकल आया। खुदा का एक मेहमान रूख़्सत हुआ दूसरा मेहमान आया, वह भी हुक्म था यह भी हुक्म। आज तक दिन में खाना गुनाह था, कल दिन में न खाना गुनाह होगा।

इस्लाम का पाँचवा स्तम्भ ह़ज

"और लोगों में ह़ज का ऐलान कर दो, लोग तुम्हारे पास पैदल भी आयेंगे और दुबली ऊंटनियों पर भी, जो दूर–दराज़ रास्तों से पहुंची होंगी ताकि अपने फ़ायदे के लिए मौजूद हों और ताकि इन निश्चित दिनों में अल्लाह का नाम लें। उन चौपायों पर जो अल्लाह ने उनको दिये हैं, बस तुम भी इनमें से खाओ और दु:खी–मुहताज को भी खिलाओ। फिर लोगों को चाहिए कि अपना मैल कुचैल दूर करें और अपने वाजिबात को पूरा करें और चाहिए कि (इस) प्राचीन घर का तवाफ़ (परिक्रमा) करें।"

(सूर: ह़ज–27–29)

इस्लाम का पांचवा स्तम्भ ह़ज है। अगर कोई व्यक्ति इसकी शर्तों को पूरा करने के बावजूद ह़ज न करे तो उस के लिए कुरआन व हदीस में ऐसे शब्द आये हैं जिनसे भय पैदा होता है कि वह इस्लाम के दायरे से और मुस्लिम समुदाय से ख़ारिज न हो जाये। ह़ज विशेष समय में और विशेष स्थान पर अदा होता है अर्थात ज़िलहिज्ज: के महीने में और मक्क: में।

कुअरान मजीद में हज़रत इब्राहीम द्धअ0ऋ का क़िस्सा और शान्ति की नगरी मक्के से उनका सम्बन्ध

हज़रत इब्राहीम (अ0) शहर के एक बड़े मुजाविर या पुरोहित के घर में पैदा हुए जिसका पेशा बुत बनाना था, और जो शहर के सबसे बड़े पूजाघर में पुरोहित था और अपनी आस्था और अपने पेशे दोनों से उस पूजाघर के साथ जुड़ा था। यह बड़ी कठिन स्थिति थी, क्योंकि जब अक़ीदा पेशों के साथ और धार्मिक भावना आर्थिक लाभ के साथ मिल जाती है और दोनों साथ चलने लगते हैं तो ऐसी दशा में पेचीदगी और दुशवारी पहले से कहीं अधिक बढ़ जाती है। इस कठोर और अन्धकारमय वातावरण में कोई ऐसी चीज़ न थी जो ईमान और मुहब्बत को उभार सके और इस मुशरिकाना[1] और बुत परस्ताना जेहालत (अज्ञानता) और हिमाक़त के ख़िलाफ़ बग़ावत पर आमादा कर सके, लेकिन उस ''क़ल्बे सलीम'' (निरोग हृदय) की बात ही और थी जिसको नुबुव्वत (पैग़म्बरी) और नवयुग के निर्माण के लिए तैयार किया जा चुका था। वह अपनी बग़ावत उस मरहले (सोपान) से शुरू करते हैं और जहां कभी कभी दुनिया के बड़े से बड़े इन्क़लाब का गुज़र नहीं होता। यह घरेलू ज़िन्दगी का स्टेज है, उस घर का स्टेज जहां इन्सान पैदा होता है, पलता बढ़ता है और जवान होता है और हर चीज़ का यही तक़ाज़ा होता है कि वह यही ज़िन्दगी गुज़ारे। अब वह सारी बातें पेश आती हैं जिनका कुरआन मजीद ने अपने साफ़, स्पष्ट, व्यापक और चकित कर देने वाली शैली में उल्लेख किया है। इनमें हज़रत इब्राहीम (अ0) का बुतों को तोड़ना, पुजारियों की इस पर सख़्त नाराज़गी, हैरत, लाचारी और इस बाग़ी नौजवान से बदला लेने की शिक्षा, उनके लिए अलाव जलाना और उसका हज़त इब्राहीम (अ0) के हक़ में ठंडा औ सलामती का कारण बन जाना, जाबिर बादशाह के सामने हज़रत इब्राहीम (अ0) का सारगर्भित सवाल व जवाब सब चीज़ें शामिल हैं।

यह इन्कार और बग़ावत इस नतीजे तक पहुंचती है कि सारा शहर

1. ईश्वर के साथ किसी को साझी बनाने का कार्य (अनु0)

उनका दुश्मन हो जाता है। पूरी सोसाईटी उनसे नाराज़ नज़र आती है। हुकूमत भी उनका पीछा करती है और यातना देती है लेकिन वह इनमें से किसी की भी परवाह नहीं करते और इसको कोई महत्व नहीं देते। ऐसा मअ़लूम होता है कि जैसे वह इसकी प्रतीक्षा में थे और इन परिणामों की प्रत्याशा में थे। वह अपने शहर से ठंडे दिल व दिमाग़ के साथ बहुत खुश और सन्तुष्ट होकर हिजरत करते हैं, चले जाते हैं, इस लिए कि उनकी अस्ल पूंजी अर्थात ईमान की दौलत उनके हाथ में होती है, वह अकेले और बेयार व मददगार सफ़र करते हैं। उनके साथ एक आदमी भी नहीं होता। इस सफ़र में उनको इन्सानों का एक ही नमूना नज़र आता है। वही बुत परस्ती, शिर्क व जिहालत (अज्ञानता) और वासनाओं की गरम बाज़ारी जिस को छोड़कर चले थे, हर जगह उनको मिलती है। वह मिस्र पहुंचते हैं और वहां बड़े अपमान का सामना करना पड़ता है, वह अपनी पत्नी को जिन पर बादशाह की बुरी नज़र थी, लेकर कामयाबी के साथ वहां से निकल जाते हैं। इसके बाद शाम पहुंचते हैं, सीरिया की जलवायु उनको रास आती है और वहीं बस जाते हैं और तौहीद (अद्वैतवाद) की दावत और बुत परस्ती की निन्दा का कार्य दोबारा शुरू कर देते हैं।

सीरिया में जहां, हरियाली और खाद्यान्न के साधन प्रचुर मात्रा में थे और जहां नैसर्गिक सुन्दरता भी थी, उनका जी लगता है। लेकिन शीघ्र ही उनको एक ऐसे भूखण्ड की ओर जाने का हुक्म मिलता है जो हिरयाली और शादाबी में सीरिया के बिल्कुल विपरीत है। लेकिन हज़रत इब्राहीम (अ0) अपना कोई हक़ नहीं समझते और किसी क्षेत्र और वतन से उनको लगाव नहीं, वह हुक्म के बन्दे हैं, और सारी दुनिया को अपना वतन समझते और वसुधैव–कुटुम्बकम् के पक्षधर हैं। उनको हुक्म मिलता है कि अपनी पत्नी हाजिरा और दुध पीते बच्चे को लेकर यहां से हिज़रत कर जाएं।

एक ऐसी घाटी में पहुचंने के बाद जिस के चारों ओर जले हुए पहाड़ों के अलावा कुछ न था, जहां की जलवायु और मौसम बहुत सख़्त, पानी का आभाव, हर तरफ़ सन्नाटा था और कोई दोस्त व हमदर्द भी न था

जिससे दिल को सन्तोष मिलता, उनको यह हुक्म मिलता है कि अपनी कमज़ोर पत्नी और अपने छोटे बच्चे को अल्लाह के भरोसे और मात्र उसके हुक्म की तामील में छोड़कर यहां से चले जाएं। और इस तरह कि न आतुरता हो, न डर, न घबराहट, न बेदिली और न उकताहट, न अधीरता, न अल्लाह के वादे में शंका, बल्कि इसके बजाय मानवीय अनुभवों के विरूद्ध बगावत, प्राकृतिक संसाधनों का विरोध, साधनों से निश्चिन्त और अलग–थलग, और अल्लाह पर उस समय भरोसा हो जब क़दम फ़िसलने लगें और बदगुमानी पैदा होने लगे।

उनके जाने के बाद स्वाभाविक रूप से यह सब बातें घटित होती हैं जिनका डर था। बच्चा प्यास से बेताब हो जाता है, और मां भी प्यासी हो जाती है। लेकिन इस बियाबान में पानी कहां, वहां तो छोटे–छोटे गढ़े भी न थे जिनमें बचा खुचा पानी मिल जाता। मां की ममता जोश मारती है। उनको ख़तरे का एहसास होने लगता है और वह पानी की तलाश में या किसी ऐसे क़ाफ़िले की तलाश में जिस के पास पानी मिल जाये, बेताब व बेक़रार हो कर प्रेमपूर्वक दो पहाड़ियों के बीच में दौड़ने लगती हैं दूसरी पहाड़ी के पास पहुंचने के बाद फ़ौरन बच्चे का ख़्याल आता है कि वह न जाने किस हाल मे हो, इस लिए रूके बिना फिर दोबारा वापस आकर इत्मीनान करती हैं कि वह बच्चा ज़िन्दा और खुशहाल है। इसके बाद फिर रहा नहीं जाता है वह दोबारा फिर उसी पहाड़ी ओर दौड़ती जाती हैं कि शायद कहीं कोई आदमी नज़र आ जाये या किसी जगह पानी दिखाई पड़ जाये। एक ओर वह बेताब व बेक़रार होती हैं दूसरे ओर वह धीरज नहीं खोती। यद्यपि वह नबी की पत्नी और नबी की मां हैं, बाह्य साधनों और प्रयास व तदबीर को ईमान व धैर्य के विपरीत नहीं समझती। वह बेक़रार अवश्य हैं किन्तु तनिक भी निराश नहीं। खुदा पर पूरा भरोसा है लेकिन थक हार कर बैठ नहीं जातीं। ऐस दृश्य शायद आसमान ने कभी नहीं देखा था। अल्लाह की रहमत जोश में आई और चमत्कार यह हुआ कि एक स्रोत वहां फूट पड़ा, यह वह ज़मज़म का पवित्र और अमिट स्रोत है जो न कभी सूखता है न इसमें कोई कमी आती है। वह सारी दुनिया और तमाम नस्लों के लिए

काफ़ी है और आज तक सारी दुनिया उससे लाभान्वित हो रही है। अल्लाह ने इसके पानी को स्वास्थ्यवर्धक भी बनाया है, इसमें पौष्टिकता भी है, सवाब भी और बरकत भी।

अल्लाह ने हज़रत हाजिरा की इस बेक़रारी को ऐसा दर्जा दिया कि दुनिया के बड़े से बड़े बुद्धिमान और विचारक को और बड़े से बड़े बादशाह को इसका पाबन्द कर दिया, फलतः जब तक इन दो पहाड़ियों के बीच 'सअ़ी' न कर लें उनका हज पूरा नहीं हो सकता। यह दोनों पहाड़ियां वास्तव में हर लौ लगाने वाले की मंज़िल है, और यह 'सअ़ी' इस दुनिया मे मोमिन (सत्यवान) के नज़रये की बेहतरीन मिसाल है, क्योंकि वह भी बुद्धि और भावना और एहसास व अक़ीदे का संगम होता है, वह अ़क्ल से भी पूरी तरह काम लेता है लेकिन कभी कभी अपनी उन भावनाओं के सामने भी माथा टेक देता है जिन की जड़ें अ़क्ल से भी ज़्यादा गहरी और मज़बूत होती हैं। वह एक ऐसी दुनिया में रहता है जो प्रेरणा, वासना, श्रृंगार व सजावट और घटाओं से भरी हुई है लेकिन सफ़ा व मरवा पहाड़ियों के बीच सअ़ी करने वाले की तरह वह किसी तरफ़ नज़र उठाये और किसी और चीज़ में अटके बिना और किसी दूसरी जगह ठहरे बिना तेज़ी के साथ वहां से गुज़र जाता है। उसको सबसे अधिक चिन्ता अपने लक्ष्य और अपने भविष्य की होती है। वह अपनी ज़िन्दगी के कुछ गिने चुन चक्करों की तरह समझता है। यहां उसके सारे क्रिया–कलाप का निचोड़ दो शब्दों में 'प्रेम'' और ''ताबेदारी'' है।

अब यह बच्चा ''इस्माईल'' कुछ सयाना होता है और उस उम्र को पहुंचता है जब बाप को अपने बच्चे से स्वाभाविक रूप से अधिक लगाव होता है, वह अपने बाप के साथ बाहर जाता है, उनके साथ दौड़ता भागता है और साथ–साथ रहता है उनके पिता जिनमें इन्सानी हमदर्दी कूट–कूट कर भरी थी, अपनी आंखों की ठंडक और जिगर के टुकड़े से बड़ा प्रेम रखते हैं, और यही सबसे बड़ी मुश्किल है। मुहब्बत को सब कुछ गवारा है, शिर्कत गवारा नहीं, वह प्रतिद्वन्दी को कभी सहन नहीं कर सकती, यह आ़म इन्सानी मुहब्बत का हाल है तो यहां तो मामला अल्लाह की मुहब्बत का था, हज़रत

ख़लील का दिल अल्लाह के लिये मखसूस है। यह वह मौक़ा है जब हज़रत इब्राहीम (अ०) को अपने प्यारे बेटे की कुरबानी का इशारा मिलता है। नबियों का स्वप्न "वही" के बराबर होता है, इस लिए जब कई बार उनको इशारा मिलता है तो वह समझ गये कि अल्लाह की यही मन्शा है और उनका यह काम करना है। वह अपने बेटे का इम्तिहान लेते हैं क्योंकि यह काम उनकी रज़ामन्दी के बिना कर पाना कठिन है। बेटा भरपूर धैर्य का आश्वासन देता है। कुरआन मजीद में इरशाद है।

अनुवाद– "उन्होंने कहा, बेटा मैंने स्वप्न देखा है कि मैं तुम्हें ज़ब्ह कर रहा हूं, सो तुम भी सोच लो, तुम्हारी क्या राय है। वह बोले, ऐ मेरे बाप आप कर डालिये जो कुछ आप को हुक्म मिला है, आप इन्शा अल्लाह मुझे सब्र करने वालों में पाएंगे।"

(सूरः साफ़्फ़ात–102)

अब वह बात पेश आती है जिसके सामने अक़्ल हैरान है। बाप अपने प्यारे बेटे को लेकर बाहर निकलते हैं और खुदा के इशारे पर अपने बेटे की कुरबानी करने जा रहे हैं और यह भी अपने रब के और अपने पिता के आज्ञापालन में उनके साथ चल रहे हैं, दोनों का उद्देश्य एक है अपने मालिक का हुक्म बजा लाना, और बिना हीला हवाला उस के आगे सर रख देना। रास्ते में उनको शैतान मिलता है जिसने इन्सान को हमेशा बहकाने की कोशिश की है, वह उनको बहकावे मे डालता है, उनका हमदर्द बनकर उन्हें अपने इरादे से मुकरने की कोशिश करता है, लेकिन वह उस की एक नहीं चलने देते, और अल्लाह के हुक्म की तअ़मील के लिए कमर कस लेते हैं। अब वह क्षण आते हैं जिसको देखकर फरिश्ते भी बेचैन हो जाएं और दानव और मानव भी। वह अपने लड़के को ज़मीन पर लिटा देते हैं और ज़ब्ह करने की पूरी कोशिश करते हैं, अब अल्लाह की मर्ज़ी बीच में हस्तक्षेप करती है, इसलिए कि उद्देश्य हज़रत इस्माईल का ज़ब्ह करने का नहीं था बल्कि उस मुहब्बत को ज़ब्ह करना था जो खुदा की मुहब्बत में शरीक हो जाती है। और प्रतिद्वन्दी बनने लगती है, और यह मुहब्बत गले पर छूरी रखते ही ज़ब्ह हो चुकी थी हज़रत इस्माईल तो इस लिए पैदा हुए थे कि

वह ज़िन्दा रहें, फूलें फलें, उनसे नस्ल चले और अन्तिम नबी हज़रत मुहम्मद सल्ल० भी उन ही की सन्तान में हों, इस लिए वह अल्लाह की मर्ज़ी पूरी होने से पहले ही ज़ब्ह कैसे हो सकते थे। अल्लाह ने हज़रत इस्माईल के "फ़िदय:"[1] के तौर पर जन्नत से एक मेंढ़ा भेजा ताकि उसको उनकी जगह ज़ब्ह करो और हज़रत इब्राहीम (अ0) के तमाम अनुयायी और उनके बाद की तमाम नस्लो के लिए सुन्नत बना दिया।

कुरबानी के दिनों में इसी "महान बलिदान" (अज़ीम कुरबानी) की याद ताज़ा करते हैं और अल्लाह के रास्ते में अपने मालों को ख़र्च कर के कुरबानी देते हैं।

अनुवाद– "फिर जब दोनों ने हुक्म को स्वीकार कर लिया और (बाप ने बेटे को) करवट पर लिटा दिया, और हमने तुम्हें आवाज़ दी ऐ इब्राहीम तुम ने ख़्वाब को सच कर दिखाया (वह समय ही अजब था) हम सच्चों को ऐसे ही बदला दिया करते हैं, बेशक यह भी खुला हुआ इम्तिहान, और हमने एक बड़ा ज़बीहा उसके बदले में दिया, और हमने पीछे आने वालों में यह बात रहने दी कि इब्राहीम पर सलात हो।"

(सूर: साफ़्फ़ात–103–109)

हज़रत इब्राहीम (अ0) और शैतान के इस क़िस्से को भी अल्लाह ने अमर बना दिया और उन जगहों पर जहां शैतान उनका रास्ता रोक रहा था और उनको बहका रहा था, कंकरियां मारने का हुक्म दिया और इसको हज की एक क्रिया बना दिया। इसका उद्देश्य यह है कि शैतान से नफ़रत पैदा हो, उससे बग़ावत की अभिव्यक्ति हो। यह वह अदा है जिस में एक मोमिन को बड़ी लज़्ज़त महसूस होनी चाहिए। कहानी के इस किरदार (आचरण) को दोहराते समय उसको यह महसूस होता है कि वह बुराई की ताक़तों के साथ संघर्षरत है।

---

1. वह धन जो किसी क़ैद की मुक्ति के लिए दिया जाए, वह व्यक्ति जो किसी व्यक्ति के बदले मे अपनी जान दें। (अनुवादक)

अब इस घटना पर एक ज़माना गुज़र जाता है, यह बच्चा अब जवान हो चुका है। अल्लाह ने उसे पैग़म्बरी दी है। हज़रत इब्राहीम (अ0) के इस दीन के लिए अब एक ऐसे केन्द्र की ज़रूरत थी जिससे ईमान को बल मिलता, सम्बल प्राप्त होता इस दुनिया में बादशाहों के महल और बुतों के घर तो बहुत थे, लेकिन अल्लाह की ज़मीन पर अल्लाह ही की इबादत के लिए अब तक कोई घर न था। जिसमें सत्यनिष्ठा के साथ पूजा होती और उसकी इबादत करने वालों और ज़ियारत (दर्शन) करने वालों के लिए हर प्रकार के प्रदूषण और अपवित्रता से पाक व साफ़ रखा जाता। अब जब कि दीन अपने पैरों पर खड़ा हो गया है और मुस्लिम उम्मत की बुनियाद पड़ चुकी है, हज़रत इब्राहीम (अ0) को कअ़बे के निर्माण का निर्देश दिया जाता है। एक ऐसा घर जो सारी मानवता के लिए अमन का गहवारा (केन्द्र) हो, और जहां केवल अल्लाह की इबादत की जाये बाप बेटे दोनों मिलकर इस पवित्र घर का निर्माण करते हैं, जो देखने में बहुत सादा और मामूली है लेकिन अपनी बड़ाई के लिहाज़ से बहुत बुलन्द है। बाप बेटे दोनों पत्थर ढोते हैं और उसकी दीवारें उठाते हैं। यह घर ईमान व निष्ठा की उन बुनियादों पर क़ायम किया गया जिसकी नज़ीर दुनिया में और कहीं नहीं मिलती। अल्लाह ने उसे खूब–खूब चाहा, उसे अमर बनाया, उसको सौन्दर्य दिया और उसे दुनिया के लिए आकर्षण का केन्द्र बना दिया। लोग वहां सर के बल बल्कि आंखों और पलकों के बल आते हैं और उस पर जान व दिल निसार करते हैं, यह घर हर प्रकार के दिखावे और सजावट से खाली है और एक ऐसी नगरी मे स्थित है जो सभ्यता और संस्कृति के हंगामों से बहुत दूर है लेकिन फिर भी इसमें वह आकर्षण है कि लोग इसकी तरफ़ खिंच खिंच कर टूटे पड़ते हैं और इसकी एक झलक देखने के लिए बेताब रहते हैं जब वह घर बनकर तैयार हो गया तो ग़ैब (अदृश्य) से यह सदा आई, आकाशवाणी हुई –

अनुवाद– "और लोगों मे हज़ का एलान कर दो, लोग तुम्हारे पास पैदल भी आएंगे और दुबली ऊंटनियों पर भी जो दूर दूर से आई होंगी ताकि अपने लाभ के लिए आ मौजूद हों" और ताकि सात

दिनों में अल्लाह का नाम लें उन चौपाओं पर जो अल्लाह ने उन्हें दिये हैं, बस तुम भी उसमें से खाओ और दुखियारों को भी खिलाओ, फिर लोगों को चाहिए कि मैल कुचैल दूर करें और अपने वाजिबात को पूरा करें और चाहिए कि इस प्राचीन घर का तवाफ़ (परिक्रमा) करें।

(सूरः हज–27,28,29)

हज़रत इब्राहीम (अ०) के ज़माने में यह दुनिया कारणों की गुलाम थी और लोग इन पर आवश्यकता से अधिक भरोसे करने लगे थे बल्कि यह समझ बैठे थे कि उनका अपना अस्तित्व है और प्रभावशाली है फलतः इन कारणों (असबाब) ने पालनहारों (अर्बाब) का स्थान ले लिया। इस चीज़ ने एक नई बुतपरस्ती पैदा कर दी। हज़रत इब्राहीम का जीवन वास्तव में इन्हीं "बुतगरों" और "बुतपरस्तों" के विरूद्ध बग़ावत थी। वह विशुद्ध अद्धैतवाद (तौहीद) और अल्लाह की पूरी कुदरत पर ईमान की दअ़वत थी, आह्वान था और इस बात का खुला ऐलान कि वही तमाम चीज़ों को अस्तित्व प्रदान करता है, वही असबाब को पैदा करता है, और वही उनका मालिक है वह जब चाहता है असबाब को असबाब पैदा करने वाले से विलग करता है और चीज़ों से उनके गुणों को समाप्त कर देता है और उनसे वह चीज़ों प्रकट होती हैं जो उसकी विरोधी होती हैं, उसको जब चाहता है और जिस चीज़ के लिए चाहता है, प्रयोग करता है और जिस काम पर चाहता है लगा देता है। लोगों ने हज़रत इब्राहीम (अ०) के लिए भट्टी तैयार की और कहा–

अनुवाद– "इन्हें तुम जला दो और अपने माबूदों का बदला ले लो अगर तुम्हें (कुछ) करना है।"

(सूरः अंबिया–68)

लेकिन हज़रत इब्राहीम (अ०) जानते थे कि आग अल्लाह के इरादे के अधीन है, जलाना उसका स्थायी गुण नहीं जो कभी उससे अलग नहीं हो सकता, यह एक गुण है जिसे अल्लह ने उसमें अमानत के तौर पर रखा है, उसकी लगाम उसी के हाथ में है जब चाहे ढील देदे और जब चाहे खींच ले और उसी को देखते देखते चमन बना दे, इस ईमान व यक़ीन के साथ

वह उसमें इत्मीनान के साथ प्रवेश कर गये और वही हुआ जो उन्होंने सोचा था।

अनुवाद– "हमने हुक्म दिया ऐ आग तू ठंडी और अराम देने वाली हो जा इब्राहीम के हक़ में। और लोगों ने उनके साथ बुराई करनी चाही थी, सो हमने उन्हीं (लोगों) को नाकाम कर दिया।"

(सूरः अंबिया–69–70)

सामान्यतः यह समझा जाता है कि जीवन पानी, उपजाऊ मिट्टी और खेत व बागों पर क़ाइम है, अतएव इन दिनों भी लोग अपने बुतों और ख़ानदानों के लिए ऐसे क्षेत्र की खोज में रहते थे जहां यह चीज़ें उपलब्ध हों और जहां बसा जा सके। हज़रत इब्राहीम (अ0) ने एक विश्वास के विपरीत काम किया उन्होंने अपने छोटे से परिवार के लिए जिसमें पुत्र और पत्नी शामिल थे एक ऐसी ग़ैर आबाद घाटी का चयन किया जहां पानी नहीं था न ही कुछ उगता था, न व्यापार का अवसर जो अलग थलग व्यापारिक केंद्रों और राजमार्गों से दूर स्थित यहां पहुंचकर उन्होंने अल्लाह से दुआ की कि वह उनकी रोज़ी रोटी में बरकत दे, दिलों को उनकी ओर फेर दें और हर प्रकार के खाने पीने की चीज़ें और फल वहां पहुंचते रहें। उन्होंने दुआ की :–

अनुवाद– "ऐ हमारे परवरदिगार मैंने अपनी कुछ औलाद को एक ग़ैर खेती वाले मैदान में आबाद कर दिया है, तेरे महान घर के निकट, इसलिए कि वे लोग नमाज़ पढ़ें, सो तू कुछ लोगों के दिल इनकी तरफ फेर दे, और उन्हें खाने को फल दे जिससे यह शुक्रगुज़ार रहें।"

(सूरः इब्राहीम–37)

अल्लाह ने उनकी दुआ कुबूल फ़रमायी और उनके शहर को हर प्रकार के फलों और अपने विभिन्न वरदानों से भर दिया–

अनुवाद– "क्या हमने उनको अमन व अमान करने वाले हरम में जगह नहीं दी जहां हर प्रकार के फल खिंचे चले आते हैं, हमारे पास से बतौर खाने के, लेकिन इन में से अक्सर लोग (इतनी बात

भी) नहीं जानते।"

(सूरः क़सस–57)

हज़रत इब्राहीम (अ0) ने अपने घर वालों को एक ऐसी ज़मीन में लाकर छोड़ दिया जहां हलक़ तर करने के लिए पानी भी न था, किन्तु ऐसी रेगिस्तानी और पथरीली ज़मीन से अल्लाह ने एक सोता– जारी कर दिया। रेत से पानी स्वतः उबलने लगा, और आज तक उसी प्रकार जारी है। लोग जी भर के उसको पीते हैं और पीपे भर कर अपने साथ ले जाते हैं।

वह अपने घर वालों को एक ऐसी वीरान और ग़ैर आबाद जगह छोड़ देते हैं जहां आदमी का साया भी नज़र नहीं आता लेकिन देखते देखते वह जगह ऐसी आबाद हो जाती है कि दुनिया के हर इलाक़े के लोग वहां देखे जा सकते हैं हज़रत इब्राहीम (अ0) का जीवन उनके युग की सोसाइटी की हद से बढ़ी हुई भौतिकवादिता के विरूद्ध एक चुनौती था और ईश्वरीय ताक़त पर भरपूर भरोसे की अभिव्यक्ति अल्लाह हमेशा असबाब (कारण) को ईमान के अधीन बना देता है।

हज हज़रत इब्राहीम (अ0) के कर्मों की यादगार है

हज और उससे सम्बन्धित तमाम क्रिया–कलाप वस्तुतः तौहीद (अद्वैतवाद), अल्लाह पर भरोसा, उसके रास्ते में कुरबानी, कारणों को नकारने और खुदा के आज्ञापालन और खुशनूदी को अपने जीवन में उतारने की कोशिश का नाम है। वह आदत, रस्म व रिवाज, झूठे स्टेन्डर्ड, बनावटी मुल्यों के विरूद्ध एक खुली हुई बग़ावत और ईमान, सच्चे प्रेम, अद्धितीय त्याग व बलिदान व निःस्वार्थ भावना का नवीनीकरण है। वह हज़रत इब्राहीम (अ0) के रास्ते पर चलने, और उनकी शिक्षा व दअ़वत के झंडे को ऊंचा रखने की दअ़वत है।

हज का वातावरण अध्यात्मक पाकीज़गी से इस क़दर भरा होता है कि कठोर से कठोर ह्रदय भी मोम और पत्थर जैसे दिल भी पानी हो जाते हैं। वह आंखें जिन से कभी भय या प्रेम के दो आंसू भी न टपकते थे, मक्का पहुंचकर रो पड़ती हैं। ठंडे दिलों में एक बार फिर गरमाहट आ जाती है

और अल्लाह की रहमत बरसती है, शैतान को मुंह छिपाने की भी जगह नहीं मिलती।

हज के दिनों में वातावरण को मानो किसी करन्ट ने छू लिया हो। दूर–दूर से आने वाले मुसलमान वीरान और ख़ाली दिलों को फिर से आबाद करते हैं। वह स्वयं भी ईमान, प्रेम और उल्लास का ख़ज़ाना लूटते हैं। और अपने देश वापस जाकर अपने दूसरे भाइयों को भी उनसे लाभान्वित करते हैं। हज अज्ञानी में ज्ञान का शौक पैदा करता है, कमज़ोरों के हौसले बुलन्द करता है निराश लोगों को आशावान बनाता है।

इस्लामी भाईचारे की अभिव्यक्ति

हज इस्लामी भाईचोर की अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करता है, यह देश, जाति, भाषा और इलाक़ाई इकाईयों के विरूद्ध इस्लामी क़ौमियत की जीत है। मक्का पहुंचकर तमाम हाजियों का एक पहनावा होता है जिसे "इहराम" कहते हैं जो मात्र दो बिना सिली हुई चद्दरें होती हैं, हज के दिनों में सारे हाजियों का एक ही तराना होता है :

अनुवाद– "ऐ मेरे अल्लाह मैं हाज़िर हूं। तेरा कोई शरीक नहीं, मैं हाज़िर हूं। सारी तारीफें और नेअ़मतें तेरे लिए ज़ेबा हैं और हुकूमत व बादशाहत भी, तेरा कोई शरीक नहीं।"

इन में हाकिम व महकूम आक़ा व नौकर, अमीर व फ़क़ीर और छोटे बड़े का कोई भेद–भाव नहीं होता यही हाल हज के सारे कार्यों का है। सफ़ा और मरवा की दो पहाड़ियों के बीच सब साथ दौड़ते हैं, मिना सब साथ सफ़र करते हैं अरफात साथ जाते हैं। सब एक साथ वापस आते हैं, एक साथ चलते हैं, एक साथ ठहरते हैं।

हज एक निश्चित अवधि में मक्का में ही अदा होता है

हज उन्हीं मुसलमानों पर फ़र्ज़ है जिनके पास हज के सफ़र का पूरा ख़र्च और बाल–बच्चों के लिए इतना ख़र्च हो कि वह उसके पीछे

गुज़ारा कर सकें। रास्ते का अम्न कअ़बा शरीफ़ तक पहुंचने के साधन और इतनी सिह़त व कुव्वत (स्वास्थ्य) भी ज़रूरी है कि यह सफ़र किया जा सके।

हज की इबादत का सम्बन्ध मक्का और उसके पास स्थित मिना और अरफ़ात के स्थलों से है। हज के मनासिक (कृतियों व संस्कार) वहीं अदा होते हैं और यह मनासिक ज़िलहिज्जः की आठ तारीख़ से बारह तारीख की अवधि में अदा किये जाते हैं। इसके अलावा किसी अवधि अथवा स्थान पर ह़ज अदा नहीं हो सकता। ह़ज अल्लाह के दो प्रिय पैग़म्बरों इब्राहीम व ह़ज़रत इस्माईल (अ0) की तौह़ीद की भावना, गहरा प्रेम और उनके त्याग व बलिदान की यादगार और उनके आ़शिक़ाना अमल की नक़्ल है।[1]

1. इस्लाम के इन अरकान (स्तम्भ) के विस्तृत वर्णन के लिए लेखक की पुस्तक "अरकाने अर्बअ़" देखें जिसे अकेडमी आफ़ इस्लामिक रिसर्च एण्ड पब्लिकेशन, पो0 बाक्स 119, नदवा, लखनऊ (से प्राप्त किया जा सकता) ने प्रकाशित किया है।

अध्याय–दो

मुसलमानों की कुछ धार्मिक विशेषताएं

1. एक निश्चित विश्वास और शरीअ़त

दुनिया के तमाम मुसलमानों की पहली विशेषता यह है कि उनके अस्तित्व की बुनियाद एक निश्चित विश्वास और शरीअ़त पर है। जिसको संक्षेप में मज़हब कहते हैं।[1] उनकी मिल्लत का नाम और विश्वव्यापी पदवी किसी नस्ल, ख़ानदान, धार्मिक नेता, धर्म के संस्थापक और देश के बजाय एक ऐसे शब्द से लिया गया है जो एक निश्चित विश्वास को व्यक्त करता है। दुनिया की मज़हबी क़ौमें प्रायः अपने–अपने धार्मिक नेताओं, संस्थापकों, पैग़म्बरों, मुल्कों के नाम से लिये गये हैं। जैसे यहूदी, यहूद और बनी इस्राईल कहलाते हैं। यहूद हज़रत याकूब के बेटों में से एक बेटे का नाम और इस्राईल स्वयं हज़रत याकूब अलै० का नाम है। ईसाई पैग़म्बर ईसा के नाम से जुड़ा है, कुरआन में इन्हें 'नसारा' के नाम से भी याद किया गया है, नासिरा पैग़म्बर मसीह के वतन का नाम है। मजूसियों के धर्मावलम्बियों का, जिन को आ़मतौर पर हिन्दुस्तान में पारसी कहा जाता है, सही नाम ज़ोरास्ट्रियन अथवा ''ज़रतशती'' है जो इस धर्म के संस्थापक ''ज़रतश्त'' से लिया गया है। 'बौद्धमत' अपने संस्थापक ''गौतमबुद्ध'' से बना है।

मुसलमानों को कुरआन और धार्मिक व साहित्य किताबों में ''मुस्लिमून''

---

1. दुनिया के अनेक धर्म विशेषकर ईसाई दुनिया में जो विशेष अनुभवों और आज़माइशो से गुज़रा है और जहां स्टेट जीवन के तमाम संकायों पर हावी है और जिसका प्रारम्भ से ही यह कथन रहा है कि जो कुछ खुदा का है, वह खुदा को दो और जो कुछ राजा का है वह राजा को दो, धर्म का एक सीमित दायरा रह गया है, और वहां साधारणतः यह सच्चाई स्वीकार कर ली गई है कि धर्म मनुष्य का प्राइवेट मुआ़मला है। इस प्रकार भारत में भी बहुत जगह धर्म मात्र उपासना और कुछ संस्कारों की पूर्ति का नाम रह गया है। इस्लाम में धर्म का अर्थ इससे कहीं अधिक व्यापक और हावी है।

और "उम्मते मुस्लिमा" के नाम से याद किया गया है, और अब भी दुनिया के हर कोने में वह "मुस्लिम" के नाम से जाने पहचाने जाते हैं। "मुस्लिम" शब्द "इस्लाम" की ओर निस्बत है। मुसलमानों की निस्बत शब्द 'इस्लाम' की तरफ़ है। "मुस्लिम" का अर्थ है ख़ुदा की बादशाही के सामने अपने को हवाले कर देना, सरेन्डर कर देना। यह एक निश्चित संकल्प, एक निर्धारित रवय्या, जीवन शैली और जीवन–डगर है। वह अपने पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद से गहरा सम्बन्ध और घनिष्ठ लगाव रखने के बावजूद एक क़ौम की हैसियत से मोहम्मदी नहीं कहलाते। हिन्दुस्तान में पहली बार अंग्रेज़ों ने उनको "मोहम्मडन्स" और उनके कानून को "मोहम्मडन लॉ" का नाम दिया, लेकिन उन लोगों ने जो इस्लाम की स्प्रिट से वाक़िफ़ और उसके जानकार थे, इस पर आपत्ति की, और अपने लिए उसी पुराने लक़ब (उपनाम) "मुस्लिम" को प्राथमिकता दी, और उन संस्थानों को जिनका नाम अंग्रेज़ी के प्रारम्भिक शासन काल में मोहमडन कालेज या मोहम्डन कान्फ्रेंस पड़ गया थ, मुस्लिम से बदल दिया।[1]

अक़ीदा (विश्वास और आस्था) और शरीअ़त मुसलमानों की पूरी जीवन व्यवस्था, सभ्यता, व समाज में बुनयादी महत्व रखते हैं और वे स्वाभाविक रूप से इनके मुआ़मले में असाधारण रूप से संवेदनशील (सेन्सेटिव) होते हैं। उनकी व्यक्तिगत और सामूहिक समस्याओं पर विचार करने तथा कानून बनाने यहां तक कि सामाजिक और नैतिक मुआ़मलों में इस बुनयादी तथ्य को सामने रखने की ज़रूरत है। यह बात भी ध्यान में रखने की है कि उनके पर्सनल लॉ का असल और बुनियादी हिस्सा कुरआन से उद्धरित है और उसकी विवेचना हदीस व फ़िक़्ह की किताबों में की गई है।

मुस्लिम पर्सनल लॉ मुसलमानों की शरीअ़त व मज़हब का हिस्सा है और कुरआन व हदीस से साबित है, किसी सामाजिक प्रयोग अथवा

1. उदाहरणार्थ स्वरूप सर सैय्यद अहमद खां द्वारा स्थापित "मदरसतुल उलूम" अलीगढ़ का नाम पहले "एंग्लो मोहमडन कालेज" था, जब यूनिवर्सिटी क़ायम हुई तो उसका नाम मुस्लिम यूनिवर्सिटी रखा गया, इसी प्रकार अलीगढ़ के विख्यात सम्मेलन का नाम प्रारम्भ में "मोहमडन एजूकेशनल कान्फ्रेंस" था। बाद में उसको मुस्लिम एजुकेशनल कान्फ्रेंस के नाम से लिखा और याद किया जाने लगा।

सामाजिक विज्ञान के अध्ययन अथवा बुद्धिजीवी वर्ग, कानून बनाने वालों और समाज सुधारकों की देन नहीं है, इसलिए कोई मुसलमान हुकूमत भी इसमे संशोधन नहीं कर सकती, वह इसलिए भी मज़हब का हिस्सा है और उसे व्यवहार में लाना हर मुसलमान के लिए ज़रूरी है कि इस्लाम में मज़हब का दाइरा धर्म की परिधि विश्वास व उपासना तक सीमित नहीं, वह पारस्परिक सम्बन्धों, कर्तव्य–अधिकार और सभ्यता व समाज पर हावी है, इसलिए यदि मज़हब को सभ्यता व समाज से और सभ्यता व समाज को मज़हब से अलग कर दिया जाये तो मज़हब बेअसर, सीमित और कमज़ोर और सभ्यता व समाज बेनकेल का ऊंट बन जाते हैं और स्वार्थ तथा कामना उन पर हावी हो जाते हैं।

इनमें से कुछ अंश कुरआन में इतना स्पष्ट आया है या उस को निरन्तर इस प्रकार व्यवहार में लाया जाता रहा है और उस पर मुस्लिम विद्वानों का ऐसा मतैक्य रहा है कि उस का इन्कार करने वाला अब क़ानून के लिहाज़ से इस्लाम के दायरे से ख़ारिज समझा जायेगा। भले ही उसकी विवेचना और व्यवहारिकता में कितना ही ज़माने का लिहाज़ किया जाये, इसमें संशोधन, परिवर्तन अथवा परिवर्धन का प्रश्न ही नहीं उठता। इस मुआमले में किसी मुस्लिम बाहुल्य देश की निर्वाचित सरकार और विधायिका को भी किसी परिवर्तन का अधिकार नहीं, और मान लो यदि ऐसा किया गया अथवा करने का इरादा है तो एक काट–छाँट और धर्म में हस्तक्षेप का पर्याय है।

अलबत्ता जो मसाइल इज्तिहादी हैं, और जिन में समय के परिवर्तन के साथ बराबर लचक पैदा की जाती रही है और उनको, मुस्लिम विद्वान और फ़िक़्ह के माहिर जो इस के लिए सक्षम हैं अपने इरादा और इख़्तियार और आवश्यक विचार–विमर्श के बाद, नई परिस्थितियों की रिआयत करते हुए, समय और व्यवहारिक जीवन के अनुरूप बना सकते हैं। यह प्रक्रिया इस्लाम के इतिहास में हर युग में जारी रही है, और मुसलमानों की अन्तिम पीढ़ी तक ज़रूरी है।

2. पवित्रता (तहारत) की विशिष्ट परिकल्पना और व्यवस्था

स्वच्छता क्लीनलीनेस और पवित्रता में अन्तर है। स्वच्छता का अर्थ है कि शरीर पर मैल कुचैल न हो, कपड़े साफ़–सुथरे हों। पवित्रता का अर्थ यह है कि शरीर या कपड़ों में पेशाब, पाख़ाना (मल–मूत्र) या ऐसी गन्दी चीज़ें जैसे शराब की बूंद, ख़ून, कुत्ते की राल आदि पशुओं का गोबर अथवा चिड़ियों की बीट आदि नहीं लगी है। अब यदि शरीर अथवा कपड़े पर एक छींट भी लग जाये, या रक्त की कोई बूंद, या गोबर, बीट आदि लगी हो तो शरीर कितना ही साफ़ कपड़े कितने ही उजले क्यों न हों मुसलमान पवित्र (ताहिर) नहीं होगा और इस शरीर और कपड़े के साथ नमाज़ नहीं पढ़ सकेगा। इसी प्रकार यदि उसने पेशाब और पाख़ाने के बाद इस्तिन्जा[1] नहीं किया है, या उसे नहाने (स्नान) की ज़रूरत है तो वह नजिस (अपवित्र) है नमाज़ नहीं पढ़ सकता।

यही हुक्म बर्तनों, फ़र्श और ज़मीन का है कि यह ज़रूरी नहीं है कि अगर साफ़ सुथरे और बेदाग़ हों तो वह ताहिर (पवित्र) भी हों, इन चीज़ों के लग जाने से जिन का उल्लेख ऊपर आया है, इनमें से कोई चीज़ बिना पाक किये पवित्र नहीं होगी और वह प्रयोग के योग्य नहीं बनेगा।

3. तीसरी विशेषता आहार की व्यवस्था

मुसलमान खाने पीने और पशुओं व पक्षियों के माँस के प्रयोग में आज़ाद नहीं है कि वे जो चाहें खाएं पियें। उनके लिए कुरआन और शरीअत में हलाल व हराम, अवर्जित व वर्जित के बीच एक लकीर खींच दी गई है, वह इसका उल्लंघन नहीं कर सकते। पशुओं और पक्षियों के बारे में वह इसके पाबन्द हैं कि उनको बिना शरअ़ी तरीक़े पर ज़बह किये और ज़बह के समय अल्लाह का नाम लिए बिना उसका प्रयोग नहीं कर सकते। अगर कोई जानवर शरअ़ी तरीक़ों पर जबह नहीं हुआ या शिकार में किसी

1. पानी अथवा सूखी मिट्टी से मल–मूत्र की जगह (शरीर के अंग) की सफ़ाई।

चिड़िया को हलाल करने की नौबत नहीं आई तो वह उनके लिए मुर्दार का हुक्म रखती है। इसी प्रकार अगर जानवर को ज़बह किया जाये लेकिन गैरुल्लाह की नीयत से हो या उस पर ग़ैरुल्लाह का नाम लिया जाये भले ही वह कोई देवी, देवता, या बुत हो, अथवा कोई पैग़म्बर, वली और शहीद तो वह भी मुर्दार की हैसियत रखता है और उसका खाना जायज़ नहीं। जानवरों में सुअर और कुत्ता हमेशा ह़राम और नजिस (अपवित्र) हैं। कुछ जानवरों का खाना मना और माँस ह़राम है हालांकि वह अपनी जात से नजिस नहीं हैं जैसे शेर, तेन्दुवा, चीता आदि। इसी प्रकार कुछ पक्षी उनके लिए ह़लाल हैं और कुछ हराम, जैसे शिकर करने वाले और पंजे से खाने वाले पक्षी, शिकरा, बाज़ आदि हराम हैं, और ग़ैर शिकारी चोंच से खाने वाले ह़लाल हैं। वास्तव मे यह इब्राहीमी सभ्यता की पहचान है और उन्हीं की पसन्द को मुसलमानों को चाहे वह दुनिया के किसी देश और इतिहास के युग के हों, इस का पाबन्द बना दिया गया है।

4. चौथी विशेषता ह़ज़रत मुहम्मद (सल्ल) से हार्दिक लगाव

मुसलमानों की चौथी विशेषता उनका अपने पैग़म्बर से गहरा लगाव है। उनके यहां पैग़म्बर ह़ज़रत मुहम्मद सल्ल॰ की ह़ैसियत मात्र एक बड़े इन्सान, श्रद्धा का पात्र व्यक्तित्व, और मज़हबी पेशवा की नहीं, उनका सम्बन्ध अपने नबी के साथ इससे कुछ अधिक और इससे कुछ भिन्न है। जहां तक आप की महानता का सम्बन्ध है, उनको इस विख्यात पंक्ति से अधिक बेहतर तरीक़े पर अदा नहीं किया जा सकता।

मुसलमानों को अपने नबी के बारे में तमाम मुशरिकाना विचारों और उस अतिश्योक्ति से रोका गया है जो कुछ पैग़म्बरों की उम्मतों ने अपने पैग़म्बर के बारे में मान रखा है एक सह़ी हदीस में साफ़ तरीक़े पर कहा गया है, ''मुझे मेरी ह़द से न बढ़ाना, और मेरे बारे मे उस अतिश्योक्ति से काम न लेना जो ईसाइयों ने अपने पैग़म्बर के बारे में रचा रखा। कहना हो तो यूं कहना कि खुदा का बन्दा और उसका रसूल।''

लेकिन इस अक़ीदा (श्रद्धा) के साथ मुसलमानों को अपने पैग़म्बर के साथ वह भावनात्मक लगाव है, जो हमारे सीमित ज्ञान व अध्ययन में किसी क़ौम और मिल्लत (धार्मिक समुदाय) में अपने पैग़म्बर के साथ नहीं पाया जाता, यह कहना सही होगा कि इनमें से हज़ारों लाखें लोग आप को अपने माँ–बाप, औलाद और जान से अधिक प्रिय रखते हैं, और आप की मर्यादा की हिफ़ाज़त को अपना फ़र्ज़ जानते हैं। वह किसी समय भी आपकी मर्यादा पर आंच आने तक को सहन नहीं कर सकते। मुसलमान इस मुआमले में इतने संवेदनशील हैं, और भावुक होते हैं कि ऐसी अशुभ घड़ी में वह बेक़ाबू हो जाते हैं और अपना जीवन बलिदान कर देने से भी नहीं हिचकिचाते। हर युग में इस बयान की पुष्टि के घटनाएं और दलीलें मिलेंगी। आज भी आप का नाम, आप की मर्यादा, आपकी नगरी, आप की वाणी, आपसे निस्बत रखने वाली चीज़ें मुसलमानों के लिए प्रियतम वस्तुएं हैं और उनके रगों में हरकत पैदा करती रहती हैं।

जिस कसरत से आप (सल्ल॰) पर दुरूद भेजा जाता है, और मुसलमानों के यहां इसका जो महत्व है, जितनी अधिक संख्या में हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ की पवित्र जीवनी पर दुनिया की विभिन्न भाषाओं में पुस्तकें लिखी गई हैं और लिखी जा रही हैं, आत्मा की जिस तड़प, प्रेम की जिस भावना से प्रेरित होकर, और काव्यशैली के जिन उत्कृष्ट नमूनों से भरपूर अलंकरति भाषा में आप से लगाव की अभिव्यक्ति "नअ़तिया शाइरी"[1] में किया गया और किया जा रहा है, उसकी नज़ीर दुनिया के लिट्रेचर में नहीं मिलती।

मुसलमानों का यह भी अक़ीदा है कि हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ अल्लाह के अन्तिम रसूल हैं और आप सल्ल॰ पर "वही" (ईश–वाणी) व नुबूवत का सिलसिला हमेशा के लिए ख़त्म हो गया। अब आप के बाद जो नुबूवत का दअ़वा करेगा वह झूठा है। इस अक़ीदे की बुनयाद पर कुरआन,

---

1. हज़रत मुहम्मद सल्ल0 की प्रशंसा और शौक़ व याद में जो कविता लिखी जाती है उसे "नअ़तिय: शाइरी कहते हैं।

हदीस, और तवातुर[1] पर है और इसने मुस्लिम समाज के लिए हमेशा एक सीमा रेखा (लाइन आफ़ डिमारकेशन) का काम दिया है, और हमेशा इसने मुसलमानों को होशियार और चालाक लोगों की साज़िश का शिकार होने से बचाया है।

मुसलमान उन सब लोगों की, जिन्होंने हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ का ज़माना पाया और जिन्हें आपके के सानिध्य का सुअवसर प्राप्त हुआ जिन्हें आमतौर से "सहाबा" कहते हैं, श्रद्धा उनके बारे में सद्‌विचार और उनकी सेवाओं की स्वीकारोक्ति करना आवश्यक समझते हैं और उनको मिसाली मुसलमान अपना बुजुर्ग समझते हैं और अपने को उनके प्रति कृतज्ञ मानते हैं जब कभी वह इन विभूतियों में से किसी का नाम लेते हैं तो "रज़िअल्लाहु अन्हु" कहते हैं। अर्थात अल्लाह उनसे राज़ी हों। इनमें से चार उच्च कोटि के सहाबियों को जो क्रमशः मुहम्मद सल्ल॰ के जानशीन व ख़लीफ़ा हुए– हज़रत अबूबक्र, हज़रत उमर, हज़रम उस्मान, और हज़रत अली रज़ि0 को इन सहाबा में भी सर्वोच्च स्थान देते हैं और जुमा, ईद–बक़रीद के खुत्बा – (सम्बोधन) में ह0 मुहम्मद सल्ल॰ के बाद उनका नाम लेते हैं। इनके अलावा छः और सहाबी भी हैं जिनको मुहम्मद सल्ल॰ ने उनके जीवन काल में ही जन्नत की खुशख़बरी दी है, यह दस लोग "अशर–ए–मुबश्शरा" कहलाते हैं और हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ के ख़ानदान के लोगों को "अहले बैत" कहते हैं, जिनमें आपकी बीवियां, लड़कियाँ और आपके नवासे (हज़रत हसन रज़ि0 और हज़रत हुसैन रज़ि0) शामिल हैं। मुसलमान इनसे मुहब्बत रखना भी अपना फ़र्ज़ समझते हैं और उनको हमेशा श्रद्धा व सम्मान के साथ याद करते हैं और इसको अपने पैग़म्बर से मुहब्बत का तक़ाज़ा समझते हैं।

यही मुआमला मुसलमानों का कुरआन मजीद के साथ है। वह कुरआन को मात्र समझदारी, नैतिक उपदेशों और सामाजिक क़ानून का कोई संकलन नहीं समझते जो किसी दर्जे में श्रद्धेय हैं और जब सहूलत से सम्भव

1. किसी कथनी या करनी के सुनने या देखने वाले और फिर उसको नक़्ल करने वाले हर युग में इतनी अधिक संख्या में रहे हैं कि मानव–बुद्धि इन सबको अविश्वसनीय क़रार न दे सके।

हो उस पर अ़मल कर लिया जाये और व्यवहार में लाया जाये बल्कि वह इसको आदि से अन्त तक शब्द से और अर्थ से अल्लाह का कलाम (ईश वाणी) समझते हैं जिसका एक एक अक्षर और एक एक नुक़ता सुरक्षित है और इसमें किसी मात्रा का भी संशोधन या परिवर्तन नहीं हो सकता। मुसलमान कुरआन को हमेशा वुज़ू के साथ पढ़ते और ऊंची जगह रखते हैं।

कुरआन मजीद को कंठस्थ (हिफ़्ज़) करने का तमाम दुनिया में रिवाज है और इसके लिए मदरसे काइम हैं जहां कुरआन मजीद को शुद्ध उच्चारण के साथ पढ़ने की शिक्षा दी जाती है और हिफ़्ज़ कराया जाता है। केवल भारत में हाफ़िज़ों की संख्या हज़ारों से बढ़कर लाखों तक पहुंच गई है और इसमें ऐसे ऐसे हाफ़िज़ भी हैं जो एक रात में पूरा कुरआन सुना देते हैं। और ऐसी विभूतियां भी पाई जाती हैं जिनका रमज़ान के महीने में प्रतिदिन एक कुरआन हिफ़्ज़ प्रतिदिन पढ़ लेना वर्षो से चला आ रहा है। इन हाफ़िज़ों में दस–दस, बारह–बारह वर्ष के बच्चे भी बड़ी संख्या में हैं जिनको यह मोटी–बड़ी किताब[1] ज़बानी याद है, कंठस्थ है। और इसको वह प्रवाह के साथ पढ़ सकते हैं औरतों में हर युग में भी एक बड़ी संख्या हाफ़िज़ों की रही है।[2]

5. विश्वव्यापी इस्लामी बिरादरी से सम्बन्ध और उसकी समस्याओं से दिलचस्पी

मुसलमानों की पांचवी विशेषता यह है कि अपने को एक विश्वव्यापी मिल्लत (समुदाय) और अपने दीन व धर्म को लौकिक और

1. ग़ैर मुस्लिमों के लिए लिखा जाता है कि कुरआन में तीन लाख चालीस हज़ार सात सौ अक्षर हैं और मिस्री टाईप में इसकी औसत मोटाई 800–900 पृष्ठों के बीच आमतौर पर होती है। भारत में भी आमतौर पर औसत साइज़ के कुरआन मजीद 600 से 800 पृष्ठ में होते हैं।

2. केवल मेरे छोटे से परिवार में मेरे बचपन में लगभग एक दर्जन हाफ़िज़ औरतें थीं जिन मे केवल मेरे घराने में मेरी मां, मेरी ख़ाला, एक फूफी, एक मुमानी और ख़ालाज़ाद बहन थीं। वह रमज़ान में कुरआन शरीफ़ सुनाती थीं, और औरतों की एक बड़ी संख्या उनके पीछे होती थी। (लेखक)

विश्वव्यापी दीन समझते हैं। उनकी इस मिल्ली विशेषता का समझना और लिहाज़ करना हक़ीक़त पसन्दी का तक़ाज़ा है मुसलमान अपने देश से (जहां के वह वासी हैं) लगाव और मुहब्बत तथा वफ़ादारी व निष्ठा की पूरी भावना और उसके निर्माण व विकास में सक्रिय भागेदारी के साथ अपने को इस अन्तर्राष्ट्रीय परिवार अथवा मिल्लत का एक व्यक्ति मानते हैं, और वह सामन्य इस्लामी समस्याओं से दिलचस्पी लेते, दूसरे इस्लामी देशों की समस्याओं से प्रभावित होते और यथासम्भव क़ानून की सीमा के अन्दर रहते हुए उनके साथ सहानुभूति और नैतिक सहायता को देशभक्ति और देश के प्रति वफ़ादारी के प्रतिकूल नहीं मानते। बल्कि इसे धर्म मानवता, प्रकृति और इन्साफ़ का तक़ाज़ा समझते हैं और इसको अपने देश के लिए लाभपद्र और स्थायित्व का कारण मानते हैं। यह मुसलमानों का मिल्ली मिज़ाज और उनकी शिक्षा व इतिहास का स्वाभाविक तक़ाज़ा है, और उनके बारे में कोई राय क़ायम करने अथवा कोई कार्यशैली निर्धारित करने से पहले उनकी इस मिज़ाजी विशेषता को समझ लेना बहुत ज़रूरी है।

अध्याय–तीन

मुसलमानों के दो बड़े त्योहार

मुसलमानों के दो सबसे बड़े त्योहार ईदुल फ़ित्र और ईदुल अज़हा हैं जिनको ईद और बक़रईद के नाम से भी याद किया जाता है। ईद रमज़ान के महीने की समाप्ति और शव्वाल (जो इस्लामी कैलेण्डर का दसवाँ महीना है) के चाँद निकलने पर शव्वाल की पहली तारीख़ को होती है। चूंकि रमज़ान का महीना रोज़े का महीना है और वह सब्र व साधना तथा धार्मिक व आध्यात्मिक व्यस्तता में गुज़रता है, इस लिए स्वाभाविक रूप से ईद के चाँद का बड़ा इन्तिज़ार होता है, विशेषकर उन्तीसवीं के चांद की अधिक खुशी होती है। रमज़ान की उन्तीस को सुर्यास्त के समय, मुसलमानों की निगाहें आसमान की तरफ़ होती हैं और हर उम्र और हर तबक़े के लोग चाँद की तलाश में लगे होते हैं। उन्तीसवीं को चाँद नज़र नहीं आता तो अगले दिन फिर रोज़ा रखा जाता है, और तीस का चाँद निश्चित हो जाता है। जैसे ही चांद पर नज़र पड़ती है हर तरफ़ से मुबारक, सलामत का शोर हो जाता है। छोटे बड़ों को सलाम करते हैं। बच्चे परिवार के बड़े बूढ़ों और औरतों को ईद की खुशख़बरी सुनाते हैं। और उन की दुआएँ लेते हैं, जो लोग पढ़े लिखे हैं और सुन्नत पर अ़मल करने की कोशिश करते हैं वह चाँद देख कर दुआ़ पढ़ते हैं जिसका अर्थ इस प्रकार है :

> "(ऐ चाँद) मेरा और तेरा परवरदिगार अल्लाह है तू हिदायत और भलाई का चाँद है। ऐ अल्लाह इस महीने को हमारे ऊपर अम्न और ईमान सलामती और आज्ञापालन तथा अपनी मर्ज़ी की तौफ़ीक़ के साथ शुरू कर।"

कई दिन पहले से ईद की तैयारी शुरू हो जाती है। लेकिन ईद की रात में बड़ी हमाहमी और बाज़ारों और घरों में चहल–पहल होती है। सुबह से ईद की तैयारी शुरूअ़ हो जाती है। इस सच्चाई की अभिव्यक्ति के लिए

कि आज रोज़ा नहीं है और खुदा ने 29 या 30 दिन के विपरीत आज खाने पीने की इजाज़त दे दी है, सुबह ही सुबह हैसियत के अनुसार खजूर या खुर्मे का नाश्ता किया जाता है फिर स्नान किया जाता है और खुदा ने जिनको सामर्थ्य दिया है वह इस दिन नया जोड़ा पहनना ज़रूरी समझते हैं नहा धो कर, कपड़े पहन कर इत्र खुशबू लगाकर लोग ईदगाह को प्रस्थान करते हैं।

ईदगाह जाने से पहले ग़रीबों के लिए कुछ ग़ल्ला या नक़्द निकालते हैं जिसको "सदक़–ए–फ़ित्र" कहते हैं। यह मानो रमज़ान के रोज़ों का शुक्रिया है। यह अगर गेहूँ के रूप में हो तो उसका वज़न पौने दो सेर के क़रीब (एक किलो 633 ग्राम) होता है और अगर जौ हो तो इसका दुगना, और इसकी क़ीमत भी अदा की जा सकती है जो ग़ल्लो के भाव के अनुसार घटती बढ़ती रहती है। यह सदक़ा बालिग़ों के अलावा बच्चों की तरफ़ से भी अदा किया जाता है। ईद की नमाज़ सूर्य चढ़ने के बाद अदा करना सुन्नत है, और इसमें जितनी ही जल्दी हो उतना ही बेहतर है। ईद की सबसे बड़ी जमाअ़त शहर या क़स्बे की ईदगाह में होती है।

मुसलमान ईद की नमाज़ पढ़ने जाते और वहां से आते समय अल्लाह की प्रशंसा और शुक्र के शब्द धीरे–धीरे कहते हुए जाते हैं। सुन्नत तरीक़ा यह है कि एक रास्ते से ईदगाह जाएँ और दूसरे रास्ते से वापस आएँ ताकि दोनों ओर अल्लाह की बड़ाई और मुसलमानों के एका और इबादत के शौक़ की अभिव्यक्ति हो जाये। इससे यह भी लाभ है कि भीड़ में कमी हो जाती है।

पाँच वक़्त की नमाज़ों और जुम्ए के विपरीत ईद–बक़रीद की नमाज़ से पहले न अज़ान है न इक़ामत न कोई सुन्नत, न नफ़िल नमाज़ है जैसे ही मुसलमान जमा हो जाते हैं या नमाज़ का समय हो जाता है, इमाम आगे बढ़ जाता है, और नमाज़ शुरू कर देता है। आम नमाज़ों की हर रकअ़त में दो तकबीरें हैं एक तकबीरे तहरीमा जिससे नमाज़ शुरू की जाती है और एक रुकू की तकबीर, लेकिन ईदैन (ईद–बक़रीद) की नमाज़

की हर रकअत में हनफ़ियों के यहाँ तीन–तीन तकबीरें ज़्यादा कही जाती हैं। सलाम फेरने के बाद फ़ौरन इमाम मेम्बर पर चला जाता है और ईद का खुत्बा (सम्बोधन) देता है। जो जुमए की तरह दो हिस्सों में बंटा है। एक खुत्बा देकर कुछ सेकेण्ड के लिए इमाम बैठ जाता है, फिर खड़ा हो जाता है और दूसरा खुत्बा देता है। जुमे में पहले खुत्बा है फिर नमाज़, ईद में पहले नमाज़ और फिर खुत्बा। खुत्बे में ईद और उसके सन्देश, और समय की माँग पर प्रकाश डाला जाता है।

बक़रईद में केवल कुरबानी की अभिवृद्धि है। इस में "सदक़–ए–फ़ित्र" नहीं दिया जाता है। इसके अलावा एक अन्तर यह भी है कि ईद शव्वाल की पहली तारीख़ को होती है और ईदुल अज़्हा (जो क़मरी साल का बारहवां महीना है) की दस तारीख़ को होती है। यह वह दिन है जब मक्के में हाजी हज के अरकान से फुरसत पा जाते हैं और "मिना" जो मक्का से चार मील पर शहर से बाहर है, अल्लाह की याद, इबादत, कुर्बानी और अल्लाह की नेअ़मतों के प्रयोग और खाने पीने में व्यस्त होते हैं दूसरा अन्तर यह है कि ईद एक दिन की होती है और बक़रईद तीन दिन, बक़रईद की नमाज़ तो दस तारीख़ को ही पढ़ी जाती है लेकिन कुरबानी बारह तारीख़ के सूर्यास्त तक हो सकती है। बक़रईद के मौक़े पर एक बात और भी अधिक है कि नौ तारीख़ की फ़ज्र से तेरह तारीख़ की अस्र तक हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद कुछ विशेष शब्द बुलन्द आवाज़ में कहे जाते हैं। जिन में खुदा की बड़ाई का एलान और उसकी प्रशंसा व वन्दना का तराना है। इनको "तकबीराते तशरीक़" कहते हैं। इनका अर्थ इस प्रकार है :

"अल्लाह सबसे बड़ा है, अल्लाह सबसे बड़ा है, अल्लाह के सिवा कोई पूजने योग्य नहीं, अल्लाह सबसे बड़ा है, अल्लाह सबसे बड़ा है, और अल्लाह ही का शुक्र अदा किया जाता है।"

कुरबानी के गोश्त के तीन हिस्से किये जाते हैं, एक हिस्सा घर वालों और अपने लिए, एक हिस्सा मित्रों के लिए और एक हिस्सा दीन–दुखियों के लिए। यह दिन खाने पीने के गिने गये हैं।

ईद और बक़रईद दोनों मुसलमानों के अन्तर्राष्ट्रीय त्योहार हैं जिनसे कोई देश, कोई क़ौम और तब्क़ा अलग नहीं। और यही वह दो त्योहार हैं जिनकी शरई़ और दीनी हैसियत में किसी का विरोध नहीं, और न किसी युग में भी इन पर बहस की गई। और लगभग सारे देशों में चाह वह मुस्लिम बाहुल्य देश हों अथवा मुस्लिम अल्पसंख्यक इनके मनाने के तरीक़े और इनके स्वरूप में कोई बड़ा अन्तर नही।

अध्याय–चार

मुसलमानों का रहन-सहन

जन्म से प्रौढ़ अवस्था तक

इस्लामी शरीअ़त ने मुसलमानों के लिए जन्म से मृत्यु तक ऐसी व्यवस्था बनायी है और ऐसा माहौल बनाने का प्रयास किया है जिसमें वह इस सच्चाई को भुला न पाए कि वह इब्राहीमी मिल्लत का एक व्यक्ति है, एक विशिष्ट शरीअ़त का अनुयायी है, वह एक खुदा को मानता है और उसका आज्ञाकारी भक्त है।

बच्चे का जन्म और उसके कानों में अज़ान व इक़ामत

किसी मुसलमान के घर में जब कोई बच्चा पैदा होता है, तो सबसे पहले परिवार या मुहल्ले के किसी नेक आदमी अथवा बड़े–बूढ़े को उस के पास लाते हैं, वह बच्चे के दाँए कान में अज़ान और बाएं कान में इक़ामत कहता है। यह अज़ान और इक़ामत नमाज़ के लिए है और बच्चा नमाज़ तो दरकिनार इस अज़ान और इक़ामत का मतलब और मक़सद भी नहीं समझता। शायद इसका उद्देश्य यह होता है कि सबसे पहले उसके कान में अल्लाह का नाम और उसकी इबादत की पुकार पड़े। ऐसे अवसर पर किसी बड़े–बूढ़े के चबाये हुए खजूर या छुहारे का एक रेज़ा बरकत के लिए उसके मुंह में देने का भी रिवाज है, यह बात पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ के व्यवहार से भी साबित है और यह सुन्नत वहीं से चली है।

बच्चे का अक़ीक़ा द्धमुण्डनत्रः

सातवें दिन बच्चे का अक़ीक़ा करना "मुस्तहब"[1] है।

किसी कारणवश यदि सातवें दिन न हो सके तो चौदहवें दिन और इसी हिसाब से बाद में होता है। अगर बच्चा है तो दो बकरे और अगर बच्ची है तो एक बकरा ज़बह किया जाता है, और उसका गोश्त ग़रीबों और प्रियजनों में बांटा जाता है, और घर में भी पका कर खाया और खिलाया जाता है, लेकिन अक़ीक़ा शरअ़ी हैसियत से न फ़र्ज़ है और न वाजिब है और न उन जानवरों को ज़ब्ह़ करना। यदि किसी को इस का सामर्थ्य नहीं तो ज़रूरी नहीं है।

बच्चे का नामकरण

आमतौर पर अक़ीक़े के समय ही बच्चे का नामकरण कर दिया जाता है। प्रायः परिवार के किसी बड़े–बूढ़े अथवा मुहल्ला या मस्जिद के किसी विद्वान और नेक आदमी से नाम तजवीज़ कराया जाता है या स्वयं माता–पिता अथवा उनके बुज़ुर्ग अपनी पसन्द का कोई नाम चुन लेते हैं। नाम रखने में प्रायः अरबी तर्ज़ के नाम को प्राथमिकता दी जाती है ताकि बच्चे के नाम से इस्लामियत की अभिव्यक्ति हो और नाम से ही समझ लिया जाये कि वह मुसलमान है। मुसलमान बुद्धिजीवी इसमें बहुत से मनोवैज्ञानिक लाभ बताते हैं और कुछ ऐसे देशों (जैसे चीन) का ह़वाला देकर इस पाबन्दी के महत्व पर बल देते हैं जहां नाम से यह अन्दाज़ा नहीं कया जा सकता है कि वह आदमी मुसलमान है या ग़ैर मुस्लिम। जहां तक इस्लामी शरीअ़त का सम्बन्ध है इस बारे में शरीअ़त ने क़ानूनी तौर पर मुसलमानों को ख़ास नामों का पाबन्द नहीं किया है। केवल इतना बताया है कि बेहतरीन नाम वे हैं जिन से ख़ुदा की बन्दगी अर्थात तौह़ीद की अभिव्यक्ति हो, इसलिए दुनिया के तमाम इस्लामी मुल्कों के मुसलमानों के अधिकांश वह नाम हैं जो

---

1. जिस काम को करने पर अच्छा बदला मिले और न करने पर कोई गुनाह न हो उसे मुस्तह़ब कहते हैं।

"अ़ब्द" (भक्त) के शब्द से प्रारम्भ होते हें जैसे अब्दुल्लाह, अब्दुर्रहमान, अब्दुलवाहिद, अब्दुल अ़हद, अब्दुस्समद, अब्दुल अ़ज़ीज़, अब्दुल माजिद, अब्दुल मजीद आदि।[1] यह भी आवश्यक है कि नाम से शिर्क घमण्ड या अवज्ञापालन की अभिव्यक्ति न हो, इस लिए मालिकुल मुलूक और शहंशाह के शब्द नापसन्द किये गये हैं।

मुसलमान बरकत के नेकनामी के लिए नबियों और सहाबियों के नामों को प्राथमिकता देते हैं। इस सिलसिले में स्वाभाविक रूप से मुसलमान का ध्यान सबसे पहले अपने पैग़म्बर, उनके साथियों और उनके परिवार के आदरणी व्यक्तियों की ओर जाता है।

नामों के सिलसिले में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि हज़रत मुहम्द सल्ल० का नस्ली सम्बन्ध इस्माईली शाखा़ से है और बनी इस्माईल और बनी इस्राईल (अ़रबों और यहूदियों) के मध्य विरोध प्रारम्भ से ही चला आ रहा है लेकिन चूंकि मुसलमानों के अ़क़ीदे में ख़ुदा के सभी पैग़म्बर श्रद्धेय हैं और उन पर ईमान लाना ज़रूरी है, चाहे वह इस्माईली शाखा में हुए हों अथवा इस्राईली शाखा में। इस लिए मुसलमान नामों के बारे में नस्ली पक्षपात का शिकार नहीं। इसी का नतीजा है कि अकेले हिन्दुस्तान में लाखों की संख्या में ऐसे मुसलमान होंगे जिनका नाम इसहाक़ और उनकी औलाद के नाम पर रखा जाता है और वह इसहा़क़, याकूब, यूसुफ़, दाऊद, सुलेमान, मूसा, हारून, ई़सा, इमरान, ज़ारिया और यह़या कहलाते हैं, और यह सब इस्राईली शाखा से सम्बन्ध रखते हैं। इसी प्रकार औरतों में मरियम, और आसिया नाम पाया जाता है। जो इस्राईली शाख़ा की बुजुर्ग औरतों के नाम हैं।

पाकी और तहारत की शिक्षा

बच्चा जब कुछ सयाना हो जाता है और कुछ समझने बूझने लगता

1. इन नामों का दूसरा अंश रह़मान, वाहिद, अह़द आदि अल्लाह के गुणवाचक नाम हैं, रह़मान का अर्थ है बड़ा मेहरबान, वाहिद का अकेला, अह़द का एक, समद का बेनियाज़, अर्थात जो किसी का मुहताज न हो और जिसके सब मुहताज हों।

है तो उसको तहारत की तालीम दी जाती है। अर्थात पेशाब, पाख़ाना के बाद पानी से पाकी हासिल करने, नापाक चीज़ों से बचने और शरीर व कपड़ों को नापाकी से बचाने के निर्देश दिये जाते हैं ज़ाहिर है कि बच्चा इस बारे में पूरे तौर पर एहतियात नहीं कर सकता। और इसमें माहौल, शिक्षा–दीक्षा, परिवारिक परिवेश और पेशे को भी बहुत कुछ दख़्ल है, लेकिन फिर भी दीनदार माँ–बाप इस बात पर ध्यान देते हैं। और देना चाहिए।

नमाज़ पढ़ने की हिदायत

इस अवस्था में बच्चे को वुज़ू करना भी सिखा दिया जाता है और नमाज़ का भी शौक़ दिलाया जाता है। बाप या ख़ानदान के बुज़ुर्ग बच्चे को अकसर अपने साथ मस्जिद ले जाते हैं और वह अपने बड़ों और मुहल्ले वालों के साथ खड़ा हो कर नमाज़ की नक़ल करने लगता है हदीस में आता है कि बच्चा जब सात वर्ष का हो जाये तो नमाज़ की ताकीद करो जब दस वर्ष का हो तो मार कर नमाज़ पढ़ाओ, और उनके बिस्तर अलग कर दो।

इस्लामी शिष्टाचार की शिक्षा-दीक्षा

इसी अवस्था में दीनदार माँ–बाप और पढ़ी लिखी माएं बच्चे को इस्लामी अदब की शिक्षा देती हैं जैसे सब अच्छे काम (खाना खाना, पानी पीना, मुसाफ़ः करना आदि) दाएं हाथ से किये जाएं और शौच आदि बाएं हाथ से। पानी बैठ कर और तीन सांस में पिया जाये, बड़ों को सलाम किया जाये, छींक आने पर "अल्हम्दु लिल्लाह" (सारी तारीफ़ अल्लाह के लिए है) कहा जाये, खाना बिस्मिल्ला कह कर शुरू किया जाये और हम्द व शुक्र पर ख़त्म किया जाये। इसी अवस्था में उसको कुरआन की छोटी–छोटी सूरतें और प्रतिदिन की दुआएं याद कराई जाती है। खुदा के पैग़म्बर और भक्तों के ऐसे हालात बयान किये और सुनाये जाते हैं जिस से उस के विश्वास परिपक्व, दुरूस्त और विचार नेक और अच्छे बनें और बच्चा उन को अनुकरणीय समझने लगे।

बालिग होने के साथ, जिसके लिए पन्द्रह वर्ष की आयु काफ़ी समझी जाती है, बच्चे पर नमाज़, रोज़ा और ख़ास शर्तों के साथ ज़कात और हज़ फर्ज़ हो जाते हैं और इनको छोड़ने पर वह गुनाहगार ठहरता है। अब हलाल–हराम, सवाब व अज़ाब का क़ानून उस पर जारी हो जाता है।

प्रौढ़ावस्था से मौत तक

निकाह (शादी)

इस्लाम में निकाह शादी का आयोजन बहुत सादा और संक्षिप्त है। इस को जीवन का एक फ़र्ज़, फ़ितरत का एक तक़ाज़ा और एक इबादत की हैसियत से अदा किया जाता है। केवल ईजाब और क़बूल के दो शब्द और दो गवाह इसके लिए ज़रूरी हैं। इसका उद्देश्य यह है कि यह सम्बन्ध जो दो समझदार बालिग़ लोगों के बीच हो रहा है, आपराधिक और गोपनीय ढंग से चोरी छिपे नहीं है। इसी लिए (अनावश्यक अनिवार्यताओं से बचते हुए) किसी क़दर एलान व तशहीर के साथ इसका होना ज़रूरी है और इसके लिए गवाह अनिवार्य हैं। मर्द, महर अदा करना ज़रूरी समझे, और औरत की हिफ़ाज़त व इज़्ज़त और नान व नफ़्क़ा की जिम्मेदारी ले। इसके सिवा और कोई चीज़ ज़रूरी नहीं।

इस्लाम के इतिहास में ऐसी भी उदाहरण मिलते हैं कि बावजूद इसके हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ के ज़माने में मदीने के मुसलमानों की संख्या बहुत कम और मदीने की जनसंख्या बहुत सीमित थी, बअज़ ऐसे सहाबी जो मक्के से हिजरत करके आये थे और जिनके पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ से बहुत गहरे और परिवारिक सम्बन्ध थे, ने मदीने में शादी की और स्वयं पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ को (जिनका सम्मिलित होना बरकत और इज़्ज़त दोनों का कारण बनता) निकाहोत्सव में आमंत्रित करने की ज़रूरत नहीं समझी। और हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ को उन सहाबी के निकाह का ज्ञान निकाह हो जाने के बाद वह भी संयोगवश हुआ।

निकाह का ज़्यादा सहीह तरीक़ा यह है कि लड़की का बाप या

कोई दूसरा वली[1] निकाह पढ़ाये, इस लिए कि हज़रत फ़ात्मा रज़ि0 का निकाह स्वयं पैग़म्बर ह0 मुहम्मद सल्ल॰ ने हज़रत अली रज़ि0 के साथ पढ़ाया। निकाह के समय दो गवाह और एक वकील।[2] लड़की के पास जाकर उसको बताते हैं कि उसका निकाह अमुक मर्द से इतने महर पर किया जा रहा है। इसका जवाब आमतौर से खामोशी से दिया जाता है और इसको लड़की की स्वीकारोक्ति समझा जाता है। यह गवाह और वकील प्रायः खानदान के लोग और लड़की के क़रीबी रिश्तेदार होते हैं। निकाह पढ़ाने वाला इस के बाद बुलन्द आवाज़ से कुरआन शरीफ़ की आयतें, ह़दीसें और दुआ के कुछ वाक्य अरबी में कहता है जिसको खुत्ब–ए–निकाह़ कहते हैं, इसके बाद ईजाब व कुबूल करवाता है जिसके आमतौर पर यह शब्द होते हैं "मैंने अमुक व्यक्ति की लड़की जिसका नाम यह है, को उनकी तरफ़ से इतने महर पर तुम्हारे निकाह़ में दिया, तुमने कुबूल किया?" इस पर दुल्हा इतनी ही आवाज़ में जो क़रीब से सुन ली जाये कहता है, "मैंने कुबूल किया" फिर क़ाज़ी (निकाह पढ़ाने वाला) और सभी उपस्थित लोग दुआ के लिए हाथ उठाते हैं और दुआ करते हैं कि दुल्हा दुल्हन में प्रेम व मुहब्बत हो और उसका वैवाहिक जीवन सुखमय हो।

इधर कुछ दिनों से बुहत से उलमा खुत्बे का अरबी हिस्सा पढ़ने के बाद उर्दू में संक्षिप्त सम्बोधन करते हैं जिसमें निकाह़ और उसकी ज़िम्मेदारियों पर प्रकाश डालते हैं। और प्रयास किया जाता है कि निकाह मात्र एक रस्म और तफ़रीही चीज़ हो कर न रह जाये बल्कि इसमें दुल्हा और उपस्थित लोगों को धार्मिक और नैतिक सन्देश मिले और उनके अन्दर ज़िम्मेदारी का एहसास जागे।

---

1. वली लड़की के उस मर्द रिश्तेदार को कहते हैं जो आक़िल बालिग़ हो, वारिस हो सकता हो, और शरीअ़त ने उसको तसर्रूफ़ (दख़ल देना) का अधिकार दिया हो।

2. वकील वह व्यक्ति है जो किसी दूसरे के हुकूक़ में उसकी इजाज़त या हुक्म से बतौर नाइब के तसर्रूफ़ करने का अधिकार रखता हो। (यह दोनों "फ़िक़्ह" की शब्दावलियां हैं)।

एक तक़रीर का नमूना
(खुत्ब-ए-मसनून: के बाद)

सज्जनों! यह निकाह मात्र रस्म व रिवाज और प्राकृतिक तक़ाज़े की प्रतिपूर्ति नहीं। निकाह एक इबादत नहीं बल्कि कई इबादतों का जोड़ है। इससे एक शरअ़ी हुक्म नहीं, दर्जनों और बीसियों शरअ़ी हुक्म सम्बद्ध हैं। इसका महत्व कुरआन, हदीस और फ़िक्ह (ज्यूरिस्प्रूडेन्स) की किताबों में खूब बयान किया गया है किन्तु इस सुन्नत से ग़फ़लत इतनी आम है कि जितनी किसी और सुन्नत से नहीं। उल्टे इसे अल्लाह की नाफ़रमानी और शैतान के आज्ञापालन और रीति रिवाज की पाबन्दी का मैदान बना लिया गया है। निकाह में हमारे जीवन के लिए भरपूर सन्देश है। खुत्ब–ए–निकाह में कुरआन की जो आयतें प्रारम्भ में पढ़ी गई हैं उसमें बताया गया है कि हज़रत आदम और उनकी पत्नी यह एक अकेला जोड़ा था, इनसे अल्लाह ने मानव वंशज को बढ़ाया और दुनिया को इन्सानों से भर दिया। अल्लाह ने इन दो हस्तियों में ऐसे प्रेम जागृत किये और उनके संयोग मे ऐसी बरकत दी कि आज दुनिया इसकी गवाही दे रही है तो खुदा के लिए यह क्या मुश्किल है कि इस जोड़े से, जिसका निकाह अभी पढ़ा गया, एक परिवार आबाद कर दे। आगे की आयत में कहा गया है, अपने उस परवरदिगार से शर्म करो जिसके नाम पर तुम एक दूसरे से सवाल करते हो।

सज्जनो! सारा जीवन सवाल ही सवाल है व्यापार, शासन शिक्षा सब एक प्रकार के सवाल हैं, एक पक्ष सवाल करने वाला है, दूसरा उस सवाल की पूर्ति करने वाला। यही सभ्य और विकसित समाज की विशेषता है। यह निकाह क्या है? यह भी एक सभ्य और शुभ सवाल है। एक शरीफ़ ख़ानदान ने दूसरे शरीफ़ खानदान से सवाल किया कि हमारे बेटे को एक जीवन साथी की ज़रूरत है। उसका जीवन अधूरा है उसे पूरा कीजिए। दूसरे शरीफ़ ख़ानदान ने इस एक सवाल को सहर्ष स्वीकार किया। फिर वह दोनों अल्लाह का नाम बीच में लाकर दूसरे से मिल गये। और दो आत्माएं जो कल तक एक दूसरे से अजनबी और दूर थीं, वह ऐसी क़रीब और बेगाना

से यगाना हो गई कि इनसे बढ़ कर सानिध्य की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती। एक की क़िस्मत दूसरे से सम्बद्ध और एक का सुख–दुःख दूसरे का सुख–दुःख बन गया। यह सब अल्लाह के नाम का करिश्मा है जिसने हराम को हलाल और नाजायज़ को जायज़ बना दिया। अल्लाह तआला फ़रमाता है कि अब इस नाम की लाज रखना। बड़े स्वार्थ की बात होगी कि तुम यह नाम बीच में लाकर अपनी ग़र्ज़ और स्वार्थ को पूरा कर लो और काम निकाल लो और फिर खुदा के नाम को साफ़ भूल जाओ और जीवन में इसके मताल्बे (मांग) को पूरा न करो। आगे भी इस नाम को याद और इसकी लाज रखना। फिर फ़रमाया कि हाँ रिश्तों का भी ध्यान रखना। आज एक नया रिश्ता हो रहा है, इस लिए ज़रूरत पड़ी कि पुराने रिश्तों को भी याद दिला दिया जाये कि इस रिश्ते से पुराने रिश्ते का हक़ समाप्त नहीं हो जाता है। ऐसा न हो कि पत्नी के इस रिश्ते को याद रखो और माँ के रिश्ते को भूल जाओ। ससुर की सेवा ज़रूरी समझो, यदि कोई यह सोचे कि ऐसी बातों की कौन निगरानी करेगा, और कौन इसे देख रहा है, तो समझ रखो कि अल्लाह सब कुछ देखता है, यह वह गवाह है कि जो हर समय साथ रहेगा। आगे की आयत में एक कटु सत्य याद दिलाया गया है। यह पैग़म्बर ही की शान है कि ऐसी खुशी के मौक़े पर ऐसे कटु सत्य का उल्लेख करें जिससे आदमी अपने लक्ष्य से ग़ाफ़िल न हो पाये और उस दौलत पर नज़र रखे जो साथ जाने वाली और हमेशा साथ रहने वाली है, अर्थात, ईमान की दौलत फ़रमाया कि यह जीवन कितना ही सुखमय और आनन्दमय हो और कितना ही लम्बा हो इसकी चिन्ता बनाये रखना कि इसकी समाप्ति अल्लाह के आदेशों के अनुपालन और ईमान पर हो। यही वह सच्चाई है जिस को दुनिया का एक अत्यन्त सफल मानव, जिसे अल्लाह ने सब कुछ दिया था और हर प्रकार से मालामाल किया था, चरमसीमा पर पहुंचने के बाद भी न भूलने पाया।

और अन्तिम आयत में फ़रमया ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और सच्ची व पक्की बात ज़बान से निकालो। मानों दुल्हा को निर्देश दिया जा रहा है कि वह अपनी ज़बान से निकलने वाले शब्द की ज़िम्मेदारी और

उसके दूरगामी परिणाम को महसूस करे। वह जब कहे कि "मैंने कुबूल किया" तो समझो कि उसने कितना बड़ा इक़रार किया है और इससे उस पर कितनी बड़ी ज़िम्मेदारी आती है। फिर फ़रमाया कि यदि कोई ऐसे ही जांच तौल कर बात कहने का आदी बन जाये और उसके अन्दर स्थायी रूप से ज़िम्मेदारी का यह एहसास पैदा हो जाये तो उसका पूरा जीवन सच्चाई के सांचे में ढल जायेगा। वह एक अनुकरणीय पात्र बन जायेगा और अल्लाह की रज़ामन्दी का पात्र बन जायेगा। और अन्त में फरमाया कि असली कामयाबी अल्लाह और उसके रसूल के आदेशों के अनुपालन में है, न काम व मोह की पैरवी में न रीति–रिवाज की पाबन्दी में।

खुत्ब–ए–निकाह़ और ईजाब व कुबूल के बाद छुहारे जो इसी मौक़े के लिए लाये जाते हैं, लुटाये या तक़सीम किये जाते हैं। यह निकाह की पुरानी सुन्नत है।

वैवाहिक जीवन की इबादत

इस्लाम में वैवाहिक जीवन को एक इबादत कर दर्जा दिया गया है, और हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ ने अपने जीवन में उसका सबसे बड़ा नमूना पेश किया है। आप ने फ़रमाया "तुममें सबसे बेहतर वह है जो अपने घर वालों के लिए सबसे ज़्यादह बेहतर हो और अपने घर वालों के लिए तुम सबसे बेहतर मैं हूँ।" फलतः आपके अन्दर नारी के प्रति जो सम्मान उसकी अनुभूति और कोमल भावनाओं का जो लिहाज़ था, वह नारी जगत के बड़े–बड़े वकील और नारी की प्रतिष्ठा के बड़े–बड़े दअ़वेदार के यहां नहीं मिलता। आप ने अपनी पत्नियों की दिलजोई (सांत्वना) उनकी जायज़ तफ़रीह में सहभागिता, उनकी भावनाओं का ध्यान और उनके बीच न्याय व इन्साफ़ की जो मिसाल छोड़ी है उसकी नज़ीर नहीं मिलती। उन्हीं के साथ नहीं बल्कि बच्चों के साथ भी आप इस प्रकार का व्यवहार करते थे कि नमाज़ जैसी चीज़ को आप इस लिए संक्षिप्त कर देते थे कि किसी माँ को तकलीफ़ न हो। अगर कोई बच्चा रोता था तो आप नमाज़ को संक्षिप्त कर देते थे। बहुत बड़ा त्याग है।

आपके लिए तो नमाज़ से बढ़कर कोई चीज़ थी ही नहीं। इस से बढ़ कर कोई कुरबानी नहीं हो सकती थी। आपने फ़रमाया, कभी–कभी मैं चाहता हू कि लम्बी नमाज़ पढ़ू लेकिन जब किसी बच्चे के रोने की आवाज़ सुनता हूँ तो मुझे ख़्याल होता कि कहीं इसकी मां का दिल न लगा हो, इसकी मां परेशान न हो जाये, इस लिए नमाज़ संक्षिप्त कर देता हूँ।

अन्य स्वाभाविक बातें और मुसलमान

बीमारी आज़ारी इन्सान के साथ लगी हुई है। एक मुसलमान के लिए बीमारी की हालत में भी नमाज़ मुआफ़ नहीं है। अलबत्ता इस्लामी शरीअ़त ने इस बारे मे बीमार को बहुत सी सहूलतें दी हैं, अगर वह मस्जिद जाकर जमाअ़त के साथ नमाज़ नहीं पढ़ सकता तो घर में नमाज़ अदा करने की इजाज़त है। अगर खड़े होकर नमाज़ अदा नहीं कर सकता तो बैठ कर और अगर बैठ कर भी उसके लिए पढ़ना दुश्वार हो तो लेट कर और अगर लेट कर भी नमाज़ के अरकान (सोपान) अदा नहीं कर सकता तो इशारे से पढ़ सकता है। अगर पानी का प्रयोग उसके लिए हानिकारक है तो वुजू के बजाय तयम्मुम की इजाज़त है। यथा सम्भव पवित्रता (तहारत) का ध्यान भी रखना ज़रूरी है।

बीमार को देखने जाने (अयादत) का इस्लाम में बड़ा महत्व है। यह बड़े पुण्य का काम है। लेकिन बीमार के पास अधिक देर न बैठे और कुशल जानकर जल्द चला आये क्योंकि देर तक बैठने और लम्बी बात करने से उसके तीमारदारों को असुविधा होती है, ऐसी परिस्थितियों की बात और है जिनमें बीमार स्वयं ही देर तक बैठना पसन्द करता हो और उसका दिल बहलाने की ज़रूरत हो।

मुसलमान को अन्त समय की चिन्ता बराबर रहती है, और उसकी मनोकामना होती है कि वह दुनिया से ईमान के साथ रूख़्सत हो और उसका अन्त कल्म–ए–शहादत, तौहीद और रिसालत के अकीदे पर हो। मुस्लिम समाज मे जहाँ थोड़े बहुत शिक्षा का भी प्रभाव है, यह परम्परा चली आ रही है कि जब कोई मुसलमान किसी मुसलमान से दुआ के लिए कहता

है, या जब किसी नेक बन्दे के सम्पर्क में आता है और उसे मिलता है तो उससे अनुरोध करता है कि दुआ कीजिए कि ख़ातिमा–बिल–ख़ैर हो। और इसको बड़ा अहोभाग्य समझता है कि कल्मा पढ़ता हुआ और ख़ुदा का नाम लेता हुआ दुनिया से रूख़्सत हो, विदा हो।

जीवन के अन्तिम क्षणों का आभास होने पर घर वाले और अन्य सम्बन्धी व अन्य लोग पास होते हैं उसे कल्मा पढ़ने को कहते हैं या अल्लाह का नाम लेने को कहते है।। यदि कमज़ोरी के कारण वह बोल नहीं पाता तो वहां मौजूद लोग स्वयं कल्मा पढ़ने लगते हैं। हलक़ सूख जाने का डर हो तो ज़म ज़म अगर घर में हो या पानी, क्योड़ा आदि रोगी के मुंह में टपकाते हैं। इस मौक़े पर सूरः यासीन पढ़ने का बड़ा महत्व बताया गया है। लोग सूरः यासीन पढ़ते हैं और अन्तिम क्षणों का आभास होने पर क़िबला रूख़ (काबा की ओर मुख) कर देते हैं।

मृत्यु और कफ़न–दफ़न

मृत्यु के बाद मय्यत को गुस्ल देने की तैयारी और कफ़न की व्यवस्था की जाने लगती है। कफ़न में एक बेसिला कुर्ता, एक तहबन्द और एक ऊपर की चादर होती है। औरतों के कफ़न में इनके अलावा एक सरबन्द या कसावा और सीना बन्द भी होता है। गुस्ल (सन) का भी ख़ास तरीक़ा है। गुस्ल हर मुसलमान दे सकता है। नेक लोगों द्वारा गुस्ल ज़्यादा अच्छा समझा जाता है।

जब जनाज़ा तैयार हो जाता है तो नमाज़ शुरूअ़ होती है जिस मे शामिल होने का बड़ा सवाब है। नामज़े जनाज़ा जमाअ़त के साथ है। लेकिन इसमे रूकुअ़ और सज्दा नहीं। सब लोग सफ़े बांधकर (लाइन बनाकर) खड़े हो जाते हैं। एक या तीन या पांच या सात या ताक संख्या (विषम संख्या) में सफ़ें बन जाती हैं और कोई आ़लिम या नेक आदमी या मुहल्ले की मस्जिद का इमाम थोड़ा सा आगे बढ़ कर जनाज़ा सामने रख कर खड़ा हो जाता है और नमाज़ शुरूअ़ हो जाती है। जनाज़े की नमाज़ में चार तकबीरें हैं। सब कुछ ख़ामोशी के साथ पढ़ा जाता है। पहली तकबीर

के बाद वह दुआ पढ़ी जाती है जो हर नमाज़ में पढ़ी जाती है, दूसरी तकबीर के बाद दुरूद शरीफ़ पढ़ा जाता है। तीसरी तकबीर के बाद सब मुसलमान (बिना आवाज़ के) दुआ पढ़ते हैं जिसका अर्थ इस प्रकार है :–

"ऐ अल्लाह! हमारे ज़िन्दा और मुर्दा, हाज़िर व ग़ाइब, छोट बड़े और मर्द व औरत की बख़्शिश फ़रमा। ऐ अल्लाह हममें से जिसको ज़िन्दा रखे, उसको इस्लाम पर ज़िन्दा रख और जिसको तू दुनिया से उठाये उसको ईमान पर उठा।"

जनाज़ा अगर किसी नाबालिग़ बच्चा या बच्ची का हो तो दूसरी दुआ पढ़ी जाती है। जिसका अर्थ यह है कि "ऐ अल्लाह! इस बच्चे को हमारा पेशरौ (आगे जाने वाला) हमारे लिए बदला और हमारे लिए (क़ियामत में) सिफ़ारिश करने वाला बना और इसकी सिफ़ारिश कुबूल फ़रमा।"

चौथी तकबीर के बाद सलाम फेरा जाता है और लोग जनाज़े को कान्धा देते हुए क़ब्रिस्तान ले जाते हैं कन्धा देने और मय्यत को क़ब्र तक पहुंचाने और उसकी तदफ़ीन (दफ़नाने) तक वहां रहने का बड़ा महत्व है। और इसका बड़ा सवाब बयान किया गया है। इसलिए आमतौर से लोग कन्धा देने की कोशिश करते हैं और क़ब्रिस्तान कितना ही दूर हो, मौसम कितना ही सख़्त हो, जनाज़ा हाथों हाथ मुसलमानों के कान्धों पर जल्द क़ब्रिस्तान पहुंच जाता है।

क़ब्र आमतौर पर पहले से तैयार होती है। जनाज़ा पहुंचने पर कुछ लोग क़ब्र के अन्दर उतरते हैं और मय्यत को क़ब्र में इस प्रकार रखते हैं कि उसका मुख क़िबले की ओर हो। फिर बांस या तख़्ते रखकर ऊपर से मिट्टी डाल देते हैं। जिसको मय्यत को मिट्टी देना कहते हैं मिट्टी देते समय कुरआन शरीफ़ के जो शब्द ज़बान पर होते हैं उनका अर्थ इस प्रकार है :–

"हमने तुमको इसी मिट्टी से पैदा किया है और इसी में हम तुम को वापस करेंगे और फिर इसी से तुम को दोबारा बाहर निकालेंगे"।

(सूरः ताहा–55)

जब क़ब्र तैयार हो जाती है और मिट्टी का एक कोहान सा बन जाता है, उस समय निकट सम्बन्धी कुछ देर ठहर कर मय्यत के लिए दुआ़ करते हैं और कुछ क़ुरआन पढ़ते हैं।

ग़मी के घर में आमतौर से ग़मी के दिन मित्रों, और सम्बन्धियों के घरों से ग़मी वाले घर के लोगों और वहां आये रिश्तेदारों के लिए खाना आता है। ऐसा रिवाज इसलिए है कि मय्यत वाले घर के लोगों को स्वयं खाने पकाने का मौक़ा नहीं होता है वह ग़मी में होते हैं। वास्तव में यह एक सुन्नत है।

अध्याय–पांच

इस्लामी सभ्यता व संस्कृति

नबी केवल विश्वास व अक़ीदा और शरीअ़त व आचार्य संहिता की पूर्ति का प्रयास नहीं करते बल्कि वे सभ्यता और संस्कृति के विकास पर भी बल देते हैं। इस्लामी सभ्यता व संस्कृति के कुछ विशेष लक्षण हैं जो उसे अन्य सभ्यताओं से मुमताज़ बनाते हैं।

मुसलमानों की सभ्यता का पहला तत्व आस्था व अक़ीदा पर आधारित इस्लामी जीवन शैली और आचरण है। यह तत्व (फैक्टर) दुनिया के मुसलमानों की सभ्यताओं में अभय खण्ड (कामन फैक्टर) की हैसियत रखता है। मुसलमान दुनिया के किसी भाग, किस देश में बसते हों और उनकी कोई भी भाषा हो और उनकी वेशभूषा कुछ भी हो, यह तत्व, समान रूप से अवश्य पाया जाता है और इस कारण वह एक कुटुम्ब के व्यक्ति और हर जगह एक ही सभ्यता के रखने वाले नज़र आते हैं। इस सभ्यता के लिए "इब्राहीमी सभ्यता" से अधिक उपयुक्त कोई शब्द नहीं।

इब्राहीमी सभ्यता की आधारशिला तौहीद, सहज प्रवृत्ति, सीधी सच्ची सोच, सद्व्यवहार, अल्लाह का डर, मायारूपी संसार के उलझावे से बचने, मानव जाति के प्रति उदारता व रहम और सुरूचि पर टिकी है। हज़रत इब्राहीम अ0 इस सभ्यता के प्रवर्तक थे और हज़रत मुहम्मद सल्ल० उनके वारिस थे और आपने इब्राहीमी सभ्यता मे नये सिरे से जान डाल दी और इसकी पूर्ति की तथा इसे स्थायित्व प्रदान किया और इसे एक विश्वव्यापी सभ्यता का रूप दिया।

इब्राहीमी सभ्यता की तीन विशिष्ट विशेषताएं

इब्राहीमी सभ्यता की तीन विशिष्ट विशेषताएं हैं जो उसे दुनिया की सभ्यता में विशिष्ट स्थान प्रदान करती हैं– (1) अल्लाह के अस्तित्व का यक़ीन (2) तौहीद (अर्थात परमेश्वर एक है) का अक़ीदा (3) शराफ़त और

मानव–मानव एक समान (इन्सानी बराबरी) की स्थायी परिकल्पना। इन विशेषताओं का इतना ज्वलन्त और विशिष्ट स्वरूप कहीं देखने को नहीं मिलता।

मुसलमानों की सभ्यता व संस्कृति को ऐसा समझना चाहिए जैसे अलग–अलग पसन्द, स्थानीय परिस्थितियों, जलवायु और मौसम के अनुसार अलग–अलग फैशन और डिज़ाइन के वस्त्र होते हैं, मगर इन सब कपड़ों पर रंग एक ही चढ़ा हो और उनके एक एक तार में अल्लाह के नाम और उसकी याद का रंग रच बस गया हो। अल्लाह का नाम मुसलमानों की सभ्यता में और उन्हीं की शिराओं में खून की तरह जारी है। मुसलमान बच्चा जब पैदा होता है तो सब से पहले उसके कान में अज़ान दी जाती है और इस प्रकार सबसे पहले स्वयं उसके नाम से पहले उसे जिस नाम से मानूस और परिचित किया जाता है वह अल्लाह का नाम है। वह सात दिन का होता है तो उसका अक़ीक़ा किया जाता है और उसका नाम रखा जाता है उसकी शिक्षा–दीक्षा का शुभारम्भ अल्लाह के नाम से और कुरआन की आयतों से होता है, भारतीय मुसलमानों में आज भी इसी रस्म को ''तस्मीयःख्वानी'' अथवा ''बिस्मिल्लाह कराना'' कहा जाता है और निकाह–विवाह के समय भी खुदा का नाम बीच मे लाया जाता है और उसके नाम की लाज रखने का संकल्प लिया जाता है, खुत्ब–ए–निकाह में खुदा के इस एकसान का उल्लेख किया जाता है कि उसने आदम के वंशज मे मर्द व औरत के जोड़े पैदा किये। ईद का दिन आता है तो भी ईदगाह जाते–आते समय अल्लाह की बड़ाई का तराना पढ़ा जाता है। बक़रईद में अल्लाह के नाम पर कुरबानी करने को कहा गया है।

हर मुसलमान की सबसे बड़ी इच्छा होती है कि जीवन के अन्तिम क्षणों में अन्तिम शब्द और आख़िरी बोल जो उसकी ज़बान पर आये वह अल्लाह का पाक नाम हो, और इसी नाम की रट के साथ वह दुनिया से विदा ले। किसी के इन्तिक़ाल (मृत्यु) का समाचार पाते ही, पढ़े लिखे हर मुसलमान की ज़बान से एकदम जो शब्द निकलता है वह है ''इन्नालिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन'' अर्थात ''हम अल्लाह ही के हैं और हमें उसी के

पास जाना है'' और जब अन्तिम विदा (नमाज़े जनाज़ा) का समय आता है तो उसमें आदि से अन्त तक अल्लाह ही का नाम होता है। जब मय्यत को क़ब्र में उतारा जाता है तो यह कह कर कि अल्लाह के नाम के साथ और उसके पैग़म्बर की मिल्लत व मज़हब पर। क़ब्र में जब उसे रखा जाता है तो उसका मुख अल्लाह के घर (कअ़बा) की ओर होता है और दफ़्न के बाद जब कोई मुसलमान उसकी क़ब्र के पास से गुज़रता है तो सूरः फ़ातिहा पढ़ता है जिसके प्रारम्भ में अल्लाह की बड़ाई बयान की गयी है इस प्रकार मुसलमान के पूरे जीवन में और हर हर क़दम पर अल्लाह का नाम होता है।

यह तो जीवन चक्र की बात हुई दैनिक जीवन में भी अल्लाह का नाम हर समय साथ रहता है। मुसलमान अल्लाह का नाम लेकर खाना शुरूअ़ करता है, अल्लाह के नाम और शुक्र पर खाना समाप्त करता है। उसका खाना–पीना, कपड़े बदलना, शौच का जाना सब अल्लाह के नाम और उसके ध्यान के साथ होता है। छींक आये तो उस पर भी अल्लाह का नाम लेने का निर्देश, और जो सुने उसको भी दुआ़ देने की शिक्षा दी गई है। माशा अल्लाह, इन्शा अल्लाह, लाहौल वला कूवतः इल्ला बिल्लाहि मुस्लिम समाज के अभिन्न अंग और उसकी पहचान व अ़लामत हैं।

मुसलमानों की सभ्यता की दूसरी अन्तर्राष्ट्रीय विशेषता और पहचान उनका तौहीद का अक़ीदा और विश्वास है। यह अद्वैतवाद उनकी आस्था से लेकर कर्म तक और उपासना से लेकर आयोजनों तक हर जगह स्पष्ट दिखाई देती है। उन की मस्जिदों के मीनारें पांच बार इस अक़ीदे का एलान करती हैं कि अल्लाह के सिवा कोई इबादत और बन्दगी के लाइक़ नहीं। उनके घरों को भी इस्लामी उसूल के अनुसार बुतपरस्ती और शिर्क से सुरक्षित होना चाहिए। तस्वीरें, स्टेचु, मूर्तियां उनके लिए नाजायज़ हैं, यहां तक कि बच्चों के खिलौनों में भी इसका लिहाज़ ज़रूरी है। धार्मिक आयोजन हो या राष्ट्रीय त्योहार, राजनीतिक नेताओं का जन्म दिन हो अथवा मज़हबी पेशवाओं की जयन्ती या ध्वजारोहण तस्वीरों और स्टेचु के सामने झुकना, उनके सामने हाथ जोड़कर खड़ा होना या उनको हार

पहनाना मुसलमान के लिए मना और उसकी तौहीद के विपरीत है और जहां कहीं मुसलमान अपनी इस्लामी सभ्यता पर क़ाइम और इस पर कारबन्द होंगे, वह इन कार्यों से बचेंगे। नामों में, आयोजनों में, क़सम खाने मे, बड़ों को श्रद्धा व सम्मान देने में इस्लामी तौहीद की सीमाओं से आगे निकाल जाना और इन बातों में किसी क़ौम की नक़ल, इस्लाम से हटने का पर्याय है।

इस्लामी सभ्यता की तीसरी अन्तर्राष्ट्रीय पहचान इन्सान की शराफ़त और उत्कृष्टता की वह परिकल्पना और मानव समता का वह अक़ीदा है जो मुसलमान की घुट्टी में पड़ा है और जो उसका इस्लामी मिज़ाज बन गया है। इस अक़ीदे का कुदरती नतीजा यह है कि मुसलमान छुआ–छूत की आदत से अपरिचित है। निःसंकोच दूसरे मुसलमान बल्कि दूसरे इन्सान के साथ खाने के लिए तैयार हो जायेगा और दूसरे को अपने खाने में शामिल होने को कहेगा। कई लोग और विभिन्न लोग निःसंकोच एक बर्तन में खाएंगे, एक दूसरे का बचा हुआ पानी पी लेंगे। अमीर–ग़रीब, नौकर–मालिक सब एक कन्धा से कन्धा मिलाकर खड़े होकर नमाज़ पढ़ेंगे कोई कम हैसियत लेकिन इल्म वाला इमाम बन सकता है, और बड़े–बड़े घराने वाले और उच्च पदाधिकारी उस के पीछे नमाज़ पढ़ेंगे।

अन्य प्रमुख विशेषताएं

उक्त प्रमुख विशेषताओं के साथ इस्लामी सभ्यता की कुछ गौण विशेषताएं भी हैं। जैसे अच्छे कामों का दायें हाथ से करना, दायें हाथ से खाना, दायें हाथ से पानी पीना, किसी को कुछ लेना देना आदि।

इस्लामी समाज में पेशे न स्थायी हैं न तुच्छ

इस्लाम में पेशे और सेवाएं स्थायी हैसियत नहीं रखती हैं कि उन्हें बदला न जा सके, न ही उनकी बुनियाद पर क़ौमों और तबक़ों का गठन होता है। लोगों ने विभिन्न समयों में ज़रूरत और सहूलत के अनुसार कोई पेशा अपना लिया। कभी–कभी वह एक अवधि तक सीमित रहा और कभी

कभी कई पीढ़ी तक चला। अब भी कुछ बिरादरियों में एक ही तरह का काम होता है। लेकिन न तो इसकी कोई मज़हबी हैसियत है और न वह मुस्लिम समाज का अटल क़ानून है। इन बिरादरियों में जो व्यक्ति जब चाहता है अपना पेशा और व्यवसाय बदल लेता है। और इस पर किसी को कोई आपत्ति नहीं होती और न इस्लाम में कोई पेशा घटिया दृष्टि से देखा जाता है।

मक्का–मदीना और अ़रब देशों में बड़े महान विद्वानों और प्रतिष्ठित मुसलमानों के नाम के साथ उस पेशे का नाम लगा हुआ है जो उनके पूर्वजों ने किसी ज़माने में इख़्तियार किया था, और इसमें न उनको कोई लज्जा महसूस होती है और न किसी दूसरे की निगाह में वह तुच्छ होते हैं।[1]

विधवा का दूसरा विवाह

विधवा का दूसरा विवाह मुसलमानों के यहां कभी दोषपूर्ण और आपत्तिजनक कार्य नहीं समझा जाता था। यह उनके नबी की सुन्नत थी, और हर युग मे महान विद्वान, ईश्वर के परम भक्त, और वैभवशाली राजा बिना हिचक विधवा नारी से स्वयं शादी करते थे, और अपनी विधवा बहनों और बेटियों का दूसरा विवाह कराते थे। अब भी बहुत सी मुस्लिम विधवाएं अपनी मर्ज़ी या किसी मजबूरी से दोबारा शादी के बिना रहती हैं। किन्तु विधवा की दोबारा शादी का चलन होना चाहिए। अन्य देशों में यह चलन अब भी पाया जाता है और विधवा से शादी कदापि ख़राब बात नहीं।

सलाम करने का रिवाज

मिलने जुलने आने जाने में सलाम का रिवाज है। सलाम करने वाला "अस्सलामु अलैकुम" कहता है जिसका अर्थ है "तुम पर खुदा की

---

1. उदाहरण के लिए हरम शरीफ (मक्के की सबसे बड़ी मस्जिद जिसमें कअ़ब: स्थित है) के इमाम के नाम का आवश्यक अंश "ख़ैयात" (दर्ज़ी) है इसी प्रकार कई विद्वानों के नाम के साथ "हल्लाक़" (नाई), "ज़ैयात" (तेली), सौवाफ़ (रूई वाला) "क़स्साब" (गोश्त बेचने वाला) लगा हुआ है, और उसमें ज़िल्लत अथवा अपमान का कोई पहलू नहीं पाया जाता।

तरफ़ से सलामती हो", इसका जवाब है। " व अलैकुम अस्सलाम" अर्थात तुम पर भी सलामती हो। यह मुसलमानों का अन्तर्राष्ट्रीय सलाम है।

इस्लाम में ज्ञान की प्रतिष्ठा

कुरआन की पहली "वही" 12 फरवरी सन् 611 ई0 के लगभग हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ पर मक्के के निकट "हिरा" नामी गुफ़ा में नाज़िल हुई। सूरः अलक़ की प्रारम्भिक इन पांच आयतों का अनुवाद इस प्रकार है—

"ऐ मुहम्मद अपने परवरदिगार का नाम लेकर पढ़ो जिसने पैदा किया, जिसने इन्सान को खून की फुटकी से बनाया। पढ़ो और तुम्हारा परवरदिगार बड़ा दयालु है जिसने क़लम के ज़रिऐ इल्म सिखाया और इन्सान को वह बातें सिखाई जिनका उसको ज्ञान न था।"

सृष्टा ने अपनी वाणी की इस पहली क़िस्त और दया व रहमत की बरसात के इस पहले छींटें में भी इस वास्तविकता के उद्घोषणा को स्थगित नहीं किया कि ज्ञान और क़लम का चोली दामन का साथ है। हिरा की गुफा में और उसकी तनहाई में जहां एक नबी जो पढ़ा नहीं था, अल्लाह की तरफ़ से दुनिया के मार्गदर्शन के लिए सन्देश लेने गया था और जिस का यह हाल था कि उसने क़लम चलाना स्वयं भी नहीं सीखा था, उस पर 'वही' नाज़िल होती है तो इसका शुभारम्भ "इक़रा" शब्द से होता है अर्थात पढ़ो। क्या विश्व के इतिहास में इसकी नज़ीर कहीं मिल सकती है? यह संकेत था इस ओर कि आप को जो उम्मत दी जाने वाली है, वह उम्मत मात्र ज्ञानार्जन ही न करेगी बल्कि जगतगुरू और ज्ञानमयी होगी वह ज्ञान को इस दुनिया में फैलाने वाली होगी। जो ज़माना आप के हिस्से में आया वह भय का ज़माना नहीं होगा, अज्ञानता का नहीं होगा, ज्ञान के विरोध का नहीं होगा। वह ज़माना वह युग ज्ञान का युग होगा, बुद्धि का युग होगा, हिक्मत का युग, निर्माण का युग होगा, मानव प्रेम और विकास का युग होगा।

आगे कहा गया है कि उस परवरदिगार के नाम से पढ़ो जिसने पैदा किया। उस समय बड़ी ग़लती यह थी कि ज्ञान का रिश्ता परवरदिगार से

टूट गया था, इसलिए ज्ञान सीधी राह से हट गया था। इस टूटे हुए रिश्ते को यहां जोड़ा गया और ज्ञान के साथ परवरदिगार का नाम आया, इसलिए कि ज्ञान उसी का दिया हुआ है, उसी का पैदा किया हुआ और उसी के मार्गदर्शन में ज्ञान का संतुलित विकास सम्भव है। यह दुनिया की सबसे बड़ी क्रान्तिकारी आवाज़ थी जिसे दुनिया के कानों ने सुनी थी जिसकी कोई कल्पना नहीं कर सकता था। यदि दुनिया के साहित्यकारों और बुद्धिजीवों से कहा जाता कि आप बताइये कि 'वही नाज़िल होने वाली है, जो ईशवाणी होगी उसका शुभारम्भ किस शब्द से होगा, तो मैं समझता हूं, उनमें एक आदमी भी, जो उस ज़माने की अज्ञानता से परिचित था, यह नहीं कह सकता था कि वह 'वही' 'इक़रा' शब्द से प्रारम्भ होगी।

ज्ञान और शिक्षा का मार्ग बहुत लम्बा, जोखिमपूर्ण और जटिल् है इसलिए इसका शुभारम्भ खुदा के मार्गदर्शन मे किया गया, यह वह यात्रा है जहां दिन दहाड़े काफ़िले लुटते हैं, पग–पग पर गर्त हैं, घाटियां और नदियां हैं, सांप और बिच्छु हैं, इसलिए इस यात्रा में एक परिपूर्ण पथदर्शक की आवश्यकता है और यह परिपूर्णता केवल ईश्वर में है। बेल–बूटे बनाने का नाम ज्ञान नहीं, खिलौने से खेलने का नाम ज्ञान नहीं वह ज्ञान जो मात्र मनोरंजन के लिए हो, वह ज्ञान नहीं जो एक दूसरे को लड़ाने का नाम है, वह ज्ञान नहीं जो नेशन को नेशन से लड़ाने का काम करे, वह ज्ञान नहीं जो अपने पेट की ख़न्दक को भरने का साधन सिखाने का नाम है, वह ज्ञान नहीं जो ज़बान को केवल प्रयोग करना सिखाता है, बल्कि कहा गया है कि पढ़ो तुम्हारा परवरदिगार बड़ा दयालु है, वह तुम्हारी आवश्यकता से तुम्हारी कमज़ोरियों से कैसे अनभिज्ञ हो सकता है। आप विचार करें कि क़लम की प्रतिष्ठा इससे अधिक किसने बढ़ायी होगी कि हिरा की गुफ़ा में जो पहली "वही" नाज़िल हुई उसमे क़लम को भुलाया नहीं गया, वह क़लम जो उन दिनों शायद ढूंढने से भी मक्का में किसी घर में न मिलता।

अन्त में कहा गया कि ज्ञान अगाध और अपार है इसकी कोई सीमा नहीं। "इन्सान को सिखाया जिसका उसको पहले से ज्ञान न था।" साइंस क्या है? टेक्नोलोजी क्या है? इन्सान चांद पर जा रहा है, अन्तरिक्ष में उड़ाने

भर रहा है, यह सब इसी ईशवाणी "इन्सान को सिखाया जिसका उसको पहले से ज्ञान न था" का करिश्मा नहीं तो क्या है?

ललित कलाएं और मुसलमान

इब्राहीमी सभ्यता की एक विशेषता उसकी गम्भीर यथार्थवादी दृष्टिकोण और ललित कलाओं के बारे में बहुत सोच विचार के मध्यम मार्ग अपनाने वाला दृष्टिकोण है। वह सौन्दर्य, सुव्यवस्था, सलीक़ा और सज–धज की क़दरदान है। किन्तु जिन मनोरंजक कलाओं को युरोप ने "फ़ाइन आर्ट्स" का नाम दिया है उनकी कुछ शाखाओं को वह नाजायज़ करार देती है जैसे नाच, चित्रकला, (जीवधारी चीज़ों की) और बुत तराशी (मूर्तियों का गढ़ना), और कुछ में मध्यम मार्ग की शिक्षा देती है जैसे लय व नग़मा (गायन) कि विशेष बन्धनों के साथ मध्यम मार्ग अपनाते हुए इससे लाभान्वित होना या काम लेना जायज़ है। इन ललित कलाओं में व्यस्तता बहराहाल इसकी आत्मा और इसके उद्देश्य के विपरीत और ख़ुदा से डर, परलोक की चिन्ता और उसके नैतिक स्तर के लिए हानिकारक है और एक मुसलमान से यह आशा की जाती है कि वह इनका ध्यान रखेगा।

मज़हब ज़िन्दगी का संरक्षक है

ज़माने के अन्दर ठहराव भी है और गतिशीलता भी यदि वह इन दोनों विशेषताओं में से किसी एक से वंचित हो जाये तो वह अपनी उपादेयता खो देगा। इसी प्रकार सृष्टि में जो भी चीज़ें हैं, व्यक्ति हैं सब के अन्दर धनात्मक और ऋणात्मक लहरें बराबर अपना काम करती हैं। इन दोनों धाराओं के मिलने से कर्म और कर्तव्य का जन्म होता है। मज़हब हर परिवर्तन का साथ दे यह ज़रूरी नहीं और न ही वांछनीय है। यह किसी थर्मामीटर की परिभाषा तो हो सकती है कि वह तापक्रम बतलाए, यह उस वेदरकाक (वायु की दिशा सूचक यन्त्र) की भी परिभाषा हो सकती। जो किसी हवाई अड्डे या ऊंचे भवन पर लगाया गया हो केवल यह मअ़लूम करने के लिए कि हवा किस ओर की चल रही है लेकिन मज़हब की

परिभाषा नहीं हो सकती। मैं समझता हूं कि आप में से कोई भी ऐसा नहीं होगा जो मज़हब को उसके उच्च स्थान से उतार कर थर्मामीटर अथवा वेदरकाक का स्थान देना चाहता हो और यह कि वह मात्र समय के परिवर्तन की पावती देता रहे, एकनालेज करता रहे। सही आसमानी मज़हब के तो क्या किसी तथाकथित मज़हब के अनुयायी अथवा उसके प्रतिनिधि भी इस पोज़ीशन को स्वीकार कर लेने के लिए तैयार नहीं होंगे।

मज़हब परिवर्तन को एक यथार्थ मानता है और इसके लिए वह सारी गुंजाईश रखता है जो एक सही और जायज़ व स्वाभाविक परिवर्तन के लिए ज़रूरी हों। मज़हब ज़िन्दगी का साथ देता है लेकिन साथ मात्र साथ देने के लिए नहीं है। उसका कर्तव्य यह भी है वह सदाचारी परिवर्तन और सदाचार विहीन परिवर्तन में अन्तर करे और देखे कि उसका झुकाव विध्वंसात्मक है अथवा रचनात्मक, उसका परिणाम मानवता के हक़ मे या कम से कम उस मज़हब के अनुयाइयों के हक़ में क्या होगा? मज़हब जहां गतिशील जीवन का साथ देने वाला है वहां जीवन का लेखाकार संरक्षक भी है। गार्जियन का काम यह नहीं कि जो उसके संरक्षकत्व में हो उसके हर सही ग़लत सोच का साथ दे और उसे प्रमाणित करे। मज़हब ऐसा सिद्धान्त नहीं है कि जहां एक ही प्रकार की मुहर रखी हुई है, एक ही तरह की रोशनाई है और एक ही तरह का हाथ है जो दस्तावेज़ और अभिलेख आये उस पर मुहर लगा दे। यह मज़हब का काम नहीं है। मज़हब पहले उसका जायज़ा लेगा फिर उस पर अपना फैसला सुनायेगा और अगर कोई ग़लत अभिलेख उसके सामने आया है जिससे वह सहमत नहीं अथवा जिसको मानवता के हक़ में अहितकर समझता है तो वह न केवल उस पर मुहर लगाने से इन्कार करेगा बल्कि यह भी प्रयास करेगा कि वह उसे रोके।

यहां नैतिकता और मज़हब मे एक अन्तर पैदा हो जाता है। मज़हब अपनी ज़िम्मेदारी और कर्तव्य समझता है कि ग़लत सोच को रोके। नैतिकता और मनोविज्ञान के विशेषज्ञ की ड्यूटी केवल यह है कि वह ग़लत सोच को इंगित कर दे, या अपना दृष्टिकोण बता दे, लेकिन मज़हब का प्रयास होगा कि वह उसका रास्ता रोक कर खड़ा हो जाये।

अध्याय–छः

आचरण की सभ्यता और मन की सफ़ाई

हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ के अभ्युदय के प्रारम्भिक तथा बुनियादी उद्देश्यों का उल्लेख कुरआन में अल्लाह ने इस प्रकार किया है :–

अनुवाद– "जिस प्रकार (और वरदानों को मिला करके) हमने तुम्हीं में से एक रसूल भेजा है, जो तुम को हमारी आयतें पढ़–पढ़ कर सुनाते और तुम्हें पवित्र व पाक बनाते, और किताब (अर्थात कुरआन) और समझदारी व दानाई सिखाते हैं और ऐसी बातें बताते हैं जो तुम पहले नहीं जानते थे।"

(सूरः अलबक़्र–151)

नबी के आह्वान और अभ्युदय के उद्देश्यों की परिधि में आचरण की सभ्यता और मन की सफ़ाई, आत्मा की शुद्धता का बड़ा महत्वूपर्ण स्थान है। ऊपर की आयत में हिकमत का अर्थ है उच्च आचरण और इस्लामी आदाब। सूरः अल–इस्त्रा की 39 वीं आयत के तुरन्त बाद "हिकमत" का शब्द आया है। खुदा फ़रमाता है :–

अनुवाद– "(ऐ पैग़म्बर) यह उन (हिदायतों) में से हैं जो खुदा ने दानाई की बातें तुम्हारी तरफ़ "वही" की है।"

(सुरः अल–इस्त्रा–39)

स्वयं अल्लाह के नबी ने अपने अभ्युदय के उद्देश्य का उल्लेख करते हुए फ़रमाया :–

अनुवाद– "मेरा अभ्युदय ही इस लिए हुआ कि मैं उच्च आचरण को परिपूर्णता तक पहुंचाऊं"

हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ सदाचरण का बेहतरीन नूमना और परिपूर्ण

आचरण थे। हज़रत आइशा रज़ि0 से आपके आचरण के बारे में पूछा गया तो उन्होंने फरमाया :–

"आपके अख़लाक़ (आचरण) मालूम करना हो तो कुरआन देखो।"

हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ के सानिध्य में एक ऐसी पीढ़ी पली–बढ़ी जो उच्च आचरण और सद्गुणों से सुसज्जित और बुरी आदतों, बुरे स्वभाव, अवगुणों, अज्ञानता के प्रभावों और शैतान के बहकावों से सुरक्षित थी। अल्लाह के नबी ने भी अपने इस कथन से इसकी पुष्टि की। आपने कहा–

"सबसे अच्छे लोग मेरे ज़माने के लोग हैं।"

एक बड़े सहाबी अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 ने बड़ी अलंकृत शैली में सहाबा का परिचय कराया है। वह कहते हैं।

"पवित्र आत्मा, ज्ञान के गहरे, औपचारिकताओं से बरी।"

इन्सान साज़ी (मानव निर्माण) का एक स्थायी कारख़ाना

हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ की वफ़ात (मृत्यु) के बाद नबी के सानिध्य का यह क्रम जब टूट गया तो कुरआन, हदीस और नबी की जीवनी इस रिक्ति की पूर्ति करते रहे। किन्तु विभिन्न राजनीतिक, नैतिक व आर्थिक कारणों के प्रभाव और समय परिवर्तन के कारण हदीस के शैक्षिक और नैतिक पक्ष पर समकालीन शैली जो समाज के लिए अधिक आकर्षक बन गयी थी, भारी पड़ती चली गयी और जीवन गाथा (सीरत) और हदीस वाद–विवाद और शास्त्रार्थ में सीमित हो कर रह गई। लेकिन इस पर भी हदीस व सीरत (कुरआन के बाद) आचरण की सभ्यता दिलों को मांझने और मानव आत्माओं को चमकाने का सबसे प्रभावी और आसान साधन है।

हदीस की किताबों में जो विषय वस्तु है वह दो प्रकार की है, एक का सम्बन्ध कर्म उनके बाह्य स्वरूप से है जो महसूस हो जैसे रूकूअ, सज्दः, तिलावत, तस्बीह, दुआ, जाप, तबलीग़, जिहाद, सुलह व जंग में शत्रु के साथ व्यवहार आदि और दूसरी क़िस्म का सम्बन्ध अन्तःकरण की उनके

अनुभूतियों से है जो इन कर्मों के सम्पादन के साथ पायी जाती थी। इनके अन्तर्गत निष्ठा व लगन, धैर्य व धीरज, सन्तोष व साधना, त्याग व तप, अदब व हया, तन्मयता व तल्लीनता, विनय व विनती, लोक पर परलोक को प्राथमिकता, परमेश्वर को राज़ी करने व उसके दर्शन की अभिलाषा, मध्यममार्गी स्वभाव, सुरूचि, सहृदयता दीन–दुखियों के साथ सहानुभूति, अनुभूति का रसास्वादन, भावनाओं की पवित्रता, साहस, एहसान व नेकी, सज्जनता व मानवता, अशुभ चाहने वालों को क्षमा, सम्बन्ध तोड़ने वालों के साथ उदारता और न देने वालों के साथ देने का बर्ताव आदि आते हैं।

यहां हम हज़रत मुहम्मद सल्ल० के व्यापक और सारगर्भित गुणों का वर्णन करेंगे। यह उन लोगों के बयान किये हुए हैं जो उनके सर्वाधिक निकट और उनके जीवन के हर पहलू से भलीभांति परिचित थे और जो मानव प्रवृत्ति और नैतिक मूल्यों की गूढ़ता पर गहरी नज़र रखते थे।

हज़रत मुहम्मद सल्ल0 का आचरण और स्वभाव

हिन्द बिन अबी हाला जो खदीजा रज़ि0 के बेटे और हसन व हुसैन रज़ि0 के मामा हैं, कहते हैं कि –

"अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद सल्ल० हर समय आख़िरत की सोच में रहते। यह सोच और चिन्ता बराबर बनी रहती, प्रायः खामोश रहते, देर–देर तक खामोश रहते, अनावश्यक न बोलते, बोलते तो प्रत्येक शब्द का साफ़ उच्चारण करते (अर्थात घमंडियों की तरह अधकटे शब्द का प्रयोग न करते), न अधिक बोलते न बुहत कम। आप के स्वभाव और बातचीत में नर्मी थी। आदत में कठोरपन और बेमुरव्वती न थी। न किसी का अपमान करते, और न अपने लिए अपमान पसन्द करते। नेअ़मत (वरदान) की बड़ी क़दर करते और उसको बहुत ज़्यादा जानते चाहे वह कितनी ही कम क्यों न हो और उसकी बुराई न करते। खाने पीने की चीज़ों की न बुराई करते न प्रशंसा। दुनिया और दुनिया से सम्बन्धित जो भी चीज़ होती उस पर कभी गुस्सा न करते, लेकिन जब खुदा के किसी हक़ को कुचला जाता तो उस

समय आपके शौर्य के सामने कोई चीज़ ठहर न सकती, यहां तक कि आप उसका बदला ले लेते। आप को अपने लिए स्वयं क्रोध न आता, न अपने लिए बदला लेते, जब संकेत करते तो पूरे हाथ के साथ इशारा करते, जब किसी बात पर आश्चर्य करते तो उसको पलट देते। बात करते समय दाएं हाथ की हथेली को बाएं हाथ के अंगूठे से मिलाते, गुस्सा और नागवारी (अप्रिय) की बात होती तो मुख उधर से फेर लेते, प्रसन्न होते तो नज़रें झुका लेते, आप का हंसना अधिकतर मुस्कुराना था जिससे केवल आपके के दांत जो बरसात के ओलो की तरह पाक, साफ़ होते, ज़ाहिर होते।"

हज़रत अली रज़ि0 जो बड़े ज्ञानी और जानकार थे और जो हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ के निकटतम व्यक्तियों में से थे और ज्ञान व साहित्य मे विशिष्ट स्थान रखते थे, नबी के गुणों का बयान इस प्रकार करते हैं :–

आप स्वभाव से अपशब्द, बेहयाई व बेशर्मी से दूर थे, बाज़ार में कभी आप ज़ोर से न बोलते, बुराई का बदला बुराई से न देते, बल्कि क्षमा कर देते, आपने किसी पर भी कभी हाथ नहीं उठाया अल्लाह की राह में जिहाद को छोड़कर किसी सेवक अथवा औरत पर आप ने कभी हाथ न उठाया। मैंने आप को किसी जुल्म व ज्यादती का बदला लेते हुए भी नहीं देखा, जब तक कि अल्लाह के आदेशों का उल्लंघन न हो, और उस पर आंच न आये। हां, यदि अल्लाह के किसी आदेश को कुचला जाता और उस की गरिमा पर आंच आती तो आप उसके लिए सबसे अधिक क्रोधित होते। दो चीज़ें सामने होतीं तो हमेशा आसान चीज़ का आप चयन करते। जब घर पर होते तो आप आम इन्सानों की तरह नज़र आते, अपने कपड़ों को साफ़ करते, बकरी का दूध दुहते और अपने सारे कार्य स्वयं करते।

अपनी ज़बान सुरक्षित रखते और केवल उसी चीज़ के लिए खोलते जिससे आप को सरोकार होता। लोगों को सांत्वना देते और घृणा न फैलने देते, किसी क़ौम व बिरादरी का प्रतिष्ठित व्यक्ति आता तो उसको सम्मान देते, लोगों के बारे में नपी तुली बात कहते और अपनी प्रसन्नता व आचरण से उनको वंचित न रखते, अपने साथियों के हालात की बराबर ख़बर रखते। लोगों से लोगों के मुआमले के बारे में पूछा करते।

अच्छी बात की अच्छाई बयान करते और उसे सशक्त बनाते। बुरी बात की बुराई करते और उसको कमज़ोर करते। आप का मुआमला मध्यम मार्गी और समता का था, इसमें उतार चढ़ाव न होता था। आप किसी बात से ग़फ़लत न करते, इस डर से कि कहीं दूसरे लोग भी ग़ाफ़िल न होने लगें और उकता जाएं। हर हाल और हर मौके के लिए आप के पास उस परिस्थिति के अनुरूप सामान था। न हक़ (सत्य) के मुआमले में कोताही करते न हद से आगे बढ़ते। आप के सानिध्य में जो लोग रहते थे वह सर्वोत्कृष्ट होते थे जो ग़म ख़्वारी व सहृदयता और परोपकार में सब से आगे हो। खुदा का नाम लेकर खड़े होते और खुदा का नाम लेकर बैठते। जब कहीं पदार्पण करते जहां तक लोग बैठे होते उसी जगह आसन ग्रहण करते, और इसका हुक्म भी देते। उपस्थित जनों में प्रत्येक व्यक्ति पर ध्यान देते। आप की संगत में बैठने वाला हर व्यक्ति यह समझता था कि उससे बढ़कर आप की निगाह में कोई और नहीं है। यदि कोई व्यक्ति आपको किसी ग़रज़ से बिठा लेता या किसी ज़रूरत में आपसे बात करता तो बड़े धैर्य के साथ उसकी पूरी बातें सुनते, यहां तक की वह स्वयं ही अपनी बात पूरी करके प्रस्थान करता। यदि कोई व्यक्ति आप से कुछ सवाल करता और कुछ मदद चाहता तो बिना उसकी ज़रूरत पूरी किये उसे वापस न करते या कम से कम नर्मी से जवाब देते। आप का सदाचरण तमाम लोगों के लिए आम था, और आप उनके हक़ में बाप हो गये थे तमाम लोग हक़ के मुआमले में आपकी नज़र में बराबर थे आप का सत्संग ज्ञान, भक्ति, हया और शर्म और धैर्य व अमानतदारी का सत्संग था। आपकी मजलिस में न कोई ज़ोर से बोलता था, न किसी के अवगुण बयान किये जाते थे, न किसी की प्रतिष्ठा को आघात पहुंचाया जाता था, न कमज़ोरियों का प्रचार किया जाता था। सब एक दूसरे के बराबर थे और केवल खुदा के डर के आधार पर उनको एक दूसरे पर प्राथमिकता प्राप्त होती थी। इसमें लोग बड़ों का आदर और छोटों के साथ दया प्रेम का मुआमला करते थे। ज़रूरत मन्द को अपने पर प्राथमिकता देते थे। यात्रियों और नव आगन्तुकों की सुरक्षा करते और उनकी सुख–सुविधा का ध्यान रखते।

आप सदैव प्रसन्नचित रहते। बड़े विनम्र थे। न कठोर प्रकृति के थे और न सख़्त बात कहने के आदी थे। न चिल्लाकर बोलने वाले, न घमंडियो की तरह बात करने वाले। न किसी को ऐब लगाने वाले। न तंग दिल और कंजूस। जो बात आप को पसन्द न होती तो उसके प्रति उदासीन रहते, और स्पष्टतः उससे निराश भी न होते और उसका जवाब भी न देते (अर्थात उसकी अनदेखी कर देते)। तीन बातों से आपने अपने को बिल्कुल बचा रखा था – एक झगड़ा, दूसरे घमंड और तीसरे अनावश्यक और बेमक़सद काम। लोगों को भी तीन बातों से आप ने बचा रखा था। न किसी की बुराई करते थे, न उसको ऐब लगाते थे (दोषारोपण), और न उसकी कमज़ोरियों और गोपनीय बातों के पीछे पड़ते थे। और केवल वह बात करते थे जिन पर सवाब (पुण्य) की उम्मीद होती थी। जब आप बात करते तो उपस्थित जन अदब से इस प्रकार सर झुका लेते थे कि मालूम होता था कि उनके सरों पर चिड़ियां बैठी हुई थी (अर्थात चुपचाप बिना हिले डुले) जब आप ख़ामोश होते तब यह लोग बात करते। आप के सामने कभी विवाद न करते। यदि आप की मजलिस में कोई व्यक्ति बात करता तो शेष सभी लोग शान्त होकर सुनते, यहां तक कि वह अपनी बात समाप्त कर लेता। आप के सामने हर व्यक्ति को पूरे इत्मीनान से अपनी बात कहने का अवसर मिलता। जिस बात पर सब लोग हंसते उस पर आप भी हंसते जिस पर सब आश्चर्य व्यक्त करते आप भी आश्चर्य व्यक्त करते। यात्री और परदेसी के हर प्रकार के सवाल को धैर्य से सुनते। आप कहते ''तुम किसी ज़रूरत मन्द को पाओ तो उसकी मदद करो।'' आप प्रशंसा उसी व्यक्ति की स्वीकार करते जो नार्मल होता। कोई बात कह रहा होता तो न बोलते और उसकी बात न काटते, हां यदि हद से बढ़ने लगता तो उस को मना करते, या मजलिस से उठकर उसकी बात को काट देते।

आप सर्वाधिक उदार, सहृदय, सत्यवादी, नर्म मिज़ाज और व्यवहार मे अत्यन्त कृपालु थे। जो पहली बार आपको देखता उस पर आप का प्रभाव बैठ जाता, आप के सत्संग में रहता और जान पहचान प्राप्त होती तो आप का फ़रेफ़्ता (मुग्ध) हो जाता। आप की चर्चा करने वाला कहता कि न आप

से पहले आप जैसा कोई व्यक्ति देखा न आप के बाद।''

आप के उच्च आचरण पर एक दृष्टि

''हज़रत मुहम्मदल सल्ल॰ तमाम लोगों में सबसे अधिक उदार नर्म तबीअत और खानदानी लिहाज़ से सबसे अधिक आदरणीय हैं। अपने सत्संगियों से अलग थलग न रहते थे उनमें पूरा मेल जोल रखते थे, उनसे बातें करते, उनके बच्चों के साथ खुशमिज़ाजी और विनोदप्रियता का आचरण करते, उनके बच्चों को अपनी गोद में बिठाते। गुलाम और आज़ाद, दीन दुखिया सब का निमन्त्रण स्वीकार करते, बीमारों को देखने जाते चाहे बस्ती के छोर पर हो, क्षमाप्रार्थी को क्षमा करते। आप को सहाबा की मजलिस में कभी पैर फैलाये हुए नहीं देखा गया ताकि किसी को तंगी न हो सहाबा एक दूसरे से कविता सुनते सुनाते और अज्ञानता की किसी बात का उल्लेख करते तो आप ख़ामोश रहते या मुस्कुरा देते। आप अत्यन्त नर्म दिल मुहब्बत करने वाले और कृपालु थे। अपनी बेटी फ़ातिमा से कहते : ''मेरे दोनों बेटों (हसन व हुसैन) को बुलाओ।'' वह दौड़ते हुए आते तो आप दोनों को प्यार करते और उनको अपने सीने से लगाते। आपके एक नाती को आप की गोद में इस हाल में दिया कि उसकी सांस उखड़ चुकी थी, तो आप की आंखों में आंसू जारी हो गये। हज़रत साद ने कहा, ''या रसूलुल्लाह यह क्या है? आपने फ़रमाया ''दया है जो अल्लाह अपने भक्तों में जिसके दिल में चाहता है डाल देता है। और निःसन्देह अल्लाह अपने दयावान भक्तों ही पर दया करता है।''

जब बदर में युद्ध में बन्धकों के साथ हज़रत अब्बास[1] को भी बन्धक बनाया गया और अल्लाह के रसूल ने उनकी कराह सुनी तो आप को नींद नहीं आयी। जब अंसार को यह बात मालूम हुई तो उन्होंने अब्बास रज़ि0 के बन्धन खोल दिये और इच्छा व्यक्त की कि उनको छोड़ दिया जाये लेकिन आप ने इस बात को स्वीकार नहीं किया।

हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ बड़े ही शीलवान और मेहरबान थे। लोगों

1. हज़रत अ़ब्बास रज़ि0 आप के चाचा थे।

के स्वभाव में जो उक्साहट होती है और मन के क्षणिक ठहराव का बराबर ध्यान रखते थे इसी लिए प्रवचन व उपदेश समयान्तर के साथ करते थे कि कहीं उक्ताहट न पैदा होने लगे। अगर किसी बच्चे का रोना सुन लेते तो नमाज़ संक्षिप्त कर देते। और कहते, "मैं नमाज़ के लिए खड़ा होता हूं तो इस विचार से नमाज़ संक्षिप्त कर देता हूं कि उसकी मां को तकलीफ़ न हो।"

आप कहते थे, तुम में कोई व्यक्ति मुझ से किसी दूसरे की शिकायत न करे इस लिए कि मैं चाहता हूं कि तुम्हारे सामने इस हाल में आऊं कि मेरा दिल बिल्कुल साफ़ हो। आप कहते, जिसने तर्के में माल छोड़ा वह उसके वारिसों का है, कुछ कर्ज़ आदि बाक़ी है तो वह हमारे ज़िम्मे। आप घर में आम लोगों की तरह रहते, हज़रत आयशा रज़ि० कहती हैं कि आप अपने कपड़ों को भी साफ़ कर लेते और अपना काम स्वयं करते। अपने कपड़ों में पेवन्द लगा लेते थे, जूता गांठ लेते थे। हज़रत आयशा रज़ि० से पूछा गया कि आप अपने घर में किस तरह रहते थे? उन्होंने उत्तर दिया, आप घर के काम काज में रहते थे, जब नमाज़ का समय आता तो नमाज़ के लिए बाहर चले जाते। हज़रत अनस बयान करते हैं कि मैंने किसी व्यक्ति को अल्लाह के रसूल से अधिक अपने परिवार जनों के प्रति कृपालु व दयालु नहीं देखा।

हज़रत अबू हुरैरः रज़ि० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने किसी खाने में कभी कोई ऐब नहीं निकाला। इच्छा हुई तो खा लिया, नापसन्द हुआ तो छोड़ दिया। वह आगे कहते हैं कि मैंने आप की दस साल सेवा की, आपने कभी "हूं" भी नहीं किया। और न यह कहा कि अमूक कार्य तुमने क्यों किया और अमुक कार्य तुमने क्यों न किया। आप के साथी आप के लिए इस विचार से खड़े नहीं होते थे कि आप इसको पसन्द नहीं करते थे। आप कहते कि, मेरी इस प्रकार आगे बढ़कर प्रशंसा न करो, जिस प्रकार ईसाइयों ने हज़रत ईसा अ० के साथ किया था, मैं तो एक भक्त हूं। तुम मुझे अल्लाह का भक्त और उसका रसूल कहो अदी बिन हातिम कहते हैं कि मैं जब आप की सेवा में उपस्थित हुआ तो आपने मुझ

को अपने घर बुलाया। मैं गया तो आप की बांदी ने तकिया टेक लगाने के लिए पेश किया। आपने तकिए को मेरे और अपने दरमियान रख दिया और स्वयं ज़मीन पर बैठ गये। अदी कहते हैं कि इससे मैं समझ गया कि वह बादशाह नहीं हैं। एक व्यक्ति ने आपको देखा तो आपके शौर्य से कांप गया। आप ने उससे कहा कि "घबराओ नहीं, मैं कोई बादशाह नहीं हूं। मैं कुरैश की एक महिला का बेटा हूं। आप घर में झाड़ू दे लेते, ऊंट बांधते, उनको चारा देते और बाज़ार से सौदा सुलूफ ले आया करते थे।"

आप को किसी व्यक्ति के बारे में ऐसी बात मालूम होती जो आप को नापसन्द होती तो यह न कहते कि अमुक व्यक्ति ऐसा क्यों करता है। बल्कि यूं कहते कि लोगों को क्या हो गया है कि ऐसे कर्म करते हैं या ऐसी बातें ज़बान से निकालते हैं। इस प्रकार नाम लिए बिना उस कर्म से रोकते।

आप कमज़ोर व बेज़बान जानवरों और चौपाओं के प्रति सहानुभूति रखते और उनके साथ नर्मी का हुक्म फ़रमाते। आप कहते, "अल्लाह ने हर चीज़ के साथ अच्छा मुआ़मला करने और नर्मी से बर्ताव करने का हुक्म दिया है, इसलिए ज़ब्ह करो तो अच्छी तरह करो, तुम में से जो ज़ब्ह करना चाहे वह अपनी छुरी पहले तेज़ कर ले और जिस जानवर को ज़ब्ह करना हो उसे आराम दें। आगे कहा है कि, "इन बेज़बान जानवरों के मुआ़मले में अल्लाह से डरो। इन पर सवारी करो तो अच्छी तरह, उनको खाओ तो इस हालत में कि वह अच्छी हालत मे हों, सेवक नौकर और मज़दूर व गुलाम के साथ अच्छे बरताव की शिक्षा देते" और कहते, जो तुम खाते हो वही उनको खिलाओ जो तुम पहनते हो वही उनको पहनाओ, और अल्लाह की मख़लूक़ को कष्ट न पहुंचाओ। जिनको अल्लाह ने तुम्हारे अधीन किया है तुम्हारे भाई, तुम्हारे सेवक और मददगार हैं। जिसका भाई उसके मातहत हो उसको चाहिए कि जो स्वयं खाता है, वही उसको खिलाये जो स्वयं पहनता है वही उसको पहनाये। उनके सुपुर्द ऐसा काम न करो, जो उनकी ताक़त से बाहर हो, यदि ऐसा करना ही पड़े तो फिर उनका हाथ बटाओ।

एक दिन एक ग्रामीण अनपढ़ आप के पास आया और पूछा कि मैं

अपने नौकर को एक दिन में कितनी बार क्षमा करूं? आप सल्ल॰ ने कहा सत्तर बार। और फ़रमाया, "मज़दूर को उसकी मज़दूरी उसका पसीना सूखने से पहले दे दो।"

हज़रत मुहम्मद (सल्ल) का स्वभाव

आदि काल से प्रकृति का नियम है कि व्यक्ति अपने प्रिय व्यक्तित्व की आदतों, आचरण व स्वभाव को अपनाने का प्रयास करता है। यद्यपि इस पर कोई क़ानूनी पाबन्दी आइद नहीं होती तथापि यह दुनिया का चलन रहा है। यही कारण है कि पैग़म्बर मुहम्मद सल्ल॰ के आचरण और स्वभाव पर महान ग्रन्थ प्राचीन काल में लिखे गये और आज भी सिलसिला जारी है। इन किताबों में सबसे अधिक ख्याति इमाम तिरमिज़ी की किताब "शमायल" को प्राप्त हुई है। इसी किताब से पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ के स्वभाव के बारे में उदाहरण यहां प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

अल्लाह के रसूल जब चलते तो ऐसा मालूम होता कि मानो नीचे उतर रहे हैं। जब किसी की ओर ध्यान देते तो पूरे शरीर से फिर कर ध्यान देते। आप की निगाह नीचे रहती थी। चलने में आप सहाबा को अपने आगे कर देते थे। और आप पीछे रहते थे। जिस से मिलते सलाम करने में पहल करते। आप के बाल कंधों तक थे, और इन पट्टों से जो कान की लौ तक हुआ करते हैं। ज़्यादा और मोढ़ों तक होते हैं उनसे कम थे (अर्थात न अधिक लम्बे बहुत छोटे बल्कि औसत) आपने मांग भी निकाली है। सर में प्रायः तेल रखते थे, और दाढ़ी में कंघी खूब करते थे। जब वह वुज़ू करते या कंघी करते या मोज़ा पहनते तो दाहिने से शुरू करना पसन्द करते। आपके पास एक सुर्मेदानी थी जिससे हर रात को तीन बार एक आंख में और तीन बार दूसरी आंख में सुर्मा लगाया करते। कपड़ों में कुर्ता सबसे अधिक पसन्द था। जब कोई नया कपड़ा पहनते तो खुशी से उसका नाम लेते और दुआ पढ़ते। और फ़रमाते कि सफ़ेद कपड़े पहना करो, और सफ़ेद ही कपड़ों मे मुर्दों को दफ़न करना चाहिए। यह बेहतरीन कपड़ों में से है। एक बार नजाशी ने आप की सेवा में दो काले सादे मोज़े भेजे आप ने उनको पहना और वुज़ू के बाद उन पर मसह भी किया, और ऐसे जूतों में नमाज़

पढ़ी जिनमें दूसरा चमड़ा सिला हुआ था और यह कहते कि एक जूता पहन कर कोई न चले। या दोनों पहन कर चले या दोनों निकाल कर। बाएं हाथ से खाने या केवल एक जूता पहन कर चलने से आप मना करते। और कहते, जूता पहनो तो पहले दाहिना पैर डालो और उतारो तो पहले बायां पैर निकालो। आपने दाहिने हाथ में अंगूठी पहनी है। और एक अंगूठी बनवाई जिसमें पहली पंक्ति में "मुहम्मद" दूसरी में "रसूल" और तीसरी में "अल्लाह" लिखा था। जब शौच को जाते तो अंगूठी उतार देते।

मक्के की विजय के अवसर पर आपने जब मक्के में प्रवेश किया तो सर पर काली पगड़ी थी। पगड़ी जब पहनते तो उसका सिरा दोनों मोढ़ों के बीच डाल देते। आप की लुंगी की ऊंचाई आधी पिंडलियों तक होती। आप टेक लगाकर नहीं खाते थे। आप को कद्दू, लौकी पसन्द थी और हल्वा और शहद भी। गोश्त आप को कभी कभी मुयस्सर आता। आप कहते, जो व्यक्ति बिना खुदा का नाम लिए खाना खाता है उसके साथ शैतान सम्मिलित होता है। और कहते, अल्लाह इससे खुश होता है कि बन्दा कुछ खाये और कुछ पिये तो उस पर अल्लाह का शुक्र अदा करे। ठंडा और मीठा पानी आप को सबसे अधिक पसन्द था। आप फ़रमाते, खाने और पानी का बदल (विकल्प) दूध की तरह कोई दूसरी चीज़ नहीं। आप ने ज़मज़म खड़े होकर पिया। और पानी तीन सांस में बैठ कर पीते।

आप के पास एक इत्रदान था जिससे इत्र लगाया करते थे। कोई इत्र भेंट करता तो उसे स्वीकार करते। आप कहते, "तीन चीज़ें रद्द नहीं करना चाहिए, तकिया, खुशबू और दूध।" फ़रमाया, मर्दाना खुशबू वह है जिसकी खुशबू तेज़ हो और रंग हल्का। और ज़नाना खुशबू वह है जिसका रंग गहरा और खुशबू हल्की। कभी कभी आप बड़े सटीक शेअ़र भी पढ़ते। आपने कविता पाठ की इजाज़त भी दी है। और उस पर इनआ़म भी दिया है और इसको पसन्द भी किया है। आप ने कअ़ब बिन मालिक का क़सीदा (स्तुति) सुना और उनको चादर इनआ़म में दिया।

आप जब आराम करते तो दाहिना हाथ अपने दाएं गाल के नीचे रख लेते। आप का बिस्तर चमड़े का था जिस में खजूर की छाल भरी थी।

अध्याय–सात

नारी की प्रतिष्ठा और उसके अधिकारों की बहाली

मानव समाज में नारी की प्रतिष्ठा और उसके अधिकारों की बहाली की दिशा में इस्लाम का विशिष्ट रोल है। उसने नारी की प्रतिष्ठा को बहाल किया, समाज में उसे उचित स्थान दिलाया, समाज में व्याप्त ज़ालिम क़ानून, अन्यायपूर्ण प्रथाओं और पुरूषों के अपने ही को सब कुछ जानने की भावना से उसे छुटकारा दिलाया कुरआन मजीद में एक सरसरी नज़र भी औरत के बारे में आज्ञानतापूर्ण दृष्टिकोण और कुरआनी व इस्लामी दृष्टिकोण के खुले अन्तर को समझने के लिए काफ़ी है।[1]

कुरआन का वह अंश जो नारी के सम्बन्ध में नाज़िल हुआ है, नारी के अन्दर इसलिए आत्मविश्वास उत्पन्न करता है कि उसके अनुसार समाज में और ईश्वर के निकट नारी का एक सुनिश्चित स्थान है। वह धर्म व ज्ञान, इस्लाम की सेवा, भलाई के कार्यों में सहयोग और नेक व शुद्धचरित्र समाज की संरचना में पूरी तरह हिस्सा ले सकती है। कुरआन की आयतें कर्म के फल, मोक्ष व मुक्ति के बयान में हमेशा पुरूषों के साथ स्त्रियों का भी वर्णन करती है। उदाहरण के लिए यहां कुरआन की आयतों के अनुवाद दिये जा रहे हैं।

अनुवाद– ''और जो कोई सत्कर्म करेगा, पुरूष हो अथवा स्त्री और वह ईमान वाला हो ऐसे लोग जन्नत में दाख़िल होंगे। और उन पर तनिक भी अत्याचार न होगा।''

(सूरः निसा–124)

1. इस्लाम से पूर्व की दशा के लिए देखें ''अकादमी आफ़ इस्लामिक रिसर्च एण्ड पब्लीकेशन, नदवा, लखनऊ से प्रकाशित लेखक की पुस्तक ''नारी की प्रतिष्ठा और उसके अधिकारों की बहाली'' पृ0 1–13

अनुवाद– "सो उनकी दुआ को उनके पालनहार ने कुबूल कर लिया, क्योंकि मैं तुम में किसी कर्म करने वाले के (चाहे पुरूष हो या स्त्री) कर्म को नष्ट नहीं होने देता, तुम आपस में एक दूसरे के पूरक हो।"

(सूरः आले इमरान–195)

इसी प्रकार कुरआन पवित्र जीवन के साधन व स्रोत प्रदान करने के अवसर पर भी पुरूषों के साथ स्त्रियों को याद रखता है। बल्कि उसके लिए ज़मानत देता है, और उसका वअ़दा करता है।

"पवित्र जीवन" का अर्थ है– मिसाली और कामयाब ज़िन्दगी जिसमें इज़्ज़त और इत्मिनान (सम्मान व सन्तोष) हो। इस का अर्थ बड़ा व्यापक है।" कुरआन कहता है :–

अनुवाद– "नेक अमल (सत्य कर्म) जो कोई करेगा पुरूष हो अथवा स्त्री शर्त यह है कि ईमान वाला हो, तो हम उसे अवश्य एक पवित्र जीवन प्रदान करेंगे। और हम उन्हें उनके अच्छे कर्मों के बदले में अवश्य बदला देंगे।"

(सूरः अन्नहल–97)

सद्‌गुण, सत्यकर्म तथा धर्म के प्रमुख अंशों का वर्णन करते समय कुरआन पुरूषों के साथ स्त्रियों का मात्र उल्लेख तथा यह संकेत ही नहीं करता कि सत्कर्मों और सद्‌गुणों में पुरूष एक एक गुण को अलग बयान करता है, और जब पुरूषों के उस गुण का उल्लेख करता है तो इसी गुण से स्त्रियों को भी प्रशंसित करता है और उनका उल्लेख है भले ही इसके लिए विस्तृत वर्णन शैली अपनानी पड़े।

इसकी हिकमत यह है कि गुणों में शक्ति और सामर्थ्य रखने वाले पुरूषों के समकक्ष स्त्रियों को समझने पर वह मानव मन तैयार नहीं होता जिसका पोषण ग़ैर–इस्लामी धर्मो व दर्शनशास्त्र तथा प्राचीन सभ्यता की छत्र–छाया में हुआ है। ऐसी मनोवृत्ति ने सदैव पुरूषों और स्त्रियों में अन्तर किया है और स्त्रियों को अनेक अच्छी बातों में पुरूषों के साथ सम्मिलित होने से भी अलग कर रखा है, उसके हस्तक्षेप और आगे निकल जाने को

सहन करना तो दूर की बात रही। कुरआन कहता है :–

अनुवाद– "बेशक इस्लाम वाले और इस्लाम वालियों, और ईमान वाले और ईमान वालियों, आज्ञाकारी पुरूष और आज्ञाकारी स्त्रियां और सच्चे पुरूष और सच्ची स्त्रियां, और सब्र करने वाले पुरूष और सब्र करने वाली स्त्रियां और (अल्लाह के सामने) गिड़गिड़ाने वाले पुरूष और गिड़गिड़ाने वाली स्त्रियां, और खैरात करने वाले पुरूष और खैरात करने वाली स्त्रियां, और रोज़ा रखने वाले और रखने वालियां और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करने वाले और हिफ़ाज़त करने वालियां और अल्लाह को कसरत से याद करने वाले और याद करने वालियां इन (सब) के लिए अल्लाह ने (पापों की) क्षमा और बड़ा प्रतिफल (बदला) तैयार कर रखा है।"

(सूरः अहज़ाब–35)

कुरआन सिर्फ आज्ञापालन व उपासना के सिलसिले में स्त्रियों का उल्लेख नहीं करता बल्कि सक्षम पुरूषों, विद्वानों, साहसी पुरूषों, धार्मिक व नैतिक लेखा–जोखा और अच्छी बातों का हुक्म करने और बुरी बातों से मना करने की राह में यातनाएं झेलने वालों के साथ भी उनका उल्लेख करता है। कुरआन स्त्री–पुरूष को एक जुट होकर भलाई व ईश्वर से भय (ख़ैर व तक़वा) पर सहयोग करने वाली टोली के रूप में देखना चाहता है। सूरः तौबा में है :–

अनुवाद– "और ईमान वाले और ईमान वालियां आपस में एक दूसरे के सहयोगी हैं। नेक बातों का आपस में हुक्म देते हैं और बुरी बातों से रोकते हैं, और नमाज़ की पाबन्दी रखते हैं और ज़कात देते रहते हैं, और अल्लाह और उसके रसूल के हुक्म पर चलते हैं। यह वह लोग हैं कि अल्लाह उन पर ज़रूर रहमत करेगा। बेशक अल्लाह बड़े इख़्तियार और हिकमत वाला है।"

(सूरः तौबा–71)

कुरआन मानवता के सर्वोत्कृष्ट लक्ष्य की प्राप्ति का साधन लिंग, रंग रक्त भेद से परे केवल तक़्वा (अल्लाह का लिहाज़, उसका डर) को ठहराता है। कुरआन कहता है :–

अनुवाद– "ऐ लोगों हमने तुम (सब) को एक मर्द और एक औरत से पैदा किया है और तुम्हारी विभिन्न जातियां ठहराई हैं ताकि एक दूसरे को पहचान सको। बेशक तुम में सबसे इज़्ज़त वाला वह है जो सबसे ज़्यादा परहेज़गार है। बेशक अल्लाह खूब जानने वाला और पूरी खबर रखने वाला है।

(सूरः हुजरात–13)

यह सब बातें औरतों में साहस, स्वाभिमान तथा आत्मविश्वास उत्पन्न करने और आधुनिक मनोविज्ञान के शब्दों में नारी को हीनता की भावना (Inferiority Complex) से दूर रखने के लिए बहुत काफ़ी हैं।

इन्हीं शिक्षाओं के फलस्वरूप अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद सल्ल० के बाद से वर्तमान युग तक विख्यात मुस्लिम नारियों में शिक्षिकाओं, दीक्षा देने वाली, जिहाद और तीमारदारी करने वाली, साहित्यकार, लेखिका, कुरआन की हाफ़िज़, हदीस को बयान करने वाली, परहेज़गार तथा समाज में प्रतिष्ठित महिलाओं की एक बड़ी संख्या पाई जाती है जिनसे ज्ञानार्जन किया गया है और जिनसे दीक्षा प्राप्त की गई है और जो उच्च एवं आदर्श व्यक्तित्व रखती थीं।

इस्लाम ने मुस्लिम महिला को जो अधिकार दिये हैं उन में से कुछ इस प्रकार हैं : मिलकियत व मीरास का हक़, क्रय–विक्रय का अधिकार, पति से अलग होने (खुलअ़) का अधिकार (अपरिहार्य परिस्थिति में), मंगनी ख़त्म करने का अधिकार (अगर उससे वह सहमत न हो), ईद, बक़रईद, जुमा और जमाअ़त की नमाज़ों में सम्मिलित होने का अधिकार। इनके अतिरिक्त अधिकारों का विस्तृत वर्णन 'फ़िक़ः (विधि शास्त्र)' Jurisprudence की किताबों में मौजूद है।

अध्याय–आठ

इस्लाम में मानवता की प्रतिष्ठा

इन्सान खुदा का नाइब और खलीफ़ा है[1]

इस्लाम में यह बताया गया है कि इन्सान दुनिया में खुदा का नाइब है, और दुनिया का ट्रस्टी है, दुनिया एक वक़्फ़ (ईश्वरार्पण) है और इन्सान उसका मुतवल्ली (अधिष्ठाता) उसके ज़िम्मे यहां तक की व्यवस्था और सत्यमार्ग दिखाने का काम है दुनिया में छोटे–छोटे बहुत से ट्रस्ट होते हैं। यह दुनिया, यह सृष्टि एक विशाल ट्रस्ट है। यह किसी की ज़ाती सम्पत्ति या किसी के बाप दादा की जायदाद नहीं कि जिस तरह चाहे खाये उड़ाये। इस ट्रस्ट में जानवर, पशु–पक्षी, वृक्ष, नदी, पर्वत, सोना, चांदी, खाद्यान्न और दुनिया की तमाम नेअ़मतें हैं।

यह सब इन्सान के हवाले की गयी है क्योंकि वह इनके मिज़ाज से भी परिचित है और उनका हमदर्द भी। मानव स्वयं इसी ट्रस्ट की मिट्टी से बना है, और इसी मिट्टी का है और किसी व्यवस्थापक के लिए ज्ञान व हमदर्दी (सहानुभूति) व लगाव दोनों शर्त है। इन्सान, दुनिया के नफ़ा–नुक़सान से भी परिचित है। और उसके अन्दर उसकी आवश्यकताएं भी रखी गई हैं। इसलिए वह अच्छा ट्रस्टी बन सकता है।

---

1. आजकल मानव की नाक़दरी की जा रही है और जिस तरह इन्सानियत का खून किया जा रहा है उसको देखकर लेखक ने "मानवता का सन्देश अभियान" प्रारम्भ किया ताकि इन्सानों को उनका भूला हुआ सबक़ (पाठ) याद दिलाया जाये और उनको मनुष्य का असली मक़ाम और उसकी प्रतिष्ठा व गरिमा से परिचित कराया जाये। इस उद्देश्य से देश के विभिन्न भागों में लेखक ने यात्राएं करके बुद्धिजीवियों के सम्मेलन किये और देश में इन्सानियत का दर्द रखने वालों से सम्पर्क कर समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर करने का प्रयास किया और यह काम अब भी जारी है। और इस विषय पर बड़ी मात्रा मे लिट्रेचर विभिन्न भाषाओं में तैयार कर वितरित किया गया। समान धारा रखाने वाले कृप्या, "सचिव, मानवता का सन्देश फोरम" पो0 बाक्स नं0 93, लखनऊ–226007 से सम्पर्क करें।

अदाहरण के लिए पुस्तकालय की व्यवस्था वही अच्छा कर सकता है जिसकी ज्ञान के प्रति रूचि हो और पुस्तकों से लगाव और दिलचस्पी हो। यदि पुस्तकालय की व्यवस्था किसी जाहिल के सुपुर्द कर दी गई है, तो वह चाहे कितना ही शरीफ और अच्छा आदमी हो वह बेहतरीन लाईब्रेरियन नहीं बन सकता। किन्तु जिसको ज्ञान का शौक होगा और किताबों से लगाव होगा वह पुस्तकालय में पर्याप्त समय लगायेगा, उसका संवर्धन करेगा और उसको तरक़्क़ी देगा।

इसी प्रकार मानव चूंकि इसी दुनिया का है। उसको इस से दिलचस्पी भी है और वह इसका ज़रूरतमन्द भी है, इस का जानकार भी है और इसका हमदर्द भी। उसको इसी में रहना भी है और इसी में मरना भी, अतएव वह इसकी पूरी देखभाल करेगा और ईश्वर के दिये हुए वरदानों को ठिकाने लगायेगा। इसके अलावा कोई दूसरा इस काम को भली प्रकार नहीं कर सकता।

संसार की व्यवस्था के लिए मनुष्य ही उपयुक्त है। जब हज़रत आदम को अल्लाह ने पैदा किया और धरती पर अपना नाइब बनाया, फ़रिश्ते जो न पाप करते हैं न पाप की इच्छा रखते हैं वे बोले, हे प्रभु आप ऐसे को अपना नाइब बना रहे हैं जो दुनिया में खून खराबा करेगा। हम तेरी वन्दना करते हैं और तेरी उपासना में व्यस्त रहते हैं यह मन्सब हम को मिलना चाहिए। खुदा ने जवाब दिया कि तुम इस बात को नहीं जानते हो। खुदा ने आदम और फ़रिश्तों की परीक्षा ली। चूंकि आदम इसी मिट्टी के थे उनकी प्रवृत्ति इस धरती के अनुरूप थी, वह इस की एक एक चीज़ के जानकार थे उन्होंने ठीक ठीक उत्तर दिया। फ़रिश्तों को इन चीज़ों का ज्ञान न था इसलिए उत्तर न दे सके। इस प्रकार खुदा ने दिखा दिया कि दुनिया की व्यवस्था और इस ट्रस्ट के ट्रस्टी के लिए, अपनी सारी कमज़ोरियों के बावजूद मानव ही उपयुक्त है, बल्कि यह कमज़ोरियां और ज़रूरत ही उसको इस मन्सब के योग्य सिद्ध करती है। यदि इस दुनिया में फ़रिश्ते होते तो दुनिया की अधिकांश नेअ़मतें बेकार सिद्ध होतीं और उनका विकास न होता।

सफल कार्यवाहक और प्रभारी

लेकिन यह भी याद रखना चाहिए कि नाइब और कार्यवाहक का कर्तव्य है कि कार्यवाहक बनाने वाले की पूरी पूरी पैरवी करे। वह इसके आचरण का नमूना और प्रतिबिम्ब है। यदि मैं यहां किसी का प्रभारी हूं तो सफल और स्वामिभक्त प्रभारी उसी समय कहलाऊंगा जब अपनी क्षमता भर उसकी नक़ल करूं और अपने अन्दर उसका आचरण पैदा करूं। अल्लाह की नाइबी यह कहती है कि अपने अन्दर उसके गुणों को उतारा जाये। हमें बतलाया गया है कि ज्ञान, दया, आभार, व्यवस्था, पवित्रता, क्षमा, उपकार, न्याय, सुरक्षा, व संरक्षण, प्रेम, शौर्य व सुन्दरता, अपराधियों की पकड़ व्यापकता व विशालता ईश्वरीय गुण हैं।

अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ ने मनुष्य को शिक्षा दी कि ईश्वर के गुणों को अपनाओ। मानव अपनी सीमित परिधि में और तमाम कमज़ोरियों के साथ ईश्वरी गुणों की छाया अपने अन्दर पैदा कर सकता है। वह कभी खुदा नहीं हो सकता लेकिन दुनिया में ईश्वर के गुणों का प्रदर्शन कर सकता है और यही एक सच्चे नाइब का काम है। आप अनुमान लगा सकते हैं कि यदि मानव सच्चे दिल से अपने को अल्लाह का नाइब समझने लगे और इसके अनुसार आचार–व्यवहार करने लगे तो स्वयं उसकी और दुनिया की खुशहाली का क्या हाल होगा। मज़हब इन्सान को खुदा का नाइब और इस धरती की व्यवस्था में उसका क़ाईम मक़ाम (प्रभारी) और इस विशाल ट्रस्ट का ट्रस्टी क़रार देता है। इससे बढ़ कर मनुष्य की प्रतिष्ठा और मानवता की उठान नहीं हो सकती।

दो विरोधी परिकल्पनाएं

किन्तु मानव ने स्वयं की दो विरोधी परिकल्पनाएं स्थापित कीं। कहीं तो इन्सान को खुदा बनाया गया और उसकी इबादत होने लगी और कहीं जानवर से बदतर समझ लिया गया और उसको गाय, बैल की तरह हंकाया जाने लगा। कुछ इन्सान स्वंय खुदा बन बैठे और कुछ अपने को जानवर

से बदतर समझने लगे। वह समझते हैं कि हम को केवल पेट भरने से काम है। यह दोनों परिकल्पनाएं ग़लत हैं। न इन्सान खुदा है न जानवर। इन्सान, इन्सान ही है लेकिन खुदा का नाइब है। सारी दुनिया उसके लिए पैदा की गई है और वह इबादत के लिए पैदा किया गया है यह धरती यह दुनिया किसी की ज़ाती जायदाद नहीं, एक ट्रस्ट है और इन्सान उसका ट्रस्टी। इस परिकल्पना और विश्वास के बिना दुनिया की चूल ठीक से नहीं बैठ सकती। इतिहास गवाह है कि जब मनुष्य इस सीधे रास्ते से हटा और हद से बढ़ा और खुदा बनने का प्रयास किया और अपने को दुनिया का असली मालिक समझा अथवा अपनी प्रतिष्ठा से गिरा और अपने को जानवर समझा अथवा दुनिया की ट्रस्टीशिप छोड़ दी और जीवन की ज़िम्मेदारियों से बचना चाहा तो स्वयं भी बरबाद हुआ और यह दुनिया भी तबाह हुई।

प्रेम और भाईचारे का सन्देश

अल्लाह फ़रमाता है, "अपने पर उस एहसान को याद करो जब तुम एक दूसरे के दुश्मन थे एक दूसरे के खून के प्यासे थे, एक दूसरे का मुंह देखने को तैयार नहीं थे, उसकी कृपा से आपस में भाई भाई बन गये। अल्लाह ने दिलों को मिला दिया।" यह आयत एक घटना से सम्बन्धित है। जब मक्के में अल्लाह के रसूल और मुसलमानों को खुदा की बन्दगी और इबादत मुश्किल हो गई और वहां के लोगों ने अपनी नासमझी से इस बात को नहीं समझा कि यह हमारा भला चाहते हैं और यह हमें गर्त से निकाल कर ऐसी क़ौम बनाना चाहते हैं कि जिससे सारी दुनिया मे रौशनी फैले। सारी दुनिया में प्रेम और भाईचारा फैले, आपस में झगड़े समाप्त हों, लोगों को जीवन का लक्ष्य मालूम हो जाये, अल्लाह ने हमें जो क्षमताएं दी है। उसका सदुपयोग हो, जो क्षमताएं छोटी–छोटी मामूली बातों से नष्ट हो रही हैं, क़ौमें–क़ौमों से लड़ रही हैं, देश–देश के दुश्मन हैं, बिरादरियों में हज़ार झगड़े हैं, बुराइयां आम हो रही हैं, ऐसी घटनाएं घट रही हैं जिनसे खुदा नाराज़ होता है और रूठ जाता है उसका अभिशाप भड़कता है। इस्लाम यह चाहता है कि उनको गर्त से निकालकर ऊंचा उठाये। लेकिन मक्का के

लोग इसे नहीं समझे। उनके अन्दर यह भावना काम कर रही थी कि अमुक वंशज, अमुक घराने का कोई व्यक्ति इतना बढ़ जाये। जब हज़रत मुहम्मद सल्ल० और उनके साथियों का मक्के में जीना दूभर हो गया तो उन्हें अपने प्रिय वतन को छोड़ देना पड़ा।

औस व खज़रज[1] की लड़ाई

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्ल० और उनके अनुयायी जब मक्का छोड़ कर मदीना आये तो यहां एक दूसरी मुसीबत थी। यहां दो बिरादरियां थीं और दोनों अरब के थे। मगर बहुत दिनों से उनमें दुश्मनी थी। हर बिरादरी अपनी अच्छाई और दूसरे की बुराई बयान करती। जब कोई महान लक्ष्य सामने नहीं होता तो छोटी–छोटी बातों में लड़ाईयां होती हैं, मुक़दमें चलते हैं, विरोध होता है, मैं ज़मीनदार खानदान का व्यक्ति हूं, मेरे ननिहाल की बड़े ज़मींदारों में गिनती थी, हमारे इलाक़े में ज़मींदारी के दिनों में छोटी–छोटी बातों में लड़ाई होती, किसी बबूल के वृक्ष, हदबन्दी या दो खेतों के बीच मेंड पर या यह कि मैं गुज़र रहा था अमुक ने सलाम नहीं किया बस लड़ाई छिड़ जाती, बाई काट होता, बच्चों को निर्देश दिया जाता कि अमुक के घर न जाएं, बच्चे इन बातों को क्या समझते, उन्हें खेल मिला देता।

चाहिए तो यह था कि ज्ञान सब को मिलाये, लेकिन आज की दुनिया में खेल मिलाता है एक देश की टीमें दूसरे देश जाती हैं सब मिल–जुल कर खेलते हैं, बड़े दुःख की बात है कि ज्ञान न मिलाये और खेल मिलाये।

जब कोई बड़ा लक्ष्य सामने नहीं होता, मानव संसार में जो आग लगी हुई है, जो बुराई व्याप्त है, ईश्वर के प्रकोप को भड़काने वाली मानवता को रौंदने वाली जो घटनाएं घटित हो रही हैं उनका दर्द व एहसास जब नहीं रहता तो बच्चों की तरह खेल तमाशों में जी लगता है अथवा

1. अ़रब प्रायद्वीप में छठी–सातवीं शताब्दी में रहने वाली दो बिरादरियां (क़बीले)

छोटी–छोटी बातों को तूल देने लगते हैं। जिन पर दुख भी होता है और हंसी भी आती है।

मदीना वालों का भी पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ के आगमन से पूर्व यही हाल था। औस व ख़ज़रज के लोग आपस में ऐसे लड़ते थे, एक दूसरे के खून से प्यास बुझाते थे यह भावना उनमें वर्षों से थी। जब अल्लाह के रसूल सल्ल॰ और उनके साथी मदीना पहुंचे तो उनके सामने बड़ा लक्ष्य आया, बड़े रहस्य खुले और उनकी काया पलट गई। अब वह आपस में घुल मिल गये, एक जान व एक दिल हो गये, उन्होंने पुरानी बातों को बिल्कुल भुला दिया, कटुता दूर हो गयी। मदीना में आबाद यहूदियों को यह पसन्द नहीं था, उन्होंने लड़ाने की बहुत कोशिश की लेकिन औस व ख़ज़रज का इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। अल्लाह के रसूल के प्रति अनुराग ने उनकी अदावतों को धो दिया था और उनको अपना बीता हुआ समय ऐसा घृणित लगने लगा जिसे सोच कर उनके रोंगटे खड़े हो जाते थे। जब कोई बड़ा लक्ष्य जैसे परहित, सेवा भाव, अल्लाह को अपना बनाने, लोगों का दुःख दर्द दूर करने की भावना सामने हो तो छोटी–छोटी बातें ऐसी तुच्छ मालूम होती हैं कि उनको सोचकर मतली (मिचली) आती है। एक बार अंसार और मुहाजिरों के बीच एक कुएं पर लड़ाई हो गई, एक ने अपने क़बीले को आवाज़ दी दूसरे ने अपने हिमायतियों को दुहाई दी। हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ ने सुना तो फ़रमाया कि, "छोड़ो यह बड़ी ही नीच हरकत है।" हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ की एक शिक्षा दीक्षा से अंसार व मुहाजिरीन में ऐसा क्रान्तिकारी परिवर्तन आया कि युद्ध क्षेत्र में घायल हैं दम निकलने को है, प्यास लगी है, पानी आता है तो दूसरे घायल की ओर संकेत करके उसे पहले पिलाने पर बल देते है। त्याग की यह भावना इस्लाम से रिश्ते, लक्ष्य से लगन और नबी के प्रति अगाध प्रेम व श्रद्धा ने पैदा किया था। इन पर परहित का ऐसा नशा छा गया कि मदीने के अन्सार ने मक्के के मुहाजिरों को अपनी दुकान, अपने खेत अपनी जायदाद, में बराबर शरीक किया।

शिर्क के बाद सबसे नापसन्द चीज़ आपस की रंजिश

हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ ने शिर्क के बाद सबसे अधिक भर्त्सना जिस चीज़ की की है वह आपस की रंजिश है। हदीस में आता है कि शबे–बरात अर्थात नजात व मोक्ष की रात को जिस में आम मुआफ़ी होती है, जब दया का सागर उमड़ता है, तीन आदमियों को मुआफ़ी नहीं मिलती– माता–पिता का अवज्ञाकारी, शराब का आदी और वह व्यक्ति जिसके दिल में किसी भाई के प्रति रंजिश या कीना हो। हज़रत मुहम्द सल्ल॰ ने विशेषकर रिश्तेदारियों का ध्यान रखने की ताकीद फ़रमायी है। आपने फ़रमाया–

"मेरे परवरदिगार ने मुझे नौ बातों का हुक्म दिया है उनमें यह भी है कि मैं उस से रिश्ता जोड़ दूं जो मेरा रिश्ता नाता काटे, उसको क्षमा करूं जो मुझ पर जुल्म करे, उस को दूं जो मुझे वंचित रखे।"

जो मित्रता और प्रेम का मुआमला करे उससे अच्छे सम्बन्ध रखना कोई कमाल नहीं, ऊंची बात तो यह है कि जो दुश्मनी करे, नुक़सान पहुंचाये उसके साथ सद्व्यवहार किया जाये।

ईश्वर मानव जाति से निराश नहीं

खुदा का मुआमला मानव जाति के साथ और मानव जाति का मुआमला मानव जाति के साथ बिल्कुल उल्टा है। खुदा मानव जाति से निराश नहीं, उसकी मेहरबानियां इस संसार पर बरस रही हैं लेकिन हमारा मुआमला एक दूसरे के साथ यह बताता है कि हम मानव से निराश हैं। किसी विचारक ने कहा है कि जो बच्चा इस दुनिया में आता है वह इस बात का ऐलान करता है कि खुदा मानव जाति से निराश नहीं है, यदि निराश होता तो इस नस्ल में बढ़ोत्तरी नहीं करता। लेकिन इन्सान, इन्सान का गला काटता है, इन्सान से नफ़रत करता है, मानव, मानव का शोषण करता है, जोंक की तरह खून पीता है, उसे ग्राहक समझ कर लाभ उठाता है और अपने आचरण से इस बात का ऐलान करता है कि मानवता की क्षमता और उसके भविष्य से वह निराश है। खुदा और इन्सान के यह प्रदर्शन बराबर

जारी हैं। वर्षा की एक एक बूंद इसका ऐलान करती है कि दुनिया का पैदा करने वाला अपनी प्यासी और ज़ालिम दुनिया से अभी निराश नहीं है। धरती में उर्वरक शक्ति है, इसकी पैदावार इस बात का ऐलान है कि ख़ुदा इस धरती के वासियों से निराश नहीं। सूर्य चमकता है और वहां कोई स्ट्राइक नहीं, चांद बराबर निकलता है और अपनी चांदनी की चादर को फैलाता है, आंखों को ठंडा करता है, दिलों को भी ठंडक पहुंचाता है यह सब इस बात का ऐलान है कि ईश्वर मानव से अभी निराश नहीं।

लेकिन हमारा और आपका व्यवहार यह सिद्ध करता है कि हम मानव से निराश हैं। हम अपने आचरण व व्यवहार से इस बात का प्रदर्शन कर रहे हैं कि हमारे सामने उस इन्सान की, जो ख़ुदा की कारीगरी का बेहतरीन नमूना है कोई क़ीमत नहीं।

अल्लाह के ऐश्वर्य और उसके गढ़न की अभिव्यक्ति व प्रदर्शन हर वस्तु में है। फूल, कली, बूंद, घास का तिनका, मिट्टी के कण, पेड़ के पत्ते जिस चीज़ को देखिये तो मालूम होगा कि उसमें एक दुनिया है। इनमें सर्वोत्कृष्ट मानव की रचना है। पूरी सृष्टि उस की सेवा के लिए पैदा की गई है। यह सब का ऐलान है कि इन्सान ख़ुदा का महबूब है, सर्वोत्कृष्ट प्राणी है, इस दुनिया का दुल्हा है। लेकिन हमारी और आपकी कार्यशैली यह सिद्ध करती है कि मानव में कोई गुण नहीं हम अपने अ़मल (कर्म) से ख़ुदा की अ़दालत में अपने ही के विरूद्ध मुक़दमा दायर कर रहे हैं कि हम को दुनिया से उठा लिया जाये। मानों हम फ़रिश्तों की उस बात की पुष्टि करना चाहते हैं कि जिसकी काट ख़ुदा ने की थी। जब मानव रचना के समय ख़ुदा ने फ़रमाया था, "मैं इस धरती पर अपना ख़लीफ़ा और नाइब बनाना चाहता हूं," तो फ़रिश्तों ने आशंका व्यक्त की थी कि, क्या आप ऐसे को ख़लीफ़ा बना रहे हैं जो धरती पर बिगाड़ पैदा करेगा और ख़ून बहायेगा? जब ख़ुदा ने आदम से चीज़ों के ज्ञान के बारे में प्रश्न किया तो उन्होंने ठीक प्रकार से उत्तर दिया। फ़रिश्ते जवाब नहीं दे सके। ख़ुदा ने इन्सान को जिताया था, हम उसको हरा रहे हैं।

टूटे हुए दिल की बड़ी क़ीमत है

अल्लाह ने कहा तुम को मालूम नहीं मनुष्य में कैसे–कैसे गुण हैं। उससे ज्ञान की सरिता कैसे फूट निकलती है। समुद्र में वह विशालता और गहराई न होगी जो उसमे है। उसकी आंखों में प्रेम की जो चमक है उसे प्रस्तुत करने में तुम असमर्थ हो। उसके दिल में नर्मी है, कसक है, प्रेम है, उस पर दर्द की चोट लगती है। फ़रिश्तों के पास यह दौलत नहीं।

मनुष्य के पास जो सबसे बड़ी पूंजी है वह दया की पूंजी है वह प्रेम की पूंजी है। वह एक आंसू है जो मानव की आंख से किसी विधवा के सर को नंगा, किसी ग़रीब के चूल्हे को ठंडा, किसी रोगी की कराह सुन कर टपक पड़ता है। आंसू की वह बूंद जो समुद्र में डाल दी जाये तो उसे पवित्र कर दे, गुनाहों के जंगल में डाल दी जाये तो सब को जलाकर रोशनी से बदल दे। फ़रिश्ते सब कुछ पेश कर सकते हैं किन्तु आंसू की वह बूंद नहीं पेश कर सकते जो एक इन्सान दूसरे इन्सान के लिए बहाता है।

इन्सान के पास सबसे अनमोल चीज़ यह है वह दूसरे के दुख दर्द से प्रभावित होता है। उसके अन्दर प्रेम की एक चिन्गारी है उसे दहकाने वाली कोई चीज़ मिल जाये तो वह प्रज्जवलित (दहक) हो उठती है। फिर वह इन्सान न मज़हब को देखता है, न सम्प्रदाय को न वतन को देखता है, न देश को देखता है, इन्सान इन्सान का दिल देखता है, उसके दर्द को महसूस करता है जिस प्रकार चुम्बक लोहे को खींचता है उसी प्रकार इन्सान के दिल का चुम्बक इन्सान के दिल को खींचता है।

अगर इन्सान से यह दौलत छीन ली जाये तो वह दीवालिया हो जायेगा। यदि कोई देश इससे वंचित हो जाये, अगर अमरीका की दौलत, रूस की व्यवस्था, अरब देशों के पेट्रोल के कुएं हुन बरसाते हों, सोने और चांदी की गंगा–यमुना बहती हो लेकिन उस देश में प्रेम का स्रोत सूख चुका हो तो वह देश कंगाल है उस देश पर अल्लाह की रहमत न होगी।

अभी इन्सान की आंख आंसू बहाने के क़ाबिल है, अभी इन्सान का दिल तड़पने, सुलगने और चोट खाने के क़ाबिल है जो दिल इस क़ाबिल

नहीं है ऐसा दिल, दिल नहीं पत्थर है चाहे वह मुसलमान का दिल हो, या हिन्दु, सिख, ईसाई का दिल हो। दिल तो इसलिए है कि वह तड़पे, कांपे, रोये इसमें धरती से अधिक हरियाली, झरने से अधिक प्रवाह, सृष्टि से अधिक विशालता और बादलों से अधिक बरसने की क्षमता हो।

जो हाथ मानवता की सेवा के लिए नहीं बढ़ता वह पंगु है। वह हाथ जो इन्सान की गर्दन काटने के लिए बढ़ता है उससे शेर का हाथ बेहतर था अगर इन्सान का कार्य काटना था तो कुदरत उसको बजाय हाथों के तलवार दे देती। अगर इन्सान की जिन्दगी का उद्देश्य केवल जमा करना था तो उसके सीने में धड़कते हुए दिल के बजाए तिजोरी रख दी जाती। अगर इन्सान का काम केवल बरबादी की योजना बनाना था उसके अन्दर इन्सान का दिमाग़ न रखा जाता बल्कि किसी शैतान, किसी राक्षस का दिमाग़ रख दिया गया होता।

मानव शरीर की रचना के अजूते बताये जाते हैं लेकिन आप उसका दिल देखें तो उसके अजूबे के सामने शरीर के अजूबे मन्द पड़ जायें। प्रभु ने इन्सान को ऐसा दिल दिया है कि दुनिया के एक छोर में किसी को तकलीफ हो तो वह दूसरे छोर में तड़प उठे। जो दिल किसी का दिल दुखाये, किसी को तकलीफ पहुंचाये वह दिल किस गिनती के क़ाबिल है।

ईश्वर का सारा मामला इस दुनिया के साथ बताता है कि वह मानव जाति से निराश नहीं। आप का वाटर वर्क्स पानी रोक सकता है, आप का पावर हाउस बिजली रोक सकता है तो क्या खुदा अपनी नेअ़मते नहीं रोक सकता? खुदा इस दुनिया को पानी भी दे रहा है और रोटी भी दे रहा है और सबको हुक्म है वे मानव की सेवा करें। पूरा कराखाना मानव की सेवा में लगा हुआ है। खुदा उससे निराश नहीं हुआ लेकिन हम अपने आचरण से क्या साबित कर रहे हैं? क्या हम साबित कर रहे हैं कि हम इन्सान को कोई बड़ी चीज़ समझते हैं? अपने बराबर का समझते हैं, अपने शरीर का टुकड़ा समझते हैं? हमारा आचरण इन्सानी आबादी के

लिए सबसे बड़ा ख़तरा है। इन्सान से दुशमनी और इन्सानियत की पामाली (कुचलना) का खतरा, इन्सानियत की खै़र ख़्वाही से आंखे बन्द कर लेना। इस ख़तरे से देश को भी और क़ौम (नेशन) को भी बचाने की ज़रूरत है।

मानवता की प्रतिष्ठा

पैग़म्बरों (ईशदूतों) ने इन्सानों को बतलाया था कि अगर तुमने अपने को दुनिया के अधीन कर लिया और अपनी इच्छाओं के वशीभूत हो गये तो यह सारा जीवन अस्वाभाविक और अव्यवस्थित हो जायेगा। और एक ऐसी अव्यवस्था, अनार्की फैलेगी कि यही दुनिया तुम्हारे लिए नर्क बन जायेगी।

कुर्आन मे बतलाया गया है कि इन्सान को पैदा करके फ़रिश्तों को उसके आगे झुकाया गया। जिससे यह सीख मिलती है कि मानवता का यह एक अपमान है कि अपने पैदा करने वाले के सिवा किसी के सामने झुके। जबकि खुदा के बाद उसके फ़रिश्ते ही सबसे ज़्यादा झुकने के क़ाबिल थे। क्योंकि वह इस दुनिया के अभिकर्ता हैं, वह खुदा के हुक्म से बारिश लाते हैं, हवाएँ चलाते हैं। जिस प्रकार एक हाकिम अपने नाइब को अपने सलाहकारों से परिचय कराता है उसी तरह खुदा ने इन्सान के आगे फ़रिश्तों को झुका कर एक परिचय या इन्ट्रोडक्शन कराया कि इन्सान की नस्ल को क़यामत तक के लिए यह सबक़ याद रहे कि वह खुदा के सिवा किसी के आगे झुकने के क़ाबिल नहीं।

--- *समाप्त* ---

इस्लाम के तीन बुनियादी अक़ायद

(इस्लाम के तीन मूलभूत विश्वास)

लेखक

हज़रत मौलाना अबुल हसन अली नदवी (रह०)

अनुवादक :

मुहम्मद हसन अन्सारी

प्रकाशक :

सत्यमार्ग प्रकाशन

AL-AAFIYA अल-आफ़िया
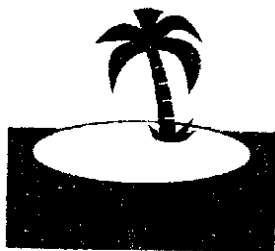
504/45/2D, टैगोर मार्ग, डालीगंज, लखनऊ

किताब : इस्लाम के तीन बुनियादी अकायद

लेखक : हज़रत मौलाना अबुल हसन अली नदवी (रह०)

अनुवाद : मुहम्मद हसन अन्सारी

पृष्ठ : 188

मूल्य : Rs.60/-

संस्सकरण : प्रथम (हिन्दी), सन् २०१०

प्रकाशक : सत्यमार्ग प्रकाशन

यूनिट : अल–आफ़िया *(रजिस्टर्ड ट्रस्ट)*

(हज़रत मौलाना अबुल हसन अली नदवी (रह०) की स्मृति में स्थापित)

504/45/2D, टैगोर मार्ग, डालीगंज, लखनऊ

Phone: 0522-2741230 E-mail: al_aafiya@yahoo.com

मिलने का पता :

- अल–आफ़िया, **504/45/2D,** टैगोर मार्ग, डालीगंज, लखनऊ
- नदवी बुक डिपो, दारूल उलूम नदवतुल उलमा, टैगोर मार्ग, लखनऊ
- एकाडमी आफ इस्लामिक रिसर्च एण्ड पब्लिकेशन, दारूल उलूम नदवतुल उलमा, टैगोर मार्ग, लखनऊ
- मकतबे इस्लाम, गोइन रोड, लखनऊ

विषय सूची

अध्याय तीन : आख़िरत

भूमिका

अल्हमदु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन, वस्सलातु वस्सलामु अला सैयिदिल मुरसलीन व अला आलिही व सहबिही अजमईन, अम्मा बाअद।

हजरत मौलाना सैय्यद सुलेमान नदवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने कहा है, "मनुष्य के कार्य सुधार के लिए सर्वप्रथम उसके हृदय और मस्तिष्क का सुधार होना चाहिए, और मनुष्य के हृदय और इरादे पर अगर कोई वस्तु राज्य करती है तो वह उसका विश्वास (अक़ीदा) है"। अल्लाह के संदेष्टा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने स्पष्ट शब्दों में अक़ाएद (विश्वास) के पांच नियम बताए, खुदा पर ईमान (आस्था), फरिश्तों (देवदूतों) पर ईमान, ईशदूतों पर ईमान, ईशग्रन्थों पर ईमान और कर्मों के बदले व सज़ा के दिन पर ईमान।

यह वह पांच नियम हैं जिनका वर्णन पवित्र कुर्आन में विभिन्न स्थानों पर आया है, सूरः निसा में इसको इस तरह बयान किया गया है–

अनुवाद– *ऐ वह लोगों जो ईमान ला चुके हो! ईमान लाओ, खुदा पर और उसके रसूल (दूत) पर और उसकी किताब पर जो उसने अपने रसूल पर उतारी और उस किताब पर जो उसने पहले उतारी, और जो सख़्श खुदा का, उसके फरिश्तों का, उसके पैग़म्बरों का और अन्तिम दिन का इन्कार करे वह अति पथभ्रष्ठ हुआ।*

पवित्र कुर्आन में यह सारे विश्वास (अक़ाएद) बार बार वर्णन किये गये हैं और इसके अलावा दूसरे अक़ाएद जो अहले सुन्नत व जमात के यहां सर्वमान्य हैं उनका वर्णन पवित्र कुर्आन और हदीस शरीफ में पाया जाता है जैसा कि भाग्य का प्रश्न है, पवित्र कुर्आन में

इसका विभिन्न शैली में वर्णन किया गया है और फिर हदीस शरीफ़ में बड़ी स्पष्टता से इसको ईमान की श्रेणी में शामिल किया गया है।

इनमें तौहीद का अक़ीदा, आख़रत का अक़ीदा और रिसालत को तो पवित्र कुर्आन में अधिकाधिक वर्णन किया गया है। इसलिए पवित्र कुर्आन को "किताबुत्तौहीद" भी कहा गया। हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली नदवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने लिख है कि तौहीद के बारे में स्पष्ट से स्पष्ट और प्रबल से प्रबल दो टूक बात जो कही जा सकती है पवित्र कुर्आन में मौजूद है, पवित्र कुर्आन पढ़ कर आदमी सब कुछ हो सकता है लेकिन मुश्रिक (बहुदेववादी) नहीं हो सकता।

इसी प्रकार ईशदूत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने आख़िरत के अक़ीदे पर बहुत बल दिया है। बल्कि मक्का काल में अवतरित वह्इ (ईशवाणी) का अधिकतर भाग इसी के प्रचार प्रसार पर आधारित है।

ईशदूत पर ईमान आवश्यक घोषित किया गया है, और विभिन्न स्थानों पर इनके गुण और विशेषताओं का वर्णन किया गया है, क्योंकि अल्लाह तआला के आदेश उसके निर्देश और उसकी प्रसन्नता का ज्ञान उन्हीं के माध्यम से होता है उसके साथ उसकी किताबों और फरिश्तों पर ईमान अवश्यक घोषित किया गया है।

हज़रत मौलाना सैय्यद सुलेमान नदवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने इन समस्त ईमान की बातों पर अपनी अदिवित्य पुस्तक "सीरतुन्नबी" भाग ४ में अति शोधात्मक और उत्तम शैली में बहस की है।

हज़रत मौलाना सैयद अबुलहसन अली नदवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने, "अरकाने अरबअह" पर क़लम उठाया और एक ऐसी कृति वजूद में आई जिसकी दाद हर लेखक ने दी और दिल खोल कर दी, उनका इरादा था कि इसी शैली में इस्लाम के प्रथम स्तम्भ पर भी क़लम उठाएं और इसका ख़ाका भी तैयार कर लिया था परन्तु यह काम पूरा

न हो सका, उनके चाहने वालों को यह ख़्याल हुआ की हज़रत मौलाना ने अक़ीदों पर समय समय से विभिन्न शैली में कुछ न कुछ लिखा है जो भिन्न पत्र पत्रिकाओं की फाइलों में बन्द हैं, अगर उनको एकत्र करके छपवा दिया जाए तो लाभप्रद होगें, मेरे आदरणिय भाई मौलवी बिलाल साहब सबके धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने अपना सौभाग्य समझकर मेहनत और छानबीन करके यह सारे लेख संकलित किए, इस प्रकार तौहीद, आख़िरत और रिसालत जो अक़ीदे के मूलभूत और अतिआवश्यक भाग में सें हैं पर एकाधिक लेख उपलब्ध हो गये, जो अल्लाह के नाम से छपवाए जा रहे हैं।

बड़ी हर्ष की बात है कि इस महत्वपूर्ण पुस्तक का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने का सौभाग्य अल्–आफ़िया ट्रस्ट (जो लेखक हज़रत मौलाना अबुल हसन अली नदवी रह० की स्मृति में स्थापित किया गया है) को प्राप्त हो रहा है जिसका उद्‌देश्य धार्मिक साहित्य को हिन्दी में प्रकाशित करना है।

इससे भी अधिक प्रसन्नता की बात यह है कि ट्रस्ट के हिन्दी विभाग की यह पहली पुस्तक है, जिससे ट्रस्ट अपने हिन्दी अकादमी का उद्‌घाटन कर रहा है। अल्लाह तआला इस प्रयास को स्वीकार करे, इस बिगड़े हुए परिवेश में तौहीद के अक़ीदे के फैलने, तौहीद को दृढ़ होने और रिसालत के अक़ीदे को समझने और आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आन्तिम सन्देष्टा होने को मानने और उनको ईमान का भाग बनाने का साधन बनाए और इस काम को ख़ैर व बरकत का कारण बनाकर लाभकारी बनाए। ....**आमीन**।

मौलाना सैय्यद अब्दुल्ला हसनी नदवी
(दारूल उलूम नदवतुल उलेमा, लखनऊ)

प्रस्तावना

इस्लाम धर्म की सर्वप्रथम विशिष्टता तथा स्पष्ट चिन्ह यह है कि वह "अकीदा" (विश्वास) पर बल देता है और सबसे पहले इस समस्या के समाधान का निर्देश देता है। हज़रत आदम अलैहिस्सलाम से लेकर हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तक सारे नबी (ईश दूत) एक निश्चित अकीदा (विश्वास/मत) (जो उन्हें वह्इ (ईशवाणी) के माध्यम से प्राप्त हुआ था) की ओर लोगों को बुलाते रहे और इस की मांग करते रहे, और इस सम्बन्ध में किसी समझौता व दस्तबरदारी (विरक्तता) के लिए तैयार न हुए। उनकी दृष्टि में उत्तम से उत्तम नैतिक जीवन तथा बुलंद से बुलंद मानवीय किरदार धारक, नेकी व सतकर्म सही चाल और सार्थकता की जीवंत आकृति और आदर्श प्रतिमूर्ति चाहे उससे किसी उत्तम सत्ता की स्थापना किसी अच्छे समाज का अस्तित्व और कोई लाभप्रद क्रांति हुई हो उस समय तक कोई मूल्य नहीं जब तक तक वह उस अकीदा (मत) का मानने वाला न हो जिसको वे लेकर आए तथा जिसकी ओर बुलाना उनका जीवन–लक्ष्य है और जब तक उसकी यह सारी चेष्टाएं उस अकीदे के आधार पर न हों। यही वह सीमा रेखा व स्पष्ट तथा उज्जवल रेखा है जो नबियों (ईशदूतों) अलैहिमुस्सलाम की दावत (आवाहन) और राष्ट्रीय नेताओं, राजनीतिक लीडरों, क्रान्तिकारियों तथा हर उस व्यक्ति के बीच खींच दी गई है जिसकी सोच व दृष्टि का स्रोत नबियों (ईशदूतों) अलैहिमुस्सलाम की शिक्षाओं तथा जीवन चरित्रों के अतिरिक्त कोई और हो।[1]

---

[1] वर्तमान युग की बिगड़ी हुई परिस्थितियों से कुंठित बहुत से लोगों में यह प्रवृत्ति पैदा हो गई है कि वह हर उस व्यक्ति को जो क्रान्ति का नारा लगाए या किसी महाशक्ति को चुनौती दे, अकीदे (विश्वास) के हर बिगाड़ तथा सोच व

पवित्र कुर्आन जो परिवर्तन से सुरक्षित तथा क़यामत (महाप्रलय) तक शेष रहने वाला एक मात्र आकाशीय ग्रन्थ है और अन्तिम संदेष्टा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की जीवनी जो अन्य नबियों की जीवनियों में अकेली ऐसी जीवनी है जिस पर ऐतिहासिक व ज्ञान के दृष्टिकोण से विश्वास किया जा सकता है तथा जिससे हर युग में व्यवहारिक लाभ सम्भव है इस वास्तविकता के अधिकाधिक तर्क व सबूत उपलब्ध कराते हैं। निम्न में कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं:–

इस सम्बन्ध में स्पष्ट वह आयत (मंत्र) है जिसमें अल्लाह तआला अपने नबी व ख़लील (घनिष्ट मित्र) हज़रत इब्राहिम अलैहिस्सलाम के धैर्य तथा हृदय की कोमलता की विशेष रूप से प्रसंशा की है।

अनुवाद– *निःसंदेह इब्राहीम अलैहिस्सलाम बड़े ही सहनशील, कोमल हृदय वाले और (अल्लाह की ओर) झुकने वाले थे।*

(सूरः हूद ७५)

और उनके साथियों तथा अनुयायियों के आचरण, जीवन विधान तथा प्रवृत्ति व प्रकृति की इस प्रकार व्याख्या की है।

अनुवाद– *तुम लोगों के लिए इब्राहीम अलैहिस्सलाम और उनके साथियों के तरीके में उत्तम आदर्श है, जब उन्होंने अपनी क़ौम के लोगों से (साफ़–साफ़) कह दिया कि हम तुमसे और अल्लाह के अतिरिक्त जिनको तुम पूजते हो उन सब से अलग हैं (और) तुम्हारी बातों को कभी नहीं मान सकते और जब तक तुम एक अल्लाह पर ईमान*

दृष्टिकोण की हर ख़राबी व विकार को क्षमा कर देते हैं और अकीदे की समस्या को उपेक्षित कर देते है, बल्कि जो इस अवसर पर अकीदे की बहस को उठाए व उसकी मान्यताओं के विषय में कोई प्रश्न करे उनकी भर्त्सना करते हैं और कभी अगत्य शक्तियों से साठ–गांठ कर लेने का आरोप भी लगा देते हैं, यह विचारधारा और आचरण सही धार्मिक स्वभाव व नबी वाले ढंग से कोई सम्बन्ध नहीं रखता।

(विश्वास) नहीं लाओगे हमारे तुम्हारे बीच सदैव शत्रुता व इर्ष्या (विद्वेष) स्पष्ट रूप से जारी रहेगा, हाँ! इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने अपने पिता से (अवश्य) कहा कि मैं आपके लिए क्षमा याचना करूँगा,[1] लेकिन अल्लाह के सामने आपके संबंध में किसी वस्तु का अधिकार नहीं रखता, ऐ हमारे पालनहार आप ही पर हमारा भरोसा है, और हम आपकी ओर दिल के पूरे झुकाव के साथ आते हैं तथा आप ही की सेवा में हमें लौट कर जाना है!

(सूरः अल्‌मुम्तहिनह ४)

अक़ीदे (विश्वास) के महत्व और उसके ठीक होने की दशा में अल्लाह से निकटता तथा गलत होने पर उससे दूरी का माप दण्ड होने का तर्क इससे अधिक क्या हो सकता है कि सूरः अल् काफिरून पवित्र मक्का में उस समय उतरी जब परिस्थितियाँ यह मांग कर रही थीं कि नर्मी, विनम्रता से काम लिया जाए तथा इबादत (उपासना) व अकीदे (विश्वास) के आधार पर दुश्मनी पैदा न की जाए और इस समस्या को उस समय तक स्थगित रखा जाए जब तक कि इस्लाम को शक्ति प्राप्त हो तथा परिस्थितियॉ सामान्य व शांत हों, परन्तु पवित्र कुर्आन साफ़–साफ़ कहता है और हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम खुलकर एलान व घोषणा करते हैं।

अनुवाद– *ऐ पैग़म्बर! इस्लाम का इन्कार करने वालों से कह दीजिए कि ऐ इन्कार करने वालो (काफ़िरो)! जिनकी पूजा तुम करते हो मैं*

[1]शायद कुछ लोगों के दिल में सन्देह उत्पन्न हो कि हज़रत इब्राहीम *अलैहिस्सलाम* ने अपने मूर्तिपूजक पिता से प्रार्थना और क्षमा–याचना का वायदा क्यों किया। इसका उत्तर कुरआन की सूरः बराअत की आयत ११३–११४ में मौजूद है कि उन्होंने वायदे को पूरा किया लेकिन जब उनको मालूम हो गया कि वह खुदा का दुश्मन है तो उससे बेज़ार हो गए और उन्होंने उससे बरी होने का एलान किया और हमेशा के लिये यही सिद्धान्त बना दिया गया।

उनकी इबादत (उपासना) नहीं करता और मैं जिस (अल्लाह) की इबादत करता हूँ उसकी तुम इबादत नहीं करते और मैं फिर कहता हूँ कि जिनकी तुम पूजा करते हो उनकी मैं इबादत (पूजा) करने वाला नहीं हूँ तथा न तुम उसकी बन्दगी (उपासना) करने वाले (मालूम होते) हो जिसकी मैं बंदगी करता हूँ (बस अब) तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन और मेरे लिए मेरा दीन (धर्म) है।

(सूरः अलकाफ़िरून १–६)

अध्याय एक

तौहीद (एकेश्वर वाद)

तौहीद (एकेश्वर वाद) एक मानवीय आवश्यकता-

मनुष्य पूर्ण रूप से मोहताज और मोहताजी की प्रतिमूर्ति है और सर्वथा आकांक्षाओं का पुतला है। उसकी आवश्यकताएं अथाह मानो असीम, उसकी शारीरिक आध्यात्मिक अपेक्षाएं व आकांक्षाएं असीमित, और उसकी प्रकृति में लोभ व असंतोष है। इसलिए वह किसी ऐसी हस्ती के सहारे नहीं जी सकता जिसकी शक्ति व अधिकार, जिसका दान व अन्नदान (रज़्ज़ाकी) जिसकी सूचना व ज्ञान चाहे कितना ही विशाल हो, परन्तु सीमित हो।

मनुष्य अपनी प्रवृत्ति में शीशे से अधिक कोमल और पानी के बुलबुले से ज़्यादा कमजोर है। वह अपने अस्तित्त्व के लिए सैकड़ों चीजों का मोहताज है और इस संसार में हजारों वस्तुएं उसकी शत्रु हैं, उसकी रक्षा वही कर सकता है, जिसका सत्ता समस्त ब्रह्माण्ड पर हो, तत्वों पर अधिकार हो, वस्तुओं के प्रभाव व विशेषताएं (गुण) उसकी मुट्ठी में हों, वह उनका सृजक भी हो और उनका निरंतरक भी हो व व्यवस्थापक भी हो तथा उसमें समाप्त कर देने, परिवर्तित कर देने की सामर्थ्य भी हो, उसकी शक्ति में तनिक कमी और उसकी प्रभुसत्ता में कभी अस्थिरता उत्पन्न न हो क्योंकि एक तनिक सी अस्थिरता तथा छोटी सी चूक और गड़बडी ब्रह्माण्ड व सृष्टि की कोमल संरचना का विनाश और विलोम व विभिन्नताओं के इस कारखाने को टकरा कर अस्त-व्यस्त कर सकती है। उसका ज्ञान सर्वव्यापी हो वह हर समय जागृत व सावधान हो, भूल-चूक, गफ़लत

तथा नींद की झपकी भी कभी उसके पास न आ सके। इसलिए कि सृष्टियां अनगिनत और उनकी आवश्यकताएं असीम और ऐसी गुप्त हैं कि उनको स्वयं ज्ञात नहीं, वे दुधमुंहे शिशु से अधिक पालन–पोषण व संरक्षण का मोहताज व प्यार व स्नेह का पात्र है। उसको ऐसी हस्ती की आवश्यकता है जो माता–पिता से अधिक स्नेही हों परन्तु उसके प्यार में करूणा व युक्ति दोनों हों क्योंकि उसके पालन–पोषण के लिए दोनों अनिवार्य हैं।

यद्यपि इस बाह्य व आंतरिक संसार पर विचार करने से ज्ञात होता है कि ऐसी हस्ती अल्लाह के अतिरिक्त कोई नहीं, तथा आंतरिक व बाह्य संसार की अधिकाधिक निशानियां तथा प्रमाण इस वास्तविकता की ओर मार्गदर्शन करते हैं, जैसा कि स्वयं अल्लाह तआला कहते हैं।

अनुवाद– शीघ्र ही हम उनको अपनी निशानियाँ उनके चारों ओर दिखाएंगे तथा स्वयं उनके भीतर भी, यहाँ तक कि उनके लिए यह वास्तविकता स्पष्ट हो जाए कि वह सत्य है, क्या तुम्हारा पालनहार स्वयं हर वस्तु पर साक्षी होने के लिए पर्याप्त नहीं।

(सूरः हा मीम सज्दा ५३)

अतः इबादत (उपासना) व बन्दगी (पूजा) का पात्र वही है।

धोखा व असावधानी

परन्तु इस संसार में भ्रामक लाभ–हानि की मृगतृष्णा इस प्रकार हिलोरे ले रही है कि मानव दृष्टि बार–बार धोखा खाती है, और अपनी जैसी सैकड़ों असहाय व अधिकार हीन हस्तियों को लाभ व हानि पहुँचाने वाला और समर्थ व अधिकर्ता (मुख़्तार) समझकर अपना पूज्यनीय व उपास्य (माबूद) बना लेती है, और यह भ्रम कभी–कभी आजीवन नहीं टूटता।

मनुष्य खाये पीये पड़ा रहे तथा उसका वंश चलता रहे, और कभी–कभी ज्ञान के क्षेत्र में आकाश से तारे तोड़ लाए तथा विशाल समुद्र व मरूस्थल पार कर ले परन्तु अपने पैदा करने वाले को न पहचाने इससे बढ़कर अज्ञान क्या हो सकता है। परन्तु संसार में यही हो रहा था, करोड़ों मनुष्य अपने पैदा करने वाले को नहीं जानते थे, पिता को जानते थे परन्तु पिता को किसने पैदा किया? फिर उसके पिता को किसने पैदा किया? ब्रह्माण्ड को किसने बनाया, धरती व आकाश का सृजन किसने किया? पहाड़ किसने खड़े किए? यह बाग बगीचे किसने उगाए तथा जीविका कौन देता है? और अच्छा बुरा भाग्य किसने बनाया? व कौन मृत्यु व जीवन का मालिक है? आज यदि कोई हिन्दी नहीं पढ़ा है तो लोग कहेंगे कि "अनपढ़" है और यदि उर्दू नहीं पढ़ा है तो मुसलमानों के क्षेत्र में निरक्षर कहेंगे, और अरबी नहीं पढ़ा है तो अरब वाले "उम्मी" (अनपढ़) कहेंगे परन्तु इससे बढ़कर क्या अज्ञान (जिहालत) हो सकता है कि अपने पैदा करने वाले को न जाने कि वही इबादत (उपासना) का पात्र है, संसार पूर्ण रूप से इससे अनभिज्ञ था इसलिए अल्लाह तआला ने नबियों को भेजा।

सर्वश्रेष्ठ ज्ञान

नबियों (अलैहिमुस्सलाम) के माध्यम से जो ज्ञान मनुष्यों तक पहुँचे हैं, उनमें सर्वश्रेष्ठ, महत्वपूर्ण व आवश्यक ज्ञान अल्लाह की ज़ात (व्यक्तित्व) व गुण व कर्म का ज्ञान है। इस ज्ञान का स्रोत केवल नबी (ईशदूत) हैं, इस ज्ञान के स्रोत व संसाधन तथा इसकी प्रारम्भिक जानकारी व अनुभव भी मनुष्य की पहुँच से बाहर है। यहाँ अनुमान का सर्वथा आधार ही नहीं, अल्लाह का कोई छायाचित्र व सदृश्य ही नहीं, और वह हर प्रकार की सदृश्यता व समानता से पवित्र (पाक), बुलंद

व उच्च है, वह हर उस विचार, निरीक्षण तथा एहसास से उच्च व सर्वथा अलग है जिनसे मनुष्य अवगत व परिचित है तथा जिनसे वह भौतिक संसार में काम लेता है, यहाँ बुद्धि का अनुमान तथा प्रतिभा भी कुछ सहायता नहीं कर सकती, क्योंकि यह वह क्षेत्र नहीं है जहाँ बुद्धि के घोड़े दौड़ाए जाएं और अनुमानों की पतंगें उड़ाई जाएं।

यह ज्ञान इसलिए सर्वश्रेष्ठ व सर्वोत्तम घोषित किया गया कि इसी पर मनुष्यों की भलाई व कल्याण निर्भर है तथा यही अक़ीदों (विश्वासों) कर्म, नैतिकता व सभ्यता का आधार है। इसी के द्वारा मनुष्य अपनी वास्तविकता से अवगत होता है, ब्रह्माण्ड की पहेली बूझता है और जीवन रहस्य मालूम करता है। इसी से इस संसार में अपनी हैसियत निर्धारित करता है तथा इसी के आधार पर अपने जैसे लोगों से संबंध स्थापित करता है, अपनी जीवन शैली के विषय में निर्णय और पूर्ण विश्वास, बुद्धिमता तथा स्पष्टता के साथ अपने लक्ष्य निर्धारित करता है।

इसलिए हर सम्प्रदाय व वंश तथा हर युग व वर्ग में इस ज्ञान को उच्चतम श्रेणी प्राप्त है, और प्रत्येक गम्भीर, शुभचिंतक, लक्ष्यधारक तथा परिणाम की चिन्ता करने वाले मनुष्य ने इस ज्ञान से घनिष्ट रूचि व लगाव का प्रदर्शन किया। क्योंकि इस ज्ञान से वंचित होना (चाहे जान बूझकर हो अथवा अनजाने में) ऐसी वंचितता का कारण है जिससे बढ़कर कोई दुर्भाग्य नहीं, और ऐसी बर्बादी व विनाश का कारण है जिससे बढ़कर कोई विनाश नहीं।

नबियों के आवाहन (दावत) की विधि

नबियों *(अलैहिमुस्सलातु वस्सलाम)* ने सत्य को उजागर करने के

लिए तथा लोगों के नज़र के भ्रम को तोड़ने के लिए दो प्रकार की विधियों का उपयोग किया:–

(१) अल्लाह तआला के गुणों की स्पष्ट रूप से बार–बार बयान किया इसलिए कि शिर्क (बहुदेववाद) तथा अज्ञान के ज़हर का इससे बढ़कर कोई विषहर नहीं, शिर्क (बहुदेववाद) अज्ञान, अल्लाह से अस्वजनता, अल्लाह के अतिरिक्त से लगाव व उससे व्यस्तता का मूल कारण, खुदा से अवगत न होना तथा उसके गुणों व कर्मों से **अनभिज्ञता** या अनदेखी है, इसीलिए कहा:–

अनुवाद– *और वे अल्लाह को उतना नहीं समझे जितना वह है, जबकि सारी धरती क़यामत (महाप्रलय) के दिन उसकी मुट्ठी में होगी और उसके दाहिने हाथ में आकाश लिपटे हुए होंगे अल्लाह पवित्र है तथा वे लोग जो सहभागी व साक्षी ठहराते हैं उससे वह बहुत बुलंद है।*

(सूरः अज़्ज़ुमर ६७)

(२) अल्लाह के अतिरिक्त समस्त हस्तियों व सृष्टियों की वास्तविकता तथा उनकी वास्तविक प्रतिष्ठा की व्याख्या कर दी ताकि आँखों से परदा हट जाए और प्रकाश में देख लिया जाए कि वे वास्तव में क्या है और अन्य के लिए तथा अपने लिए वे कहाँ तक लाभप्रद व उपयोगी हो सकते हैं। उनके साथ आराधना व बन्दगी का मामला तथा उनसे लाभ–हानि व कार्यपूर्ति की अपेक्षा उनके समर्थन व संरक्षण पर विश्वास, उनके ज्ञान पर भरोसा तथा उनके सहारे जीना कहाँ तक ठीक व बुद्धि के अनुकूल है?

अल्लाह तआला के गुणों के सम्बन्ध में उन लोगों ने सैद्धान्तिक और क्रांतिकारी बातें की जिससे जीवन का रुख तथा मन मस्तिष्क की दिशा बदल जाती है, जैसे:– वह "समद" है, अर्थात सम्पूर्ण

ब्रह्माण्ड तथा संसार का हर कण अपना अस्तित्व तथा अस्तित्व से सम्बन्धित वस्तुओं में उसका मोहताज है और वह कदापि किसी वस्तु में किसी का मोहताज नहीं। रचना व सृजन के साथ--साथ संसार का यह सारा कारखाना ही वही अकेला चला रहा है तथा आकाश से लेकर धरती तक उसी की सत्ता और उसी का प्रशासन है।

अनुवाद– *सुनलो! उसी का काम है पैदा करना और उसी का काम है आदेश देना! आकाश से धरती तक वही काम की व्यवस्था करता है।* *(सूरः अस्सजदा ५)*

और इस राजसत्ता में कोई उसका सहायक व सहभागी नहीं।

अनुवाद *– आप कह दीजिए, सारी प्रशसाएं उस अल्लाह के लिए हैं, जिसकी न संतान है और न ही सत्ता में कोई साझी तथा न कोई जिल्लत के समय में सहायक है और उसकी पूर्ण रूप से बड़ाई बयान करो।* *(सूरः अल् इसरा १११)*

अनुवाद *– और न मुश्रिकों (बहुदेववादियों) के उपास्यों का आकाशों और धरती में कुछ साझा है और न उनमें से कोई अल्लाह का सहायक है।* *(सूरः अस्सबा २२)*

केवल उसी की सत्ता असीम, शक्ति न समाप्त होने वाली करूणा सागर अथाह और कोष समाप्तहीन है।

अनुवाद *– और धरती व आकाश के ख़ज़ाने अल्लाह ही के हैं।*
(सूरः अल् मुनाफिकून ७)

अनुवाद *– उसके करूणा व दया के हाथ खुले हुए हैं जैसे चाहता है खर्च करता है।* *(सूरः अल् माइदाः ६४)*

अनुवाद– जिसको चाहता बेहिसाब देता है।

(सूरः अल् बक़रह १२२)

इसलिए लालची मनुष्य की झोली वही भर सकता है और उसकी संतुष्टि वही कर सकता है केवल उसी की आंतरिक व बाहरी रहस्य तथा हृदय की बातों का ज्ञान है और केवल उसी की ज़ात सर्वज्ञाता व सर्व–दृष्टा है।

अनुवाद– वह आँखों की चोरी व सीनों की छुपी हुई बातों को जानता है।

(सूरः ग़ाफ़िर १६)

अतः केवल उसी के ज्ञान पर भरोसा किया जा सकता है तथा हृदय की गुप्त आकांक्षाओं और जीवन की असीम आवश्यकताओं को वही जान सकता है तथा वही पूरा कर सकता है, वही मनुष्य की रक्षा करता है और उसके संत्री मनुष्य की रक्षा हेतु ताएनात हैं।

अनुवाद– प्रत्येक व्यक्ति के आगे और पीछे लगे हुए चौकीदार हैं जो अल्लाह के आदेशानुसार उसकी रक्षा करते हैं।

(सूरः अर्रअ्द ११)

फिर वह निकटतम लोगों से अधिक निकट तथा यकताओं से अधिक यकता है, वह मनुष्य से उसके गर्दन की नस से अधिक निकट है और मरने वाले से उसके परिचायकों से अधिक निकट है।

अनुवाद– और हम तो मनुष्य की गर्दन की नस से भी अधिक निकट हैं।

(सूरः क़ाफ़ १६)

अनुवाद– उस समय तुमसे भी अधिक मरने वाले से हम निकट होते हैं परन्तु तुम देख नहीं सकते।

(सूरः अल–वाक़िअह ८५)

वह हर व्यक्ति की प्रार्थना व विनती को हर समय व हर स्थान पर सुनता है, उसके और बन्दे के बीच कोई दीवार और आड़ नहीं, और न उसके यहाँ मुद्दे को स्पष्ट करने के लिए किसी साधन व शिफारिश की आवश्यकता है।

अनुवाद– *और जब तुमसे मेरे बंदे मुझको पूछें तो मैं तो निकट ही हूँ जब दुआ माँगने वाला मुझसे दुआ माँगता है तो मैं स्वीकार करता हूँ, तो उन्हें मेरा आदेश मानना चाहिए और मुझ पर ईमान (आस्था) लाना चाहिए ताकि सत्यमार्ग पर आएं।* (सूरः अल् बकरह १६८)

उसका प्यार व स्नेह असीमित है, माता–पिता का प्यार केवल उसके पालनहार होने तथा करूणा का एक चमत्कार तथा एक छोटा सा नमूना है।

फिर वह सदैव जीवित और जागरूक है, क्योंकि वह धरती आकाश को संभाले हुए है, अतः उसके यहाँ किसी समय असावधानी व भूल नहीं।

अनुवाद– *अल्लाह के अतिरिक्त कोई उपासना (बन्दगी) के योग्य नहीं वही हमेशा जीवित रहने वाला है, कायम व स्थापित है। सबको थामने वाला है, उसको कभी भी ऊँघ व नींद नहीं आ सकती।*

(सूरः अल–बकरह २५५)

इसके विरूद्ध उन्होंने अल्लाह की समस्त सृष्टि के लिए वह सारे गुण सिद्ध किये जो उन ईश्वरीय गुणों के विरूद्ध व विलोम सिद्ध हुए हैं, जिनका समूह गुलामी, असहायता व दुर्बलता तथा असमर्थता है।

अनुवाद– *उसी को पुकारना सत्य है, जिनको यह लोग अल्लाह के*

अतिरिक्त पुकारते हैं वे उनके कुछ भी काम नहीं आते, जैसे कोई प्यासा आदमी अपनी दोनों हथेलियाँ फैलाकर पानी से कहे कि उसके मुँह में आ जाए जब कि पानी कभी भी उसके मुँह में नहीं पहुँच सकता, इसी प्रकार इंकार करने वालों की दुआ व प्रार्थना का कुछ भी प्रभाव नहीं। (सूरः अर्रअद १४)

अनुवाद— ऐ लोगो! एक उदाहरण दिया जाता है ध्यान से सुनो, अल्लाह के अतिरिक्त जिनको तुम पूजते हो एक मक्खी भी नहीं पैदा कर सकते, यदि सब एकत्र होकर पैदा करना चाहें तो भी नहीं कर सकते और यदि मक्खी उनसे कोई चीज़ छीन झपट कर ले जाए तो उससे छुड़ा भी नहीं सकते, जिसने अपनी दुआ व प्रार्थना में ऐसे को तलब किया जो स्वयं बहुत कमज़ोर, बेबस है और जिससे दुआ की वह भी बेचारा बेबस, अल्लाह के अतिरिक्त को पुकारने वालों ने अल्लाह की कदर नहीं समझी जैसी कद्र का उसे अधिकार है। निः संदेह अल्लाह तआला शक्तिमान व ज़बरदस्त है।

(सूरः अल् हज्ज ७३)

अनुवाद— जिन लोगों ने अल्लाह को छोड़कर दूसरों को समर्थक बना लिया है, उनकी मिसाल मकड़ी जैसी है, जिसने अपना एक घर बनाया यह सच है कि सब घरों में कमजोर घर मकड़ी का घर होता है, क्या ही अच्छा होता कि वे (इस वास्तविकता को) जानते।

(सूरः अल् अंकबूत ४१)

अनुवाद— यही अल्लाह तुम्हारा पालनहार है उसी की राज सत्ता है, जिनको तुम अल्लाह के अतिरिक्त पुकारते हो उनको तो खजूर की गुठली के छिलके **के बराबर भी अधिकार** प्राप्त नहीं। यदि तुम उनको पुकारते हो तो वे तुम्हारी पुकार सुनते ही नहीं और यदि सुन लें तो

तुम्हारी कुछ काम न आएं और क़यामत (महाप्रलय) के दिन तुम्हारे साझी बनाने के कार्य को भी नकार देंगे, और हर प्रकार की ख़बर रखने वाले (अल्लाह) की तरह दूसरा कोई तुमको घटना की सूचना, नहीं दे सकता। ऐ लोगो! तुम लोग अल्लाह के मोहताज हो और केवल वही बेपरवाह है तथा हर प्रकार की प्रशंसा का पात्र है।

(सूरः फातिर १३--१५)

अनुवाद– *मुश्रिकों (बहुदेववादियों) ने अल्लाह के अतिरिक्त ऐसे उपास्य (मअ़बूद) बनाए जो किसी वस्तु को पैदा नहीं कर सकते और अपने ही लिए किसी लाभ व हानि का अधिकार नहीं रखते और उनको जीवन--मृत्यु और मरकर दुबारा जीवित होने का भी अधिकार नहीं।* *(सूरः अलफ़ुर्क़ान 3)*

लोगों के दो वर्ग

नबीगणों के इन स्पष्ट निर्देश तथा शिक्षाओं के पश्चात साधारण रूप से लोगों के दो वर्ग अस्तित्व में आए।

(१) एक वर्ग वह है जिसने अल्लाह के उन पैगम्बरों पर भरोसा किया जिनको अल्लाह ने नबूव्वत (दूतता) व रिसालत (दूतकर्म) से सम्मानित किया अपनी सत्य पहचान (मअ़रिफ़त) प्रदान किया। अपने व्यक्तित्त्व व गुणों तथा इच्छाओं से अवगत करने के लिए अपने तथा सृष्टि के बीच माध्यम बनाया और उनको विश्वास का ऐसा धन प्रदान किया जिससे अधिक की कल्पना सम्भव नहीं, वह प्रकाश प्रदान किया जिससे अधिक बुद्धि को रोशन करने वाला तथा विश्वसनीय कोई प्रकाश नहीं हो सकता।

अनुवाद– *और इसी प्रकार हम इब्राहिम को आकाशों और धरती की*

राज सत्ता दिखाते हैं ताकि उन्हें भलीभांति विश्वास हो जाए।

(सूरः अल् अन्आम ७५)

नबियों के इसी वर्ग के एक व्यक्ति हज़रत इब्राहिम अलैहिस्सलाम ने अपनी कौम को जब वह उनसे अल्लाह तआला के व्यक्तित्व व गुणों के विषय में (बिना किसी ज्ञान व प्रकाश के) अनावश्यक बहस कर रही थी उत्तर दिया।

अनुवाद– *क्या तुम मुझसे अल्लाह के विषय में झगड़ा करते हो जबकि उसने मुझे सत्यमार्ग दिखा दिया है।* *(सूरः अल् अन्आम ८१)*

इस वर्ग के लोगों ने नबियों का दामन थाम कर और उनके द्वारा प्रदत मूल वास्तविक्ताओं व अकीदों (विश्वासों) के प्रकाश में ब्रह्माण्ड व जीवों में चिन्तन–मनन और अल्लाह की निशानियों तथा आकाशीय ईश ग्रन्थों में विचार की यात्रा आरम्भ की तथा इसकी सहायता से सदकर्म, मन–शुद्धि और आचरण सुधार का कार्य ठीक लकीरों पर किया, उन्होंने बुद्धि प्रयोग को त्यागा नहीं, केवल यह किया कि उसको सही मार्ग पर लगाकर उससे वह काम लिया जो वह कर सकती थी और जो उसका वास्तविक लाभ था, उन्होंने देखा कि उसके पश्चात नबियों की शिक्षाओं और उनके परिणाम के चिन्तन–मनन में पूर्णतया सामन्जस्य है और वे एक दूसरे की सत्यापन करते हैं तथा उनके ईमान व यकीन (आस्था व विश्वास) में बढ़ोत्तरी होती जाती है।

अनुवाद– *और (इस चिन्तन–मनन) से उनके ईमान व आज्ञाकारिता में बढोत्तरी ही हुई।* (सूरः अल् अह्ज़ाब २२)

(२) दूसरा वह गिरोह है जिसने अपनी प्रतिभा व ज्ञान पर

पूर्ण रूप से भरोसा किया, बुद्धि की लगाम को स्वतंत्र छोड़ दिया तथा खूब अनुमान लगाया, अल्लाह की ज़ात (व्यक्तित्व) व गुणों के अध्ययन व शोध में इस प्रकार निःसंकोच विश्लेषण किया जैसे प्रयोगशाला में प्रकृति, ऊर्जा अथवा किसी वनस्पति के साथ किया जाता है, और अल्लाह के विषय में "वह ऐसा है" वह ऐसा नहीं है कि बेधड़क निर्णय प्रारम्भ कर दिये, उनके यहाँ इस सम्बन्ध में वह ऐसा नहीं है की मात्रा, वह ऐसा है के मुकाबले बहुत ज्यादा थी, तथा यह वास्तविकता है कि मनुष्य विश्वास व प्रकाश से वंचित हो तो उसके लिए नकारना मानने से अधिक सरल होता है। इसीलिए यूनानी दर्शनशास्त्र में खुदा से सम्बन्धित अध्याय में शोध के परिणाम अधिकांश नकारात्मक हैं, और कोई धर्म (दीन) कोई जीवन व्यवस्था भी नकारने पर स्थापित नहीं होती।

यहाँ कुर्आन का एक विचित्र रोचक बिंदू है जिसकी ओर सर्वप्रथम महान इस्लामी विद्वान हाफिज पुत्र तौमिया रहमतुल्लाहि अलैहि के एक वाक्य से ध्यान गया, वह कहते हैं "यूनान के दार्शनिक जब अल्लाह के गुणों का उल्लेख करते तो वे गुणों के अधिक विस्तार व गहराई में जाते थे जो उनकी दृष्टि से अल्लाह के लिए उपयुक्त नहीं हैं। अर्थात "नकारात्मक गुण" (वह ऐसा नहीं है तथा इस बात से अछूता है) और जब सकारात्मक गुणों का उल्लेख होता (अल्लाह ऐसा है और उसका यह गुण है) तो इसमें संक्षेप से काम लेते। इस प्रकार दर्शन शास्त्र में नकारात्मक व्याख्यान विस्तार पूर्वक है और सकारात्मक व्याख्यान संक्षेप में मिलता है, इसके विरूद्ध पवित्र कुर्आन में अल्लाह के गुणों में सकारात्मक पक्षों का विस्तृत वर्णन किया गया है और नकारात्मक व्याख्यान का संक्षिप्त में उल्लेख किया गया है। दूसरे आकाशीय धर्मों और नबियों की शिक्षाओं में समान गुण मिलेगा कि ऐसा

है विस्तृत व ऐसा नहीं है संक्षिप्त।

अल्लाह तआला के गुणों की सकारात्मक व्याख्या पवित्र कुर्आन की निम्न आयतों में पढ़िये।

अनुवाद– *वही अल्लाह है जिसके अतिरिक्त कोई पूजा के योग्य नहीं, छिपी व खुली हर बात का जानने वाला, वह बड़ा दयालू तथा असीम कृपालू है। वही अल्लाह है जिसके अतिरिक्त कोई उपासना (इबादत) के पात्र नहीं, वास्तविक राजा, पवित्र, अम्न व सलामती देने वाला, निगहबानी करने वाला, वर्चस्व वाला, जबरदस्त, बड़ाई वाला, अल्लाह उन लोगों के साझी बनाने से पवित्र है। रचयिता (ख़ालिक) भी वही, आविष्कार करने वाला व चेहरा मोहरा बनाने वाला भी वही, उसके अच्छे से अच्छे नाम हैं आकाशों व धरती की सारी वस्तुएं उसकी गुणगान (तस्बीह) करती हैं और वही बडा जबरदस्त युक्तिवान है।*

(सूरः अल्हश्र २२–२४)

और नकारात्मक गुण का उल्लेख पढ़िए–

अनुवाद– *उसके समान कोई वस्तु नहीं और वह देखता–सुनता है।*

(सूरः अश्शूरा ११)

इमाम इब्न तैमिया के कथनानुसार नकारात्मक गुण चाहे सैकड़ों की संख्या में हों उनका वह प्रभाव नहीं पड़ सकता जो एक सकारात्मक व्याख्यान का होता है, इमाम इब्न तैमिया ने सर्वथा सत्य बात कही है, वास्तविकता यही है कि हमारा यह जीवन तथा गत वंशों के जीवन साक्षी हैं कि मानव जीवन हाँ पर स्थापित है न कि नहीं पर, न की मात्रा मानव जीवन तथा संस्कृति में बहुत कम है।

तौहीद (एकेश्वरवाद) तथा शिर्क (बहुदेववाद) की वास्तविकता और अरब के मुश्रिकीन (बहुदेववादी)

इबादत (उपासना) का आधार अक़ीदों (विश्वासों) तथा ईमान (आस्था) के सही रखने पर है जिसके अकीदे व ईमान में गड़बड़ी हो उसकी न कोई इबादत (उपासना) मान्य है और न कोई कर्म ठीक माना जाएगा और जिसका अक़ीदा व ईमान ठीक हो उसका थोड़ा काम भी बहुत है, इसलिए हर व्यक्ति को इसकी पूरी कोशिश करनी चाहिए कि उसका ईमान व अक़ीदा (विश्वास) ठीक हो, और सही ईमान व अकीदे (विश्वास) की प्राप्ति और उस पर संतुष्टि, उसका कार्य उद्देश्य तथा अंतिम मनोकामना हो, उसको अनिवार्य व अद्वितीय समझे और इसमें क्षणभर भी देर न करे।

स्वच्छ मानसिकता, गहनता व सत्य की खोज की भावना के साथ पवित्र कुर्आन के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम (संदेष्टा) के युग के काफिर अपने झूठे उपास्यों को अल्लाह का सर्वथा समकक्ष व समान प्रतिष्ठित नहीं समझते थे, वरन् वे यह स्वीकार करते थे कि वे सृष्टि व बन्दे हैं, उनका कभी यह विश्वास न था कि उनके उपास्य क्षमता व शक्ति में किसी प्रकार कम नहीं और वे अल्लाह के साथ एक ही पड़ले में हैं पवित्र कुर्आन में जगह–जगह इसकी गवाहियां मौजूद हैं, इस अवसर पर सूरः अलमूमिनून की निम्न लिखित आयतें पर्याप्त होंगी।

अनुवाद– *ऐ नबी आप पूछिये। धरती और उसकी सारी वस्तुएं किसकी हैं। यदि तुम जानते हो तो बताओ! शीघ्र ही उत्तर देंगे कि सब कुछ अल्लाह का है, आप कहिए। फिर तुम सोचते नहीं। आप पूछिए सातों आसमानों और महान सिंहासन (अर्श) का मालिक कौन*

है? वे उत्तर देंगे कि अल्लाह। आप कहिए कि तुम डरते नहीं? आप पूछिए हर वस्तु की सत्ता किसके हाथ में है? वही शरण देता है और उसके विरुद्ध कोई शरण नहीं दे सकता, यदि तुम्हें ज्ञान है, उत्तर देंगे अल्लाह। आप कहिए कि फिर तुम पर कहाँ से जादू चल गया है? (कि ऐसे अल्लाह को छोड़कर दूसरों की पूजा करते हो)

(सूरः अल्मुअ्मिनून ८४–८६)

उनका कुफ़्र व शिर्क (नास्तिकता व बहुदेववाद) केवल यह था कि वे अपने झूठे पूज्यों को पुकारते तथा उनकी दुहाई देते, उन पर चढ़ावा चढ़ाते तथा उनके नाम पर बली देते व उनको अल्लाह के वहाँ सिफारिशी, संकट मोचन तथा काम बनाने वाले समझते थे, अतः हर वह व्यक्ति जो किसी के साथ वही मामला करे जो काफ़िर लोग अपने झूठे उपास्यों के साथ करते थे तो यद्यपि वह इसको स्वीकार करे कि वह एक सृष्टा तथा अल्लाह का बन्दा (उपासक) है, उसमें तथा जाहिलियत–युग (इस्लाम पूर्व युग) के एक बड़े से बड़े मूर्ति पूजक में मुश्रिक होने के विषय में कोई अन्तर नहीं होगा।

हज़रत शाह वली उल्लाह साहब रहमतुल्लाहि अलैहि लिखते हैं– ज्ञात हो कि तौहीद (एकेश्वरवाद) के चार दर्जे हैं–

(१) केवल अल्लाह को "वाजिबुल वजूद (जिसका अस्तित्व कभी समाप्त न हो) करार देना अतः कोई और वाजिबुल् वजूद नहीं।

(२) अर्श (सिंहासन) आकाश व धरती और सारी मौजूद वस्तुओं का सृजक अल्लाह को समझना। (इसी को तौहीदे रूबूबियत कहा जाता है)

यह दो दर्जे वे हैं जिनसे आसमानी ग्रंथों ने बहस की आवश्यकता

नहीं समझी और न अरब के मुश्रिकों (बहुदेववादियों) तथा यहूदियों व ईसाइयों को इस विषय में मतभेद व इनकार था वरन् पवित्र कुर्आन इसका स्पष्टीकरण करता है कि यह दोनों दर्जे उनके वहाँ सर्वमान्य हैं।

(३) आकाश व धरती के और जो कुछ इनके मध्य है उसको केवल अल्लाह के लिए विशेष समझना।

(४) अल्लाह के अलावा किसी को इबादत (उपासना) का पात्र न मानना।

यह दोनों दर्जे स्वाभाविक रूप से परस्पर सम्बन्ध रखते हैं इनका घनिष्ट और निकटतम सम्बन्ध है, इन्हीं दोनों दर्जों से पवित्र कुर्आन ने बहस की है तथा काफिरों के शक संदेहों का पर्याप्त उत्तर दिया है।

(हुज्जतुल्लाहिल बलिग़ा १/५९–६०)

इससे यह ज्ञात हुआ कि शिर्क का अर्थ केवल यह नहीं कि किसी को अल्लाह का समकक्ष व समान क़रार दिया जाए, बल्कि शिर्क की वास्तविकता यह है कि आदमी किसी के साथ वह काम अथवा वह मामला करे जो अल्लाह तआला ने अपनी श्रेष्ठ व उच्च ज़ात (व्यक्तित्व) के साथ खास कर दिया है और जिसको बन्दगी (उपासना) की पहचान बनाया है, जैसे किसी के सामने सजदा करना (माथा टेकना) किसी के नाम की बली देना या मन्नत मानना, विपदा व दुःख में किसी से सहायता माँगना और यह समझना कि वह हर स्थान पर हाजिर व नाजिर (सर्वव्यापी व सर्वदृष्टा) है और उसको ब्रह्माण्ड की व्यवस्था चलाने वाला समझना, यह सारी वह वस्तुएं हैं जिनसे शिर्क (बहुदेववाद) सिद्ध होता है, और मनुष्य इसके करने से

मुश्रिक हो जाता है चाहे उसका विश्वास ही क्यों न हो कि वह इन्सान, फ़रिश्ता (देवदूत) अथवा जिन्न जिसके सामने वह सजदा कर रहा है (माथा टेक रहा है) या जिसके नाम की बलि दे रहा है या मन्नते मान रहा है और जिससे सहायता माँग रहा है, वे अल्लाह तआला से बहुत कम प्रतिष्ठित तथा छोटी पदवी वाले हैं और चाहे यह मानता हो कि अल्लाह ही सृजक (ख़ालिक) है और यह उसका बन्दा और सृष्टि (मख़लूक़) है, इस विषय में नबी (संदेष्टा) वली (अल्लाह के प्रिय) जिन्न शैतान भूत प्रेत सब बराबर हैं, इनमें से किसी के साथ भी जो व्यवहार व मामला करेगा वह मुश्रिक (बहुदेववादी) क़रार दिया जाएगा और यही कारण है कि अल्लाह तआला उन यहूदियों व ईसाइयों को जिन्होंने अपने राहिबों, पादरियों तथा पुरोहितों के विषय में इस प्रकार अत्यधिक प्रशंसा व बढ़ा–चढ़ा कर व्याख्यान का रास्ता अपनाया जिस प्रकार मुश्रिकों (बहुदेव वादियों) ने अपने झूठे पूज्यों के विषय में उन्हीं लक्षणों व नामों से याद किया है जिन नामों से मूर्ति पूजकों व मश्रिकों को याद किया है और उन अत्याधिक प्रशंसा करने वालों व सत्य मार्ग से हटने वालों से उसी प्रकार अपना कोप व क्रोध व्यक्त किया है जिस प्रकार अत्यधिक मुश्रिकों पर अल्लाह तआला का कथन है:–

अनुवाद– *अल्लाह के अतिरिक्त अपने अलिमों (ज्ञानियों) और दुरवेशों (संसार त्यागियों) और मरयम अलैहस्सलाम के पुत्र मसीह अलैहिस्सलाम को अपना रब (पालनहार) बना लिया जबकि उनको केवल यह आदेश था कि एक मात्र अल्लाह के अतिरिक्त किसी की इबादत (उपासना) न करें, उसके अतिरिक्त कोई इबादत (पूजा) के योग्य नहीं अल्लाह उनके शिर्क से पाक है।*

(सूरः अत्तौबा ३१)

शिर्क के रूप व कार्य और जाहिली रीति-रिवाज

इस नियामक तथा साधारण बात के पश्चात आवश्यक है कि उन कमजोरियों, रोग तथा उन भयानक बिगाड़ की जड़ों को चिन्हित कर दिया जाए जो अज्ञानियों, बाहरी प्रभाव तथा जाहिली रीति–रिवाज से प्रभावित संप्रदायों व कौमों और उन लोगों में पाई जाती हैं जिनका पालन–पोषण सही इस्लामी शिक्षाओं, पवित्र कुर्आन व हदीस के ज्ञान तथा शुद्ध दीन की दावत (आवाहन) से दूर तथा सही इस्लामी शिक्षाओं से वंचित परिवेश में हुआ, उन कमजोरियों को चिन्हित करना तथा रोगी शरीर में उन रोगों का सही निर्धारण व चिन्हण आवश्यक है।

सर्वव्यापी ज्ञान, असीमित इच्छा, स्वतंत्र व असीमित अधिकार व पूर्ण शक्ति अल्लाह की विशेषताएं हैं तथा इबादत (उपासना) के कार्य व पहचान जैसे सजदा (विशेष शैली में माथा टेकना) अथवा रुकूअ् (विशेष शैली में सिर नवाना) किसी के सामने करना किसी के नाम पर उसकी प्रसन्नता के लिए रोज़ा (विशेष इस्लामी व्रत) रखना, सुदूर से पूर्ण तैयारी के साथ किसी स्थान के लिए लम्बी यात्राएं करना और उसके साथ वह मामला करना जो कअ्बा के साथ किया जाता है तथा वहाँ कुर्बानी (विशेष इस्लामी बलि) के पशु ले जाना, मन्नत मानना शिर्क के काम तथा शिर्क के स्पष्ट रूप हैं, आदर के वह ढंग और पहचान जिनसे इबादत (उपासना) का रूप बने केवल अल्लाह के लिए विशेष है, ग़ैब का ज्ञान केवल अल्लाह को है तथा मानव शक्ति से बाहर है। हृदयों के भेदों तथा विचारों व नियतों का ज्ञान हर समय किसी के लिए सम्भव नहीं, अल्लाह तआला को सिफ़ारिश स्वीकार करने और प्रभावशाली व सम्मानित तथा सत्ताधारी लोगों को राजी व खुश करने में दुनिया के राजाओं पर क़यास नहीं करना

चाहिए। ऐसी हर छोटी बड़ी बात में अल्लाह ही से सम्पर्क साधना चाहिए, सांसारिक राजाओं के समान ब्रह्माण्ड की व्यवस्था के लिए दरबारियों व मन्त्रियों से मदद लेना खुदा की शान नहीं है। किसी प्रकार का सज्दा (माथा टेकना) खुदा के अतिरिक्त किसी के लिए वैध नहीं। हज की इबादतें अति (आदर) के मज़ाहिर (प्रकट होने वाली चीजें) और प्रेम व तल्लीनता के तमाम पहचान काबा और हरम के साथ खास है। नेक लोगों और औलिया के नाम पर जानवरों को खास करना, उनका आदर करना, उन की चढ़ावा चढ़ाना और उनकी कुर्बानी (ज़बह) के ज़रिये उनकी निकटता प्राप्त करना हराम है। आजिज़ी व विनम्रता के साथ हद दर्जे का आदर केवल खुदा का हक़ है। निकटता व आदर की भावना से कुर्बानी करना केवल अल्लाह का हक है। ब्रह्माण्ड में नक्षत्रों, ग्रहों के प्रभाव में विश्वास करना शिर्क है। जादूगरों, ज्योतिषियों और गैब की बातें बताने वालों पर भरोसा करना कुफ्र है।

नाम रखने में भी मुसलमानों को तौहीद की पहचान का प्रदर्शन करना चाहिए। गलतफहमी पैदा करने और जिससे मुशरिकाना ऐतेकाद (शिर्क वाले विश्वास) का इज़हार होता है, ऐसे शब्दों से परहेज़ करना चाहिए। खुदा के अलावा किसी की क़सम खाना शिर्क है, गैर अल्लाह की मन्नतें मानना हराम है, इसी प्रकार किसी ऐसे मकाम पर कुर्बानी करना जहाँ मूर्ति थी अथवा जाहिली युग का कोई उत्सव मनाया जाता था अवैध है। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के बारे में अतिश्योक्ति की नक्ल और औलिया व नेक लोगों के चित्रों और शबीहों की ताज़ीम (आदर) करने से परहेज़ और पूरा एहतियात करना चाहिए।

नबूवत का मूल उद्देश्य विश्वव्यापी मुशरिकाना जाहिलियत (अज्ञानता) को समाप्त करना है।

अल्लाह के बारे में अकीदा और ख़ुदा व बन्दे के बीच सम्बन्ध के सुधार और सिर्फ एक की बन्दगी की दावत, हर ज़माने में नबियों की पहली दावत और उनके आने का प्रथम और अत्यन्त महत्वपूर्ण उद्देश्य रहा है। हमेशा उनकी शिक्षा यही रही है कि अल्लाह ही लाभ व हानि पहुँचाने की ताकत रखता है और सिर्फ वही इबादत, दुआ, ध्यान और कुर्बानी का पात्र है। उन्होंने हर दौर में अपने ज़माने में जारी मूर्तिपूजा पर करारी चोट लगाई। अज्ञान लोगों का मूर्तियों, पवित्र आत्माओं, जिन्दा व मुर्दा शखसियतों के बारे में विश्वास था कि अल्लाह ने उन्हें मान मर्यादा और सम्मान देकर पूज्य बनाया है, और इन्सानों के बारे में उनकी सिफ़ारिशों को कुबूल करता है, जैसे महान सम्राट हर इलाके के लिए एक हाकिम भेज देता है और कुछ महत्वपूर्ण बातों के अलावा इलाके की व्यवस्था की जिम्मेदारी उन्हीं के सर डाल देता है, इसलिए उन्हीं से कहना और उन्हीं को राज़ी करना लाभदायक और जरूरी है।

जिस व्यक्ति को पवित्र कुर्आन से कुछ भी लगाव है, उसे निश्चित रूप से यह बात मालूम होगी कि शिर्क व मूर्ति पूजा के खिलाफ मोर्चाबंदी उससे लड़ना, उसको दुनिया से मिटाने की कोशिश करना, और लोगों को उसके चँगुल से हमेशा के लिए छुटकारा दिलाना नबियों का बुनियादी मक़सद नबियों के आगमन का मूल कारण, उनकी दावत का आधार तथा उनके संघर्ष का वास्तविक लक्ष्य था, यही उनकी दावती कार्यों का ध्रुव व केन्द्रबिन्दु था। पवित्र कुर्आन कभी तो उनके बारे में संक्षेप में कहता है।

अनुवाद– *और हमने आपसे पहले रसूल भेजे। उनके पास हमने वह्इ (ईशवाणी) भेजी कि मेरे सिवा कोई मअबूद नहीं तो मेरी ही इबादत करो।*

(सूरः अल् अंबिया २५)

और कभी विस्तार के साथ एक–एक नबी का नाम लेता है और बताता है कि दावत की शुरूआत इसी तौहीद की दावत से हुई थी और पहली बात जो उन्होंने कही वह यही थी।

अनुवाद– *उन्होंने कहा! ऐ मेरी क़ौम के लोगो! अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई मअ्बूद (उपास्य) नहीं।*

(सूरः अल–अअ्राफ़ ५६)

यही बुतपरस्ती (मूर्तिपूजा) और शिर्क विश्वव्यापी, दीर्घकालीन और शक्तिशाली ''जाहिलियत'' है जो किसी ज़माने के साथ खास नहीं, और यही मानव जाति का प्राचीनतम और घातक रोग है जो मानव इतिहास के सारे युगों, सभ्यता, आर्थिक स्थिति व राजनीति के तमाम परिवर्तनों व क्रान्तियों के बावजूद मानव जाति के पीछे लगा रहता है, अल्लाह की गैरत और उसके कोप को भड़काता है, बन्दों की आध्यात्मिक, नैतिक और सांस्कृतिक विकास की राह का रोड़ा बनता है और उनको इन्सानियत के बुलन्द दर्जे से गिराकर गर्त में औंधे मुँह डाल देता है और यही खण्डन क़यामत (महाप्रलय) तक के लिए दीनी दावतों और सुधारात्मक अभियानों का बुनियादी स्तम्भ और नबूवत की सर्वकालिक मीरास है।

अनुवाद– *और यही बात अपनी औलाद में पीछे छोड़ गये ताकि वे उससे सम्पर्क साधे।*

(सूरः अज़्ज़ुख़रूफ़ २८)

यह कदापि जायज़ नहीं कि नई सुधारात्मक व दावती और ज़माने की नई जरूरतों के असर से "शिर्क जली" के महत्व को कम कर दिया जाये, और दावत व तबलीग़ के बुनियादी नियमों में इसको गौण (ज़िमनी) हैसियत दी जाये या "राजनीतिक स्वीकारोक्ति" तथा इन्सानों के बनाये हुए किसी कानून व्यवस्था के कुबूल करने को और गैरं अल्लाह की इबादत को एक दर्जे में रखा जाये। और दोनों पर एक ही हुक्म लगाया जाये, या यह समझ लिया जाये कि शिर्क प्राचीन जाहिलियत की (जब मानव बुद्धि और ज्ञान व सभ्यता शैष्यावस्था में थे) बीमारी और ख़राबी तथा जिहालत की एक भद्दी और भोंडी शक्ल थी, जो इन्सान अविकसित और असभ्य युग ही में इख़्तियार कर सकता है। अब इसका दौर गुज़र गया। इन्सान बहुत तरक्की कर चुका है, अब उसका बौद्धिक भटकाव नये–नये विकसित रूप में प्रकट होता है, यह दावा व वास्तविकता के भी विपरीत है। शिर्क जली (खुला) बल्कि खुली हुई बुतपरस्ती (मूर्तिपूजा) आज भी स्पष्ट रूप में मौजूद है, और कौम की कौम, पूरे–पूरे मुल्क यहाँ तक कि बहुत से मुसलमान शिर्क जली से ग्रसित हैं और पवित्र कुर्आन का यह एलान आज भी सत्य है।

अनुवाद— *उनमें से अधिकतर लोगों का हाल यह है कि अल्लाह को मानते भी है और उसका साझीदार भी ठहराते हैं।*

(सूरः यूसुफ १०६)

सच यह है कि अगर कोई इसका पात्र था कि उसके अक़ीदे की अनदेखी कर ली जाये क्योंकि वह आजीवन अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए डटकर मुकाबला और जान व परिवार से कुर्बान रहा तो व रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के चचा अबु

तालिब थे। जीवनी लेखक एक मत होकर उनके बारे में लिखते है कि वह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए ढाल और घेरा बने हुए थे, और अपनी पूरी क़ौम के विपरीत आपके सहायक और समर्थक थे। लेकिन सही बयानों से साबित है कि जब हमारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अबु तालिब की मौत के समय, जब कि अबु जहल और अब्दुल्ला बिन अबी उमैया भी वहाँ बैठे हुए थे, उनके पास गये और कहा "ऐ चचा! आप ला–इला–ह इल्लल्लाह कह दीजिए, मैं इस कलिमा की खुदा के यहाँ गवाही दूँगा, तो अबु जहल और इब्ने अबी उमैया कहने लगे, अबुतालिब! क्या तुम अब्दुल मुतलिब के मज़हब से मुँह मोड़ोगे तो अबुतालिब ने यह कहते हुए जान दी कि अब्दुल मुत्तलिब के मज़हब पर हूँ। सही बयानों में आता है कि हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अंहु ने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से कहा! अबुतालिब आपकी रक्षा और मदद करते थे, और आपका बड़ा लेहाज व समर्थन करते थे और लोगों की प्रसन्नता और नाराजगी की कतई परवाह नहीं करते थे, तो क्या इसका फायदा उनको पहुँचेगा? आपने फरमाया "मैंने उनको आग की लपटों में पाया, और मामूली आग तक निकाल लाया।"

(सही मुस्लिम किताबुल ईमान)

इसी तरह इमाम मुस्लिम ने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अंहा का बयान लिखा है। वह कहती हैं कि मैंने कहा ऐ! अल्लाह के रसूल इब्ने जदआन जाहिलियत (इस्लाम पूर्व काल) के ज़माने में बड़ी सिलह रहमी (अपने परिवार वालों से प्रेम रखना और यथाशक्ति उनकी सहायता करना) करते थे, अनाथों और गरीबों को खाना खिलाते थे, तो क्या उनके लिए यह लाभकारी होगा? आपने कहा "नहीं! उनको इससे कोई फायदा हासिल न होगा क्योंकि उन्होंने कभी नहीं कहा"

ऐ मेरे रब! बदले के दिन मेरे गुनाह को बख़्श दीजिएगा।[1]

इससे भी अधिक साफ और सुस्पष्ट हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अंहा की एक दूसरी रिवायत (बयान) है जिसमें वह कहती हैं कि रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम बद्र की तरफ़ रवाना हुए और जब मक़ामे हर्रः अलवबरः पर पहुँचे तो एक व्यक्ति आया जिसके साहस की बड़ी चर्चा थी, उसको देखकर सहाबा को बड़ी खुशी हुई (कि इससे इस्लाम के लश्कर में जिनमें ३१३ लोग थे एक वृद्धि होगी जब वह रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पास आया तो उसने कहा कि मैं इसलिए आया हूँ कि आपके साथ चलूँ और माले गनीमत (युद्ध के बाद प्राप्त माल) में शरीक हूँ। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कहा तुम अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान रखते हो? उसने कहा नहीं। आपने कहा वापस जाओ इसलिए कि मैं किसी मुशरिक से मदद नहीं ले सकता। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अंहा कहती हैं कि वह कुछ दूर चला, यहाँ तक कि हम लोग जब शजरः नामी स्थान पर थे, वह फिर आया और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से वही पहली बात कही, आपने वही पहला जवाब दिया, फरमाया जाओ मैं मुशरिक से मदद नहीं लेता। वह चला गया। और बैदा (स्थान) पहुँचने पर फिर आया। आपने फिर पूछा, अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाते हो? उसने कहा, हाँ। उस समय अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कहा तो चलो।[2]

तौहीद की दावत और उसके तक़ाज़े (आवश्यकताएं)

नबियों और उनके उत्तराधिकारियों का असल काम यह है कि वह अल्लाह से बन्दों का निकटस्थ सम्बन्ध पैदा करें।

[1] सही मुस्लिम किताबुल ईमान [2] सही मुस्लिम किताबुल जिहादि वस्सियर

अनुवाद— *और उनको इसके अलावा कोई आदेश नहीं दिया गया था, कि केवल अल्लाह ही की इबादत करें, अपने धर्म को उसके लिए शुद्ध करके एकाग्र होकर।*

(सूरः अल् बयि्यनह ५)

अल्लाह और उसके बन्दों के बीच कोई पर्दा और रोक न रहे। प्रेम व मुहब्बत, लगन व लगाव, इरादा व अमल, कोशिश व प्रयास, हाजिरी व तौबा, आज्ञापालन व इबादत, विनती व गिड़गिड़ाना, सरगोशी व मुनाज़ात (ईश प्रार्थना) भय और लोभ अतः मन—मस्तिष्क सबका किबलः (केन्द्र) वही हो। नबियों और उनके सच्चे उत्तराधिकारियों के तमाम प्रयासों का केन्द्र और सबसे बड़ा मक़सद यही होता है। इसी लिए उनका संघर्ष है, उनकी हिजरत (प्रवास) है, उनकी तब्लीग़ (धर्म प्रचार) है, और इसी राह में उनकी ज़िन्दगी और मौत है।

अनुवाद— *कह दीजिए निः संदेह मेरी नमाज और मेरी कुर्बानी और मेरा जीना और मरना सब अल्लाह के लिए है, जो सारे संसार का रब (पालनहार) है। जिसका कोई साझीदार नहीं है। मुझे तो इसी का आदेश मिला है और मैं सबसे पहले आज्ञाकारी हूँ।*

(सूरः अल अन्आम १६३)

और इस मक़सद में भी अल्लाह के आदेश से वह अपने क्षेत्र और अनुयायियों में पूरे तौर पर कामयाब होते हैं। वह मन मस्तिष्क को ग़ैर अल्लाह की व्यस्तता और जकड़न से आज़ाद कर देते है। लेकिन अज्ञान का प्रभाव कभी—कभी इसके ख़िलाफ़ बग़ावत करते रहते हैं, और शिर्क इन्सानों में दब—दब कर उभरता रहता है, यहाँ तक कि खुद उनके नाम लेने वालों और उनकी उम्मत और अनुयायी कहलाने वालों का हाल वह हो जाता है जो कुर्आन ने बयान किया है:—

अनुवाद– उनमें अधिकतर लोग अल्लाह को मानते भी हैं तो इस तरह कि वे साझीदार भी ठहराते हैं।

(सूरः यूसुफ १०६)

धीरे–धीरे अल्लाह से असम्बन्ध और गैर अल्लाह से सम्बन्ध इतना बढ़ जाता है कि व्यवहारिक रूप से वह दशा हो जाती है जो कुर्आन ने बयान की है।

अनुवाद– और कुछ लोग ऐसे भी हैं जो औरों को अल्लाह के बराबर बना लेते हैं, उनसे ऐसी मुहब्बत करते हैं जैसे अल्लाह से।

(सूरः अल्बक़र १६५)

अनुवाद– और जब केवल एक अल्लाह का जिक्र किया जाता है तो जो आख़िरत पर ईमान नहीं रखते, उनके दिल कुढ़ने लगते हैं, और जब इसके सिवा दूसरों का जिक्र होता है तो वे खुश हो जाते हैं।

(सूरः अज़् जुमर ४५)

फिर इस अक़ीदे के अन्तर्गत ग़ैर अल्लाह के नाम पर वह सारे काम किए जाते हैं जो अल्लाह के लिए ख़ास हैं। जैसे बलि (जबह), मन्नत सजदा (माथा टेकना) दुआ आदि। गैर अल्लाह से ऐसी रूचि होती है कि धीरे–धीरे ज़िन्दगी का रिशता अल्लाह से टूट कर गैर अल्लाह से बंध जाता है। दिल की दिशा बदल जाती है। नबियों के आने का उद्देश्य समाप्त हो जाता है और इस्लाम पर जाहिलियत की जीत होती है। हर जमाने के दीन के नवीनीकरण करने वालों, सुधारकों तथा उलमा–ए–हक़ (सच्चे इस्लामी पंडित) ने वस्तु स्थिति के विरूद्ध जिहाद (संघर्ष) किया। उलमा–ए–हक नबियों के वारिस और उत्तराधिकारी हैं, उनकी विरासत और उत्तराधिकार उसी वक़्त सही और मुकम्मल होगा जब उनकी जिन्दगी का मकसद और उनके

प्रयासों का केन्द्र वही होगा जो **नबियों** का था। वह जिन्दगी का मक़सद और वह प्रयासों का केन्द्र **क्या है? दो** शब्दों में "धर्म **स्थापना**" (इक़ामते दीन) या एक शब्द में "तौहीद"। **अर्थात इन्सानों को** इख़्तियार से और अमल से इस तरह से अल्लाह का "बन्दा" बनाना जैसा कि वह स्वाभाविक व मजबूर होकर उसके बन्दे हैं। अल्लाह की शरीयत को इन्सानों के जिस्मों और उनकी सम्बन्धित ज़मीन में लागू करने की कोशिश करना जैसा कि वह ज़मीन व आसमान पर क़ायम है।

अनुवाद– *और हमने आपसे पहले कोई ऐसा रसूल नहीं भेजा कि जिसके पास हमने वहइ (ईश्वाणी) न भेजी हो कि मेरे सिवा कोई मअबूद (पूज्य) नहीं, तो मेरी ही इबादत करो।*

(सूरः अल् अंबिया २५)

अनुवाद– *वही तो है जिसने अपने रसूल को मार्गदर्शन और दीने हक़ (सत्य धर्म) देकर भेजा, ताकि उसे और सारे दीनों पर ग़ालिब करे, चाहे मुश्रिकों को (कितना ही) नागवारा हो।*

(सूरः अस्सफ्फ ६)

इस दीने हक़ (सत्य धर्म) के लिए हर ज़माने में कुछ अवरोध व अड़चने होती हैं, जिनमें से अधिकतर को इन चार किस्मों में बांटा जा सकता है:–

शिर्क :अर्थात गैर अल्लाह को इलाह (पूज्य) बनाना। अल्लाह के सिवा किसी हस्ती को अप्रत्यक्ष रूप से नुकसान और नफा देने वाला बना लेना, उसको ब्रह्माण्ड की व्यवस्था में साझीदार मान लेना।

एहतियाज व इल्तेजा (आवश्यकता होना और शरण ढूंढना) और भय

व आशा इस अकीदे के बिल्कुल स्वभाविक व प्राकृतिक परिणाम है और दुआ व मदद चाहना और झुकना (जो इबादत की हकीकत है) इसके आवश्यक मज़ाहिर (प्रकट होने वाली चीजें) हैं।

शिर्क (बहुदेववाद) एक स्थाई धर्म तथा पूर्ण शासन है, उसका और धर्म का किसी एक शरीर या दिल व दिमाग़ पर एक साथ स्थापित होना असंभव है।

अनुवाद– *और कुछ लोग ऐसे भी हैं जो औरों को अल्लाह के बराबर (समवत पूज्य) बनाते हैं, जैसी मुहब्बत अल्लाह से रखनी चाहिए वैसी मुहब्बत उनसे रखते हैं।*

(सूरः अल् बकरह् १६५)

अनुवाद– *मुश्रिकों ने कहा अल्लाह की कसम! हम तो खुली हुई गुमराही में थे, जब हम तुम्हें (पूज्यों को) सारे संसार के रब के बराबर कर रहे थे।*

(सूरः अश्शुअरा ६७–६८)

इसलिए जब तक दिल से शिर्क की तमाम जड़ें और उसकी बारीक से बारीक नस भी उखाड़ न दी जाये, उस वक्त तक अल्लाह के दीन का पौधा लग नहीं सकता, क्योंकि यह पौधा किसी ऐसी जगह पर जड़ नहीं पकड़ता जिसकी मिट्टी में किसी और पेड़ की जड़ हो या बीज हो, इसकी शाखायें उसी वक्त आसमान से बातें करती हैं और यह पेड़ तभी फलता–फूलता है जब इसकी जड़ गहरी और मज़बूत हो।

अनुवाद– *क्या आपने नहीं देखा! कि अल्लाह ने कैसी मिसाल पवित्र बात (कलिम–ए–तय्यिबः) की दी? (उसकी मिसाल ऐसी है) जैसे एक*

अच्छा वृक्ष जिसकी जड़ मज़बूत और शाखाएं आसमान में फैली हुई हैं अपने रब के आदेश से वह अपना फल देता है।

(सूरः इब्राहीम २४--२५)

यह पेड़ किसी दूसरे पेड़ की छाया में बढ़ नहीं सकता। यह जहाँ रहेगा अकेला रहेगा, इसकी प्राकृतिक बढ़त के लिए असीम वातावरण चाहिए।

अनुवाद– *याद रखो अल्लाह ही के लिए **शुद्ध** आज्ञापालन है।*

(सूरः अज़्ज़ुमर ३)

अतः **जो लोग अल्लाह के दीन** की फितरत (प्रवृत्ति) और उसके मिजाज़ से वाकिफ होते हैं, वह इसको किसी जगह लागू करने के लिए जमीन को पूरे तौर पर साफ और हमवार करते हैं। वह शिर्क और **जाहिलियत** की जड़ें और रगें चुन–चुन कर निकालते हैं और उनका **एक–एक बीज चुन**–चुन कर फेंकते हैं और मिट्टी को बिल्कुल उलट–**पलट देते हैं**। चाहे उसको इस काम में कितनी ही देर लगे। और कैसा ही कष्ट उठाना पड़े और चाहे उनको इस कोशिश और उम्र भर के इस प्रयास का फल हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की तरह कुछ एक लोगों से अधिक न हो, और चाहे कुछ पैगम्बरों की तरह उनकी सारी जिन्दगी की पूँजी मात्र एक व्यक्ति हो। लेकिन वह इस नतीजे पर संतुष्ट और इस कामयाबी पर खुश होते हैं और नतीजा पाने में जल्दी नहीं करते।

कुफ्र:अर्थात अल्लाह के दीन और उसकी शरीयत (कानून) का इन्कार। इसमें वह लोग भी शामिल हैं जो अल्लाह व रसूल के आदेशों में से किसी आदेश को भी यह जान लेने के बाद कि यह अल्लाह और उसके रसूल का हुक्म है, नहीं मानते या जबान से तो इन्कार नहीं

करते मगर जान–बूझ कर इसकी अवहेलना करते हैं, ऐसे लोग चाहे दूसरे आदेशों का पालन करते हों और पाबन्द हो, इस दायरे से (अर्थात कुफ्र के दायरे से) ख़ारिज नहीं। अल्लाह तआला यहूदियों को सम्बोधित करके कहता है:–

अनुवाद– *तो क्या तुम किताब (ईशग्रन्थ) के एक भाग को तो मानते हो और दूसरे भाग को नहीं मानते। बस तुममें से जो ऐसा करे उसकी सज़ा क्या है सिवा दुनियावी ज़िन्दगी में रूसवाई के? और क़यामत के दिन यह सख़्त अजाब में डाले जाएंगे और अल्लाह उससे बेख़बर नहीं, जो कुछ तुम करते हो।* (सूरः अल बकरह ८५)

लेकिन जो व्यक्ति झूठे खुदाओं की ख़ुदावन्दी का साफ़–साफ़ इन्कार करने के लिए तैयार नहीं होते या दूसरे शब्दों में उन्होंने उस किब्लः की ओर तो मुँह कर लिया है। लेकिन दूसरे क़िब्लों (ध्यान केन्द्रों) की तरफ उनसे पीठ भी नहीं की जाती है। यह वास्तव में इस्लाम में दाख़िल नहीं हुए। अल्लाह पर ईमान के लिए कुफ्र बित्तागूत, (तागूत हर वह हस्ती है जिसकी ख़ुदा के मुकाबले में पूरी ताबेदारी की जाये) ज़रूरी है, और अल्लाह ने इसको ईमान से पहले बयान किया है।

अनुवाद– *तो जो सरकश (शैतान) को ठुकरा दे और अल्लाह पर ईमान लाये तो उसने मजबूत सहारा थाम लिया।*

(सूरः अल बकरह २५६)

इसलिए पवित्र कुर्आन ने ऐसे व्यक्तियों के ईमान का दावा स्वीकार नहीं किया जो तागूत (आसुर) के प्रतिनिधियों तथा उनके केन्द्रों की ओर ध्यान लगाते हैं। और उनको अपना पंच और मध्यस्थ बनाते हैं।

अनुवाद– क्या तुमने उन लोगों को नहीं देखा जो दावा तो करते हैं कि वे उस पर ईमान रखते हैं जो सत्य तुम पर उतारा गया और जो तुमसे पहले उतारा गया। और चाहते हैं कि अपना मामला तागूत (सरकश) के पास ले जाकर फैसला कराएं जबकि उन्हें हुक्म दिया गया है कि वे उसका इन्कार करें? लेकिन शैतान तो उन्हें भटका कर बहुत दूर डाल देना चाहता है।

(सूरः अं निसा ६०)

इस कुफ़्र की गन्ध उन लोगों से भी नहीं निकली जो मुसलमान की रेखा में आजाने के बाद "जाहिलियत" से मुँह न मोड़ सके और जाहिलियत के अकीदों व रसमों से बेखबर न हो सके। उनके दिलों से अभी तक उन चीजों की नफ़रत और घृणा नहीं गयी और उन कार्यो की तहकीर (घटिया समझना) नहीं निकली। जिनको जाहिलियत बुरा समझती है, उनसे नफ़रत और तहकीर करती है, चाहे वह अल्लाह के दीन में पसन्दीदः हों और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की महबूब सुन्नत हो।

इसी तरह उनके दिलों से अभी तक उन आचरण, रस्मों तथा आदतों के प्रति मोह और इज़्ज़त दूर नहीं हुई, जो जाहिलियत में नज़दीक प्रिय और आदरणीय हैं, चाहे वह अल्लाह की शरीअत में मकरूह बुरे ब तुच्छ हों। इसी तरह जिनके दिलों से अभी तक जाहिली समर्थन और पक्षपात (असबीयत) दूर नहीं हुई और उनका अमल अरब की जाहिलियत के उस लोकप्रिय सिद्धान्त पर है कि अपने भाई की हर हाल में मदद करो, चाहे ज़ालिम हो, चाहे मज़लूम। इससे ज़्यादा नाज़ुक बात यह है कि इस्लाम को स्वीकार कर लेने के बाद भी वह मुसलमान कहलाने के बावजूद भी अच्छे और बुरे का

पैमाना (कसौटी) वही है जो जाहिलियत में होता है, चीजों की कीमत वही हो जो जाहिलियत ने कायम कर दी है, जीवन के उन्हीं मूल्यों और उन्हीं स्तरों का सम्मान हो जो जाहिलियत (अज्ञानता) तस्लीम करती है। इस्लाम के सही और शुद्ध होने की दलील यह है कि कुफ्र और उसके पूरे वातावरण, उससे जुड़ी तमाम बातों, उसकी तमाम विशेषताओं से नफरत पैदा हो जाये। और उसकी ओर वापसी और इससे ग्रसित हो जाने की कल्पना से आदमी को तकलीफ हो। और ईमान की पुख्तगी (परिपक्वता) यह है कि वह कुफ्र के किसी छोटे से छोटे काम के मुकाबले में मौत को ज़्यादा पसन्द करता है। बुखारी शरीफ की हदीस है।

अनुवाद— *तीन चीजें जिस आदमी में होंगी उसको ईमान की मिठास महसूस होगी। एक यह कि अल्लाह और उसका रसूल सर्वाधिक प्रिय हो, दूसरे यह कि किसी दूसरे इन्सान से सिर्फ अल्लाह ही के लिए मुहब्बत हो, तीसरे यह कि कुफ्र में जाना उसके लिए उतना ही नागवार हो जितना आग में डाला जाना।* (बुखारी व मुस्लिम)

सहाबः (हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथी) का यही हाल था, उनको अपने पूर्व काल की जाहिलियत से बड़ी नफरत पैदा हो गयी थी। उनके नज़दीक जाहिलियत से बढ़कर कोई तौहीन (अपमान) न थी। वह जब अपने इस्लाम लाने से पहले के जमाने की चर्चा करते तो बड़ी शर्मिन्दगी और नफरत के साथ। उस ज़माने की तमाम बातों, कर्म व कुफ्र और अल्लाह की नाफरमानी से उनको न सिर्फ धार्मिक व बौद्धिक बल्कि स्वाभाविक रूप से घृणा थी। अल्लाह उनका यह गुण इस तरह बयान करता है।

अनुवाद— *लेकिन अल्लाह ने तुम्हारे दिल में ईमान को महबूब* **(प्रिय)**

बनाया और उसको तुम्हारे दिलों में सुन्दर बना दिया और कुफ़्र और फिस्क (उल्लंघन और अवज्ञा) और नाफरमानी को तुम्हारे लिए नफरत की चीज़ बना दिया।

(सूरः अल हुजुरात ७)

जाहिलियत की एक निशानी यह है कि जब अल्लाह व रसूल का हुक्म सुनाया जाये तो पुराने रस्म व रिवाज और बाप दादा के तौर तरीके का नाम लिया जाये और अल्लाह व रसूल के मुकाबले में बीते ज़माने और पुराने दस्तूर का प्रमाण पेश किया जाये।

अनुवाद– *और जब उनसे कहा जाता है! जो अल्लाह ने उतारा है उस पर चलो तो जवाब में कहते हैं नहीं हम तो उसी पर चलेंगे जिस पर हमने अपने बाप –दादा को पाया है भला अगर उनके बाप–दादा कुछ समझ न रखते रहे हों और न सच्चे मार्ग पर चलते रहे हों। (तब भी यह उन्हीं की पैरवी करेंगे)*

(सूरः अल बक़रह् १७०)

अनुवाद– *नहीं बल्कि वे कहते हैं– हमने अपने बाप–दादा को एक तरीके पर पाया है और हम उन्हीं के पग चिन्हों पर चल रहे हैं।*

(सूरः अज़्ज़ुखरूफ २२)

अल्लाह के हुक्म और वह्इ (ईशवाणी) के मुकाबले में अपने बाप–दादा के अमल और अपनी इच्छा व मर्ज़ी की पैरवी करना खास जाहिली दीन है।

अनुवाद– *उन्होंने कहा! ऐ शुएब! क्या तुम्हारी नमाज़ तुझे यही सिखाती है कि उन्हें हम छोड़ दें जिन्हें हमारे बाप–दादा पूजते आ रहे हैं या हमें अपने माल में मनमानी छोड़ दें।* (सूरः हूद ८७)

अतः ऐसे लोग जाहिलियत (अज्ञानता) से निकलकर इस्लाम में पूरे तौर पर दाख़िल नहीं हुए, जिन्होंने अल्लाह के मुकाबले में **हर** चीज नहीं छोड़ा और जिन्होंने अपने को पूर्णतः अल्लाह के हवाले **नहीं** किया। यह पूर्ण समर्पण और तस्लीम वह इस्लाम है जिसका **हज़रत** इब्राहीम अलैहिस्सलाम को हुक्म हुआ और उन्होंने इसको स्वीकारे **किया**।

अनुवाद– *जब इब्राहीम अलैहिस्सलाम से उनके रब ने कहा कि अपने रब के हवाले हो जाओ और उसकी पूरी ताबेदारी करो तो उन्होंने कहा कि मैंने अपने आपको सारे जहान के पालनहार के हवाले कर दिया।*

(सूरः अल बक़रह १३१)

और जिसका तमाम मुसलमानों को हुक्म है।

अनुवाद– *तुम्हारा पूज्य हाकिम एक ही अकेला है तो उसी के हवाले हो जाओ तथा मुकम्मल फरमांबरदार बन जाओ।*

(सूरः अल हज्ज ३४)

अगर यह नहीं है तो मानो अल्लाह से जंग है। इसलिए इस **पूर्ण** इस्लाम को एक जगह अल्लाह ने "सिल्म" कहा, है अर्थात **यह** अल्लाह से सुलह है।

अनुवाद– *ऐ ईमान वालो! इस्लाम और सुलह में पूरे–पूरे दाख़िल हो जाओ और शैतान के कदमों पर न चलो! वह तो तुम्हारा खुला हुआ शत्रु है।*

(सूरः अल बक़रह २०८)

याद रहे कि जाहिलियत का मतलब सिर्फ हज़रत **मुहम्मद** सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पूर्व की अरब की ज़िन्दगी ही नहीं है, **बल्कि** हर वह गैर इस्लामी ज़िन्दगी और व्यवस्था है, जिसका **स्रोत** 'वह्इ'

(ईशवाणी) व नबूवत और अल्लाह की किताब व नबियों की सुन्नत (आचरण) न हो, और जो इस्लामी जीवन के आदेशों व मसलों के अनुरूप न हो, चाहे वह अरब की जाहिलियत हो, या ईरान की मुजदकियत (एक तरह की व्यक्ति पूजा) या हिन्दुस्तान का ब्राह्मणवाद या मिस्र की फिरऔनियत या तुर्कों की तूरानियत या इस युग की पश्चिमी सभ्यता या मुसलमान कौम की शरीअत के विरूद्ध रसमें व आदतें, अखलाक व संस्कार और विचारधारा और भावनायें, चाहे वह पुरानी हों या आधुनिक, भूतकाल हो या वर्तमान काल।

कुफ्र एक नकारात्मक चीज़ ही नहीं है बल्कि एक सकारात्मक चीज़ भी है, वह सिर्फ अल्लाह के दीन के इन्कार का नाम नहीं है, बल्कि वह एक मज़हबी और नैतिक व्यवस्था और स्थायी दीन है, जिसमें अपने कर्तव्य भी हैं, और बुरी व अवैध बातें भी, इसलिए यह दोनों एक जगह एकत्र नहीं हो सकते और इन्सान एक समय में इन दोनों का वफादार नहीं हो सकता।

नबी कुफ्र को जड़ से समाप्त करते हैं। वह कुफ्र के साथ किसी रवादारी और समझौता के रवादार नहीं होते। कुफ्र को पहचान लेने में भी उनको बड़ी महारत होती है। और इस बारे में वह बड़ी दूर दृष्टि वाले और सूक्ष्मदर्शी होते हैं। अल्लाह तआला उनको इसके बारे में पूरी हिकमत (युक्ति) प्रदान करता है। उनकी ईश्वर की दी हुई सूझ–बूझ पर भरोसा किये बिना चारा नहीं। दीन की रक्षा इसके बिना सम्भव नहीं कि कुफ्र और इस्लाम की जो सीमाएं उन्होंने निर्धारित की उनकी हिफाजत की जाय। इसमें थोड़ी भी असावधानी दीन को इतना बिगाड़ कर रख देती है कि जितना यहूदी, ईसाई और हिन्दुस्तान के मज़हब बिगड़ चुके हैं।

नबियों के उत्तराधिकारी भी इस बारे में उन्हीं की सूझ-बूझ और साहस रखते है। वह कुफ्र या कुफ्र की मुहब्बत या उसकी मदद, जिस रूप में सामने आये, वह उसको तुरन्त भाँप लेते हैं। उनको इसमें कोई शंका नहीं होती और उसका विरोध करने में उनके लिए कोई मसलहत रूकावट नहीं बनती।

उनके ज़माने के संकीर्ण दृष्टि वाले या हर बात में सुलह के पक्षधर जो दैर व हरम, काबा व बुतखाना में फर्क करना ही कुफ्र समझते हैं, उनका मजाक उड़ाते हैं और निन्दा के साथ उनको ज्ञानी, और खुदाई फौजदार की उपाधि देते हैं। लेकिन वह अपना कार्य पूरे धैर्य के साथ करते रहते हैं। और निःसंदेह पैगम्बरों के दीन की हिफाज़त हर ज़माने में इन्हीं लोगों ने की है।

और आज इस्लाम यहूदियत, ईसाइयत और हिन्दूमत से अलग रूप में जो दिखता है वह इन्हीं के साहस और धैर्य व विनय का नतीजा है।

हिन्दुस्तान में तौहीद की दावत

हिन्दुस्तान में जहाँ विभिन्न ऐतिहासिक कारणों से इस्लाम की बुनियाद हमेशा से कमज़ोर है, और जो दुनिया के कुछ बड़े मुशरिकाना (बहुदेववादी) धर्मों व सम्प्रदायों का केन्द्र और वतन है, इस्लाम का चश्म-ए-साफी (साफ स्वच्छ स्रोत) ज्यादा गन्दा होने लगा था। और आशंका थी कि यह चश्म-ए-हैवान इस अन्धियारी में इस तरह गुम हो जाये कि किसी महापंडित को भी इसका निशान न मिले।

हज़रत मुजद्दिदे अलिफ़े सानी (रहमतुल्लाहि अलैहि)

मुजद्दिदे अलिफ़े सानी रहमतुल्लाहि अलैहि ने जब अपनी सुधार

यात्रा शुरू की तो नबियों के नबूवत के कार्य के ठीक क्रम के अनुसार पहला कदम यहीं से उठाया। जहाँगीर के सामने सज्दा करने से इन्कार आपके सुधार के इतिहास का उज्जवल अध्याय है। अपने पत्रों में सुस्पष्ट तथा जचे तुले शब्दों में तौहीद की व्याख्या की। अल्लाह की वहदानियत (एक मात्रता) उसके तनहा इबादत के लाएक़ (पूज्य) होने की दलीलें बयान कीं जो आपके ज्ञान के विश्वस्तता का नमूना है। शिर्क के रसमों व मज़ाहिर (रूपों) का खण्डन, जाहिली रसमों, मुश्रिकों वाले कार्यों और काफ़िरों की नक़ल से अपने अनुयाइयों को सख़्ती से मना किया, क्योंकि सुधार का काम इसके बिना शुरू ही नहीं हो सकता, पूरा होना तो दूर रहा।

ख़ास कर तरीक़त व तसव्वुफ (आत्मशुद्धि, अध्यात्म) का खुलासा व उद्देश्य इसके अलावा कुछ नहीं कि अल्लाह से ऐसा लगाव पैदा हो जिसमें कभी कोई न हो, ऐसी अल्लाह की याद जिसमें कभी भूल न हो और ऐसी एकाग्रता जिसमें कोई असमंजस न हो। यह उस समय तक सम्भव नहीं जब तक ब्रह्माण्ड की तमाम चीजों के बारे में लाभ व हानि, शक्ति व अधिकार का विचार समाप्त न हो जाये और मन–मस्तिष्क उनकी मुहब्बत व महानता और उनसे भय व लालसा रखने से पूर्ण रूप से स्वतंत्र न हो जाये, और वह किसी अर्थ में भी उद्देश्य व लक्ष्य और न उनसे प्रेम हो न भय न अति आदरणीय, न प्रिय और संक्षेप में इलाह व माबूद (पूज्य) न रहें। यही इख़लास (निष्ठा) का मक़ाम है जिसकी तरफ नबी और उनके उत्तराधिकारी मार्गदर्शन करते हैं। मुजद्दिद साहब ने इसी की ओर बुलाया तथा विभिन्न स्थानों पर इसको स्पष्ट किया है –

मान्यवर! सलूक (ईश्वर की खोज) की मंजिलों को तय करने

और भावना के स्थलों को पार कर लेने के बाद मालूम हुआ कि इस सैर व सलूक का मकसद मकामे (लक्ष्य) इखलास (निष्ठा) को हासिल करना है, जो जुड़ा है सांसारिक पूज्यों की समाप्ति (फ़ना) के साथ।

एक दूसरे पत्र में लिखते हैं:–

अन्तःकरण की बीमारियों की जड़ और मन के रोगों की असल दिल के अल्लाह के अलावा के साथ व्यस्तता है। जब तक इस गिरफ़्त (लिप्तता) से पूरी आज़ादी हाथ न आये शुद्धता कठिन है। क्योंकि अल्लाह की सेवा में किसी की शिर्कत (सहभागिता) की गुँजाइंश नहीं, कुर्आन की आयत है "खालिस इबादत (शुद्ध उपासना) व इताअत (आज्ञापालन) अल्लाह ही का हक़ है।" यह तो हो ही नहीं सकता कि शरीक को आगे कर दें। बड़ी बेहयाई है कि गैर अल्लाह की मुहब्बत को इस हद तक ग़ालिब बना लिया जाये कि अल्लाह तआला की मुहब्बत इस में समाप्त या दब जाये।

तौहीद के कुछ बुद्धिमता के उदाहरण-

हज़रत शेख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी रहमतुल्लाहि अलैहि (मृत्यु ५६१ हिज्री) ने जिनकी बुजुर्गी पर मुसलमानों के सारे मत सहमत हैं, एक बड़ी बुद्धिमता की मिसाल से तौहीद की व्याख्या की है और जो लोग मुसीबत को दूर करने या किसी तरह का नफा हासिल करने के लिए गैर अल्लाह का सहारा लेते हैं, उनकी मूर्खता का नक्शा खींच दिया है। फरमाते हैं:– "तमाम मखलूक (सृष्टि) को एक ऐसा आदमी समझो जिसके हाथ, एक अत्यन्त विशाल व महान साम्राज्य के बादशाह ने, जिसका शासन महान है, उसका वर्चस्व और ताक़त कल्पना से परे है बाँध दिये हों, फिर उस बादशाह ने उस आदमी के गले में फंदा

ड़ाल दिया है, और उसके पैर भी बाँध दिये, इसके बाद चीड़ के एक ऐसे पेड़ से लटकाया है जो ऐसी नदी के किनारे है जिसकी गहराई बेपनाह और जिसका बहाव तेज़ है, इसके बाद बादशाह खुद एक ऐसी कुर्सी पर बैठ गया जो बड़ी शानदार और बुलन्द है, इतनी कि उस तक पहुँचने का इरादा करना और पहुँचना कठिन है, उस बादशाह ने अपने पहलू में तीरों, भालों, बर्छो और अनेक प्रकार के हथियार तथा औजारों का इतना बड़ा जखीरा रख लिया है कि उसकी मात्रा का अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। अब जो व्यक्ति इस दृश्य को देखे क्या उसके लिए मुनासिब है कि बादशाह की तरफ देखने के बजाय, इस सूली पर लटके हुए व्यक्ति से डरे और उससे उम्मीद लगाये, जो व्यक्ति ऐसा करेगा क्या वह हर समझदार के नज़दीक बेअकल, मजनूँ और इन्सान के बजाय जानवर कहलाने का पात्र नहीं''?

हज़रत शैख शर्फुद्दीन यह्या मुनेरी रहमतुल्लाहि अलैहि अल्लाह की अज़मत (महानता) और बड़ाई, अपनी मख़लूक (सृष्टि) पर पूर्ण अधिकार और स्वतंत्र हस्तक्षेप का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि वह जो चाहता है करता है, उसको किसी की परवाह नहीं होती, अपनी मर्जी पर चलता है, किसी की मजाल नहीं कि कुछ पूछ सके, ज़बाने कटी हुई, मुँह बन्द। एक पत्र में अपने एक शिष्य को लिखते हैं, और इस हक़ीकत को इस तरह बयान करते हैं कि दिल काँप उठता और बदन के रोंगटे खड़े हो जाते है। फरमाते हैः—

''वह जो चाहता है करता है, उसे किसी की बर्बादी व मोक्ष की कोई परवाह नहीं होती। **देखो! एक इन्सान किस** तरह प्यास से तड़प कर दम तोड़ता **है और कहता है मेरे नीचे** नहरें जारी हैं और मैं प्यास

से मर रहा हूँ, पानी की एक बूँद नसीब नहीं होती, फरिशता (देवदूत) गैब से उसको आवाज़ देता है और कहता है, मैं हजारों सिद्दीकीन (सत्यवादियों) को अन्धेरे व डरावने जंगल और शुष्क व चटियल रेगिस्तान में लाता हूँ और सबको कत्ल कर देता हूँ ताकि उनकी आँखों और गालों को कौओं और गिद्धों का भोजन बनाऊं, जब कोई बोलना चाहता है तो उसकी जबान पर मुहर लगा देता हूँ और कहता हूँ वह जो चाहता है करे, कोई कुछ पूछ नहीं सकता, यह पक्षी भी मेरे हैं और सिद्दीकीन भी मेरे हैं, बीच में बोलने वाला (फुजूली) कौन है? जो हमारे अमल की आलोचना करता है।

हज़रत मीर सैयद अली हमदानी (रहमतुल्लाहि अलैहि)

हज़रत मीर सैयद अली हमदानी को खतलान (एक स्थान) से कौन सी चीज़ खींचकर कश्मीर लाई? क्या इस सुन्दर घाटी की सुन्दरता खींचकर लाई? क्या हिमालय पर्वत की ऊँची–ऊँची चोटियों के सिलसिले और घाटियों की हरियाली खींच कर लाई? वह जिस क्षेत्र से आये थे वह भी सुन्दर इलाका था। फलों और फूलों से भरा हुआ था। फिर क्या चीज़ है जो उनको यहाँ लाई।

मैं आपको बताऊँ कि वह कौन सी चीज़ थी जो उनको खींच कर लाई। वह एक गैरत थी, जिसको अपने महबूब से ज़्यादा मुहब्बत होती है, उसकी ज़ात व सिफात (गुण) की ज़्यादा मारफत (पहचान) होती है और उसके सद्‌गुणों व कमालात पर ज़्यादा यकीन होता है, उसमें उतनी ही अपने महबूब के प्रति गैरत होती है। एक नावाकिफ आदमी लाल व जवाहर को ईंट व पत्थर की तरह डाल देता है। कीमती हीरे को अज्ञानता से तोड़ देता है। लेकिन जौहरी को देखिये कि वह किस तरह एक–एक फूल पर कुरबान होता है और उसको

पसन्द नहीं करता कि उस पर कोई शिकन आये। बुलबुल से पूछिये फूल के सम्बन्ध में, परवानों से पूछिये शमा के बारे में, आशिक से पूछिये माशूक के बारे में और खुदा के पैगम्बरों और उसके आरिफों (पहचानने वालों) से पूछिये तौहीद के बारे में।

तौहीद का स्रोत

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तौहीद के सबसे बड़े अमीन और उसके सबसे बड़े प्रचारक, उसकी तरफ बुलाने वाले और उसकी हक़ीक़त पहचानने वाले थे। सदियों से उन्हीं की लाई हुई दौलत मौजूद है जो अब तक बट रही है और क़यामत तक बटती रहेगी। हमारे और आपके दामन में भी खुदा के फजल (कृपा) से वह दौलत मौजूद है। हमारे नबी सबसे ज़्यादा अल्लाह को जानने वाले, सबसे ज़्यादा अल्लाह को चाहने वाले, सबसे ज़्यादा अल्लाह पर कुर्बान होने वाले थे। इसलिए आपकी ग़ैरत (लज्जा) का भी यह हाल था कि एक व्यक्ति ने सिर्फ यह कह दिया कि "जो अल्लाह और उसके रसूल की इताअत (आज्ञापालन) करेगा वह हिदायत पायेगा, और जो इन दोनों की नाफरमानी करेगा वह गुमराह होगा।"

आप इसको सहन नहीं कर सके, और आपसे सुना न गया। फरमाया, तुम्हें बात करने का सलीका नहीं, अलग–अलग यूँ कहो कि जो अल्लाह और उसके रसूल की नाफरमानी करेगा वह गुमराह होगा। ऐसे ही एक व्यक्ति ने कहा, अगर अल्लाह और आप चाहें तो यह काम हो जायेगा। आपने फरमाया, तुमने मुझे खुदा का हमसर (समकक्ष) बना दिया? नहीं, जो तनहा खुदा चाहे।

यह है ग़ैरत का आलम। एक सच्चे आशिक को जितनी मुहब्बत

होती है, उतनी ग़ैरत होती है। ग़ैरत अधीन है मुहब्बत के, ग़ैरत मातहत है ज्ञान के, ग़ैरत अधीन है निष्ठा के।

सैयद अली हमदानी की ग़ैरत

हज़रत सैयद मीर अली हमदानी आरिफ बिल्लाह (अल्लाह को पहचानने वाले) थे, वली–ए–कामिल थे, आशिके ख़ुदा (ईशप्रेमी) थे, आशिके रसूल थे। ख़ुदा शनास, दीन के मिजाज आशना (धार्मिक भाव से अवगत) और नब्बाज (सही समझ रखने वाले) थे। इसलिए आपको दीन के बारे में गैरत भी ऐसी थी कि लाखों, करोड़ों आदमियों में ऐसी नहीं होती। उन्होंने सुना कि कश्मीर एक लम्बी चौड़ी घाटी है, वहाँ के लोग ख़ुदा से नाआशना (अनभिज्ञ) हैं, वहाँ ख़ुदा के सिवा, सृष्टा के अलावा, एक ख़ुदा के सिवा बहुत सी चीज़ें पूजी जा रही हैं। बुतों की परस्तिश होती है। कुछ चीजें जमीन के अन्दर हैं, कुछ जमीन के ऊपर हैं, कुछ खड़ी है, कुछ लेटी हैं, लोगों ने जिसमें जरा सी ताक़त देखी, नफा व नुकसान पहुँचाने की योग्यता देखी, कोई विशिष्ट बात देखी, थोड़ी सुन्दरता देखी, उसी के सामने झुक गये। मेरा विचार है कि अगर वह यहाँ न आते तो शायद ख़ुदा और उसका रसूल उनका दामन न पकड़ता, इसलिये कि वह जहाँ रहते थे वहाँ से लेकर इस कश्मीर घाटी तक बड़े–बड़े दीन के सेन्टर्स, रूहानी केन्द्र थे। हिमालय के दामन में पूरा हिन्दुस्तान पड़ा हुआ था जहाँ हजारों आलिम, सैकड़ों मदरसे और ख़ानकाहें थीं। लेकिन साहसी यह नहीं देखते कि अकेले हमारा यह कर्तव्य बनता है कि नहीं? वह इसे अपनी ड्यूटी समझ लेते हैं। हजार कोई उनको रोके, उनके रास्ते पर हजार रूकावटें खड़ी कर दे, पहाड़ उनके रास्ते में आ जाएं, नदी–नाले पड़ें, वह किसी की भी परवाह नहीं करते। मानो एक आसमानी आवाज़ थी

जो उन्होंने सुनी कि सैयद! कश्मीर जाओ और वहाँ तौहीद फैलाओ।

सैयद अली हमदानी ने साफ महसूस किया कि मैं अल्लाह के सामने उत्तरदायी हूँ। मैदाने हश्र सामने है और अर्शे खुदावन्दी (अल्लाह का सिंहासन) मौजूद है, उसके साये में नबी व अवलिया खड़े हैं और वहाँ से सवाल होता है कि सैयद अली! तुमको मालूम था कि मेरी पैदा की हुई जमीन के एक क्षेत्र में गैर अल्लाह की पूजा व परस्तिश हो रही है, गैर अल्लाह के सामने हाथ फैलाये जा रहे हैं, तुमने इसको कैसे सहन किया? मीर सैयद अली हमदानी के सामने तो यह दृश्य था। अगर सारी दुनिया के बड़े–बड़े विद्वान एकत्र होकर समझाते कि हज़रत! आपसे सवाल नहीं होगा। लेकिन वह कहते कि नहीं। मुझ ही से यह सवाल होगा। मेरी गैरत और लज्जा यह सहन नहीं कर सकती कि अल्लाह की विशाल धरती के एक छोटे से हिस्से में भी गैर अल्लाह की परस्तिश हो गैर अल्लाह से भय और आशा का मामला हो, इन्सानों को (चाहे ज़िन्दा हों, चाहे मुर्दा) किस्मत को बनाने और बिगाड़ने वाला समझा जाता हो, औलाद और रोजी देने वाला समझा जाता हो, उनको हर जगह हाज़िर व नाज़िर (सर्वव्यापी) जानते हों। अगर मुझे मालूम हो गया कि उत्तरी ध्रुव या दक्षिणी ध्रुव में या हिमालय की उच्च हरी चोटी पर एक जीव भी ऐसा है, जो ग़ैर अल्लाह की परस्तिश कर रहा है, ग़ैर अल्लाह को नफ़ा नुक़सान पहुँचाने वाला समझता है, ग़ैर अल्लाह को सृष्टि पर शासन करने वाला समझता है तो मेरा फर्ज़ है कि मैं वहाँ पहुँचूं और अल्लाह का पैग़ाम पहुँचाऊँ।

याद रखो! अल्लाह फरमाता है:–

अनुवाद– *"उसी का काम है, पैदा करना, और उसी का काम है हुक्म चलाना"*

(सूरः अल अअ़राफ़ ५४)

ऐसा नहीं कि पैदा तो उसने किया मगर हुक्म किसी और का चल रहा है। उसने अपनी सल्तनत किसी के हवाले कर रखी है, कि हमने पैदा कर दिया, तुम हुकूमत करो ख़ालिक़ (रचयिता) भी वही है; हाकिम और प्रशासक भी वही है, ऐसा नहीं कि जैसे ताजमहल को शाहजहाँ ने बनवाया, तुर्किस्तान आदि से कारीगर बुलाये, कारीगरों ने अपनी कारीगरी दिखाई, वह आये और चले गये, अब ताजमहल पर जिसका दिल चाहे राज करे, हुकूमत करे, तख़्त बिछाए, तोड़े बनाए।

यह दुनिया ताजमहल नहीं है, यह दुनिया कुतुब मीनार नहीं है। यह दुनिया कोई पुरातत्व विभाग का अजायबघर नहीं है। यह ख़ुदा की पैदा की हुई दुनिया है,, सारी व्यवस्था उसकी मुट्ठी में है, यह छोटा सा कारख़ाना भी यहाँ का उसने दूसरे के हवाले नहीं किया है। उसकी बादशाही आसमान व जमीन सब पर हावी है। उसका सिंहासन पूरी सृष्टि पर हावी है। यह पृथ्वी का ग्रह क्या है, सारे ग्रहों, सारी आकाशगंगा, सारा सौर मण्डल, यह सब उसी के क़ब्ज़े में हैं।

इस गैरत का एक नमूना यह है कि जब हज़रत याकूब अलैहिस्सलाम का अन्तिम समय करीब आया तो आपने ख़ानदान के सब लोगों, बेटों, पोतों, नवासों को एकत्र किया और कहा प्रियजनो! मेरी पीठ कब्र से नहीं लगेगी, जब तक मुझे तुम यह संतुष्टि न दिलादोगे कि मेरे दुनिया से चले जाने के बाद किसकी इबादत और परिस्तिश करोगे? उन लोगों ने सीना ठोक कर कहा कि आप आशंका न करें, हम आप ही के माबूदे बरहक़ (सच्चे उपास्य) और आपके बाप–दादा इब्राहीम व इस्माईल व इस्हाक़ अलैहिमुस्सलाम के माबूद वहदहू लाशरीक की इबादत करेंगे।

अनुवाद– *तो उन्होंने कहा! हम आपके मअ़बूद (उपास्य) और आपके*

पूर्वज (बाप–दादा) यानी इब्राहीम, इस्माइल और इस्हाक़ के मअ़बूद की इबादत करेंगे– जो अकेला मअ़बूद (उपास्य) है और हम तो उसी के फ़रमाँबरदार हैं.

(सूरः अल बक़रह १३३)

अब्बा जी! दादा जी! नाना जी! आप क्यों हमसे यह सवाल कर रहे है? आपको किस बात का खटका है? आप संतोष रखिये, आपने बचपन से जिस तरह हमें दीक्षा दी है और तौहीद का पावन बीज दिल की नर्म ज़मीन में बोया है, उससे हम हट नहीं सकते। हम आपके मअ़बूदे बरहक़, एक अल्लाह ही की परस्तिश करेंगे जिसकी इब्राहीम व इस्माईल व इस्हाक़ परस्तिश करते थे। उस वक्त उनको इतमीनान हुआ और दुनिया से खुश खुश विदा हुए। यह औलिया (अल्लाह के मित्र) महान इस्लाम प्रचारक, बुजुर्ग हज़रात उन्हीं पैग़म्बरों के वारिस और उत्तराधिकारी हैं। याकूब अलैहिस्सलाम को खटका इसी बात का था कि मेरी औलाद शिर्क के जंजाल में उसी तरह न फंस जाए, जैसे हज़ारों ख़ानदान और सैकड़ों क़ौमें (अपने संस्थापकों और धर्म प्रचारकों के बाद) फंस गयीं। यह पैग़ाम है खुदा का जो हर पैग़म्बर लेकर आया। ख़ुदा के वलियों ने दुनिया को सुनाया और सुधारकों ने हर युग के लोगों तक पहुँचाया। फ़तेह (कामयाबी) की शर्त यही है, इज़्ज़त व ताक़त की शर्त यही है, उसी के सामने हाथ फैलाएं, उसी से दिल लगाएं। अल्लाह तआला फ़रमाता है:–

अनुवाद– *जिन लोगों ने बछड़े को अपना मअ़बूद (उपास्य) बनाया, वे अपने रब की ओर से ग़ज़ब (कोप) और दुनियावी ज़िन्दगी में ज़िल्लत में फंस कर रहेंगे। और झूठ गढ़ने वालों को हम ऐसा ही बदला दिया करते हैं।*

(सूरः अल अअ़राफ़ १५२)

मुमकिन है, लोग यह कहते हैं कि हमने गोसाला परस्ती कब की? इससे हज़ार बार तौबा, ऐसी मूर्खता हम कब कर सकते थे? तो अल्लाह ने अपनी इस आख़िरी किताब में इसका जवाब दिया, और यह कहकर कि हम इसी तरह बुहतान (मिथ्यारोप) बाँधने वालों को सज़ा देते हैं। तमाम मुशरिकाना अक़ायद व आमाल (विश्वास और कर्म) को शामिल फ़रमा लिया कि मुशरिक की बुनियाद हमेशा मनगढ़न्त किस्से कहानियों और निराधार बातों पर होती है और वह दोनों जुड़वा बच्चे की तरह होते हैं इसी लिए अल्लाह तआ़ला शिर्क का ज़िक्र करते हुए फरमाता है:–

अनुवाद– *तो मूर्तियों की गन्दगी से बचो, और झूठी बात से बचो।*

(सूरः अल हज ३०)

शिर्क को अल्लाह ने साफ़–साफ़ 'महान बुहतान' की संज्ञा दी है:–

अनुवाद– *और जिसने अल्लाह का साझीदार बनाया तो उसने एक बहुत बड़ा झूठ गढ़ लिया।* (सूरः अं–निसा ४८)

तौहीद (एकेश्वरवाद) का अक़ीदा मुसलमानों की अन्तर्राष्ट्रीय पहचान

तौहीद मुसलमानों की संस्कृति की अन्तर्राष्ट्रीय पहचान और अलामत है जो अक़ायद (विश्वासों) से लेकर आमाल (कर्मों) तक और इबादत से लेकर तक़रीबात (कार्यक्रमों) तक हर जगह दिखेगा। उनकी मस्जिदों के मीनार पाँच बार एलान करते हैं कि अल्लाह के अलावा कोई इबादत और बन्दगी का पात्र नहीं। उनके मकान व ड्राइंगरूम को भी इस्लामी उसूल के अनुसार बुतपरस्ती और शिर्क की

पहचानों से सुरक्षित होना चाहिए। तस्वीर, स्टैच्यू, मूर्तियाँ उनके लिए अवैध हैं। यहाँ तक कि बच्चों के खिलौनों में भी इसका लेहाज़ ज़रूरी है। धार्मिक समारोह हों या देश के महोत्सव राजनीतिक नेताओं का जन्म दिन हो या धार्मिक पेशवाओं का जन्म दिन या ध्वजारोहण समारोह, तस्वीरों और प्रति मूर्तियों के सामने झुकना और उनके सामने हाथ जोड़ कर खड़े होना या उनको हार फूल पहनाना मुसलमान के लिए मना और उसकी एकेश्वरवादी तहज़ीब के ख़िलाफ़ है। जहाँ कहीं मुसलमान अपनी इस्लामी तहजीब पर अमल करेंगे वह इन कृत्यों से अलग होंगे। नामों में, आयोजनों में, कसम में, बुजुर्गों के आदर एहतराम व नियाज मन्दी में, हिजाज़ी तौहीद की सीमाओं से आगे निकलना और किसी क़ौम का अनुसरण करना, इस्लाम से फिर जाने के प्रयाय है।

तौहीद ताक़त का स्रोत

जिसका दिल तौहीद से अवगत होगा वह अल्लाह तआला ही की ज़ात पर भरोसा करेगा। मुसीबत में उसी को पुकारेगा और खुशहाली में उसी को शुक्र भेजेगा और हाजत व आजिज़ी (विवशता), बन्दगी का तअल्लुक अल्लाह के अलावा और किसी से न रखेगा। इसमें अगर कमी होती है तो अल्लाह की नुसरत (मदद) में कमी होती है। कुर्आन मजीद में साफ़–साफ़ इशारे हैं कि जिस उम्मत की तौहीद में फ़र्क़ आया उसकी ताक़त में अन्तर आ गया। ताक़त का सबसे बड़ा स्रोत तौहीद का अक़ीदा है।

अल्लाह तआला कहता है:–

अनुवाद– *हम बहुत जल्द काफ़िरों (इन्कारियों) के दिलों में रोअब*

बिठा देंगे, इसलिए कि उन्होंने अल्लाह का शरीक ऐसी चीज़ को ठहराया जिसके लिए उसने कोई दलील (प्रमाण) नहीं उतारी और उनका ठिकाना जहन्नम (नर्क) है, और वह कैसी बुरी जगह है जालिमों (अत्याचारियों) के लिए। (सूरः आले इम्रान १५१)

अनुवाद– *बेशक जिन्होंने बछड़े को उपास्य बनाया उन्हें उनके पालनहार की ओर से गुस्सा और संसारिक जीवन में ज़िल्लत पहुंचेगी और हम मिथ्यारोप करने वालों का यही दण्ड देते हैं।*

(सूरः अल् अअ्राफ़ १५२)

शिर्क कमजोरी का कारण है, हमेशा रहा है और हमेशा रहेगा, अल्लाह ने चीज़ों में ख़ासियतें (गुण) पैदा की हैं। ज़हर में एक ख़ासियत है, तिरयाक़ (विषहर) में एक ख़ासियत है, पानी में एक ख़ासियत है, आग में एक ख़ासियत है, इसी तरह शिर्क में कमज़ोरी की एक ख़ासियत है, और तौहीद में ताक़त और निर्भयता और रौब में न आने की ख़ासियत है। इसीलिये सबसे बड़ी ज़रूरत इसकी है कि अक़ायद को सही किया जाये, ख़ुदा के साथ इब्राहीमी मुहम्मदी, क़ुर्आनी तालीम के अनुसार तौहीद का रिश्ता मज़बूत हो। इस रिश्ते को फिर मज़बूती की ज़रूरत है। इसलिए कि शैतान हमेशा ताक में रहता है। वह हमेशा छापा मारता रहता है और चोर वहीं जाता हैं जहाँ दौलत होती है। जिसके पास तौहीद और ईमान की दौलत है उसके लिए ख़तरा है, उनके लिए ख़तरा भी नहीं बनता जिनके पास यह नेमत है ही नहीं। इन्सान पर अक़ीद–ए–तौहीद का जो अक़्ली असर पड़ता है उसकी बदौलत वह सारे आलम को एक केन्द्र और एक व्यवस्था के अधीन समझने लगता है, और उसके बिखरे हुये अंशों में एक खुला हुआ सम्पर्क और वहदत नज़र आने लगती है। और इस

तरह इन्सान ज़िन्दगी की पूरी व्याख्या कर सकता है और उसके चिन्तन व कर्म की इमारत हिकमत व सूझ–बूझ, अच्छाई व खौफ़े खुदा (तक़वा) पर सहयोग, इन्सानियत की भलाई, समाज के संगठन, सभ्यता के मार्गदर्शन, दीन व दुनिया के जोड़ और सहयोगी व संघर्षरत तब्क़ों की एकता व भाईचारा की बुनियादों पर क़ायम हो सकती है।

शुद्ध तौहीद का अकीदा

इस कुदरत के कारख़ाने का एक बनाने वाला है जो हमेशा से है और हमेशा रहेगा। वह तमाम खूबियों, तारीफ़ों की बातों और कमालात (सम्पूर्णताओं) का हामिल, सर्वगुण सम्पन्न और हर तरह के ऐब (अवगुण) तथा कमज़ोरियों से पाक है। वह सर्वव्याप्त है और सर्वज्ञान सम्पन्न है। यह पूरी सृष्टि उसी के इरादे से है, सुनने वाला है, देखने वाला है, न कोई उसकी तरह है, न उसका कोई मुकाबला और बराबरी वाला है, वह बेमिसाल है, वह किसी मदद का मोहताज नहीं, सृष्टि के चलाने और उसकी व्यवस्था करने में उसका कोई शरीक, साथी और मददगार नहीं, इबादत का सिर्फ वही पात्र है। वही है जो मरीज़ को शिफ़ा देता है मखलूक को रोज़ी देता, और उनकी तकलीफ़ों को दूर करता है। खुदा के अलावा दूसरों को माबूद (पूज्य) बनाना, उनके सामने गिड़गिड़ाना, उनको सज्दा करना, उनसे दुआ और ऐसी चीज़ों में मदद माँगना जो इन्सानी ताक़त से बाहर और सिर्फ खुदा की कुदरत से तअल्लुक़ रखती है। (जैसे औलाद देना, किस्मत अच्छी बुरी करना, हर जगह मदद के लिए पहुँच जाना, हर दूरी की बात सुन लेना, दिल की बातों और छुपी हुई चीजों को जान लेना) इस्लाम की शब्दावली में शिर्क है, और वह सबसे बड़ा गुनाह है

जो बगैर तौबा के माफ नहीं होता।

कुर्आन मजीद में कहा गया है "उसकी शान यह है कि जब वह किसी चीज का इरादा करता है तो उससे कह देता है कि "हो जा" तो वह हो जाती है।"

अल्लाह न किसी के शरीर में उतरता है, न रूप धारता है, न उसका कोई अवतार होता है, वह किसी जगह या दिशा में सीमित नहीं है, जो वह चाहता है वही होता है, जो नहीं चाहता नहीं होता, वह ग़नी (धनी) व बेनियाज़ (जिसको किसी वस्तु की आवश्यकता न हो) है, वह किसी का मोहताज नहीं, उस पर किसी का हुक्म नहीं चलता, उससे पूछा नहीं जा सकता कि वह क्या कर रहा है, हिक्मत उसी की सिफ़त है, उसका हर काम जतनपूर्ण है और अच्छाई लिए हुए है, उसके अलावा कोई (वास्तविक) हाकिम नहीं। भाग्य अच्छा हो या बुरा अल्लाह की तरफ से है, वह पेश आने वाली चीजों को पेश आने से पहले जानता और उनको वजूद (अस्तित्व) प्रदान करता है।

अध्याय दो

रिसालत (दूतता)

मानव-प्रवृत्ति के प्रश्न

मनुष्य की प्रवृत्ति के कुछ प्रश्न हैं जो रह–रह कर उसकी गहराइयों से उठते हैं। इन प्रश्नों को न हीलों बहानों से टाला जा सकता है न उनके उत्तर की अनदेखी की जा सकती है। इस संसार को कौन चला रहा है? उसके क्या–क्या गुण हैं? उसका हमसे और हमारा उससे क्या सम्बन्ध है? उसको क्या पसन्द है और क्या नापसन्द? और यह कि इस जीवन का अन्त और इस लोक की अन्तिम सीमा क्या है? यह वह प्रश्न हैं जो बिल्कुल स्वाभाविक हैं और मनुष्य की शुद्ध प्रवृत्ति को पूरा हक़ है कि वह इन्सान से पूछे कि वह जिस दुनिया में बसता है उसको किसने बनाया और कौन उसको चला रहा है? फिर जब तक उसको चलाने वाले की सिफ़ात मालूम न हों उसको उससे कोई हार्दिक लगाव और मानसिक सम्बन्ध नहीं पैदा हो सकता। दुनिया का भी यही हाल है कि जब तक किसी व्यक्ति का जीवन चरित्र, आचरण और गुणों की हमें जानकारी नहीं होती, हमें मात्र उसके नाम से सम्बन्ध पैदा नही होता। फिर यदि हम ब्रह्माण्ड के सृजक के बारे में इसके अलावा कि वह मौजूद है, कुछ न जानते हों, उसकी रुबूबियत (पालनहार होना) व रहमत (कृपा), प्रेम व लगाव और उसके शौर्य के अन्य गुण, उसका हमसे निकटतम सम्बन्ध और हमारी उससे अति आवश्यकता और उसके सहारे हमारे ठहराव व अस्तित्व का हाल मालूम न हो तो उससे हमें वह सम्बन्ध पैदा नहीं हो सकता जो ऐसी ज़ात से पैदा होना चाहिए।

इसी प्रकार वह अपने इस सवाल में बिल्कुल हक़ पर है कि इस धरती पर बसने वालों से दुनिया के बादशाह की क्या अपेक्षाएं हैं? ताकि उसकी सल्तनत का निज़ाम व क़ानून मालूम करें।

इसी प्रकार यह भी स्वाभाविक बात है कि वह इस ज़िन्दगी के बारे में जानना चाहे कि इसका अंत व परिणाम क्या है, लौट के जाना कहाँ है और इसके बाद क्या होगा? क्योंकि यह सवाल उसके भविष्य और वर्तमान दोनों से सम्बन्धित है। जिस व्यक्ति को यह मालूम हो जाए कि इस ज़िन्दगी के बाद दूसरी ज़िन्दगी भी है, जिसमें पहली ज़िन्दगी का हिसाब किताब होगा, और इस पहली ज़िन्दगी के कर्मों का फल मिलेगा, उस व्यक्ति की कार्य पद्धति मौजूदा ज़िन्दगी में उस व्यक्ति से बिल्कुल भिन्न होगी, जो मौजूदा ज़िन्दगी के अलावा किसी दूसरी ज़िन्दगी की कोई कल्पना नहीं करता। इसलिए यह सवाल उसकी इस ज़िन्दगी में बड़ा महत्व रखता है, और जवाब में देर करने की गुंजाइश नहीं क्योंकि इस समस्या के समाधान के बिना इस जीवन की सही संरचना नहीं हो सकती।

हमारे जीवन के यह बुनियादी प्रश्न हैं जिन पर मोक्ष व निजात का दारोमदार और हमारे भाग्य का फैसला निर्भर है जिसके जवाब में ज़रा सी गलती हमारी बर्बादी का कारण बन सकती है। यह जीवन हमको सिर्फ एक बार के लिए मिला है और यह हमारी सबसे कीमती पूँजी है वह सिर्फ क़यास, अनुमान व तजर्बः में नहीं गुज़ारी जा सकती।

इन प्रश्नों के अलावा कुछ प्रश्न और उनका सम्बन्ध भी हमारे दैनिक जीवन से है। हमारा अपने आस–पास की दुनिया से और उसका हमसे क्या नाता है? इस संघर्षपूर्ण जीवन में हमारी हैसियत

और हमारे वजूद का मक़सद क्या है? हम मातहत हैं या स्वतंत्र या गैर ज़िम्मेदार? यदि ज़िम्मेदार हैं तो किसके सामने और हमारी ज़िम्मेदारी किस हद तक है? हमारी क्षमताएं और योग्यताएं हमारी अपनी हैं या किसी दूसरे की सम्पत्ति? इनकी प्रयोग विधि क्या है? इस जीवन का लक्ष्य क्या है? और ऐसे अनेक प्रश्न हैं जो हमारे लिए स्वाभाविक रूप से उत्तर चाहते हैं।

प्रश्नों के उत्तर की दो राहें

इन प्रश्नों के उत्तर की दो ही राहें हो सकती हैं

(१) एक यह कि इनका उत्तर हम अपने ज्ञान व समझ और सोच विचार के आधार पर स्वयं दें। लेकिन इस विधि से हम ज़्यादा से ज़्यादा जिस नतीजे पर पहुँच सकते हैं वह यह होगा कि इस संसार का कोई बनाने वाला जरूर है, रहा यह सवाल कि उसकी सिफ़ात क्या हैं? तो इसका उत्तर हम अपने स्वयं की सोच के आधार पर नहीं दे सकते। हमारा दिमाग अपनी चरम सीमा को उड़ान में भी क़यास व अनुमान की सीमाओं से आगे नहीं बढ़ सकता, और यह मामला ऐसा है कि इसमें अनुमान की गुंजाइश नहीं इसलिए कि ख़ालिक व मख़लूक (रचयिता व रचित) के बीच कोई अनुरूपता (मुशाबेहत) ही नहीं कि ख़ल्क़ (सृष्टि) की दिखाई पड़ने वाली तथा महसूस की जाने वाली चीज़ों को देख कर ख़ालिक़ (रचयिता) की सिफतों (गुणों) की कल्पना की जा सके।

इसके बाद दूसरा कठिन प्रश्न इसको निश्चित करना है कि वह हमसे क्या चाहता है? क्या उसको पसन्द है और क्या नापसन्द हम देखते हैं कि मित्रों और प्रियजनों और ख़ास साथियों की खुशी

पसन्दीदगी और रजामन्दी के बारे में भी कतई राय क़ायम करना मुश्किल है और इसमें कभी कभी बड़ी–बड़ी गलतियाँ हो जाती हैं, फिर एक अगोचर ज़ात और अगम हस्ती की पसन्द और नापसन्द का सुनिश्चित करना मात्र कयास व अनुमान से किस प्रकार सम्भव है?

फिर इस ज्ञान, सूझ–बूझ तथा चिन्तन–मनन का नतीजा एक नहीं है, नतीजों में घोर विरोधाभाष है। किसी ने अपने सोच-विचार के आधार पर यह नतीजा निकाला है कि यह कारख़ाना बिना किसी बनाने वाले के बन गया और बिना किसी चलाने वाले के चल रहा है और खुद ही ख़त्म हो जायेगा। किसी के नज़दीक अगर इसका कोई निर्माता है तो उसका अब बनाई हुई चीजों से कोई तआल्लुक नहीं रहा। किसी के नज़दीक इसका बनाने वाला ही इसका वास्तविक मालिक था मगर अब वह दूसरों के हक़ में अपने मालिकाना अधिकारों को छोड़ चुका है और उसके साम्राज्य में अब वह बादशाही कर रहे हैं। किसी ने इस दुनिया की हर चीज़ को जिससे उसको देखने में नफ़ा–नुकसान पहुँचता है या पहुँच सकता है अपना इलाह (पूज्य) और हर शक्तिमान को अपना हाकिम बना लिया, 'और उसके बाहरी इन्द्रियों, दिन प्रतिदिन के अनुभव और बुद्धि व समझ ने उसको इसी नतीजे पर पहुँचाया, किसी के नज़दीक मनुष्य एक विकसित हैवान है जो कुछ ज़रूरतें और कुछ इच्छायें रखता है, वह आज़ाद व स्वतंत्र है और उससे कोई पूछ नहीं सकता, उसकी शक्ति असीमित और उसका अधिकार असीम है, उसके कानून का न कोई इलाहीं (ईश्वरीय) स्रोत है न उसके ज्ञान का कोई गैबी सरचश्मा (स्रोत)। दुनिया एक रणक्षेत्र है जिसमें असल कानून ताक़त है। अख़्लाक़ (आचरण) अच्छा, बुरा, सुन्दर व भद्दा यह सब अर्थहीन शब्द हैं।

खुदा की हस्ती को तस्लीम करने के बाद उसके सिफात (गुणों) के बारे में मीमांसकों व फलसफियों ने जो अनुमान व अन्दाजे लगाये हैं और बाल की खाल निकाली है और जिस तरह उन्होंने खुदा से उन अवगुणों को जोड़ा है जिनको वे स्वयं से जोड़ना भी पसन्द नहीं करते, वह मन व बुद्धि के अजूबों में से हैं।

बाद के प्रश्न अर्थात इस संसार में इन्सान का असली स्थान व प्रतिष्ठा क्या है? उसकी हैसियत व मक़सद का निर्धारण दूसरी मख़लूक़ात और अपने सजातीय से उसकी कार्य विधि का निर्धारण, मातहती और स्वतंत्रता जिम्मेदारी और आज़ादी की बहस, अपनी शक्तियों और ज़ाहिरी मिलकियतों के बारे में उसका ख्याल? यह सब वास्तव में पहले प्रश्नों की परिशिष्टि हैं। और उनके सही हल से यह स्वतः हल हो जाते हैं। जिन लोगों ने प्रारम्भिक प्रश्नों को हल करने में गलती की और अनुमान से काम लिया, उन प्रश्नों के उत्तर में गलती करना और उनके अन्दाजों में विरोधाभाष और संदेह उत्पन्न होना अनिवार्य है।

(२) जवाब की दूसरी राह यह है कि हम इस बारे में किसी दूसरी जमाअत (समूह) पर भरोसा करें। लेकिन सवाल यह है कि वह जमाअत (समूह) कौन सी है? अगर वह मीमांसकों की टोली है तो पूछा जा सकता है कि इन समस्याओं में उनको हमारे मुक़ाबले में कौन सी विशेषता हासिल है और इन मेटाफिजिकल समस्याओं के हल के उनके पास ज्ञान के कौन से साधन हैं? वह मानते हैं कि इन मसलों में न हवास (ज्ञानेन्द्रियाँ) काम करते हैं? न बुद्धि का कुछ दख़्ल है उनको इस ज्ञान की शुरूआती बातें भी हासिल नहीं हैं, फिर उनको इस बारे में हमारी रहनुमाई करने का क्या हक है और हम उन पर

किस तरह भरोसा कर सकते हैं? उनसे यह कहना ठीक ही होगा।

अनुवाद– *हाँ, तुम लोग वही तो हो, जो उस विषय में तो बहस कर चुके हो, जिसका तुम्हें कुछ तो ज्ञान था, तो अब ऐसी बात में क्यों झगड़ते हो, जिसका तुम्हें ज्ञान ही नहीं? और अल्लाह जानता है, और तुम नहीं जानते।*

(सूरः आले इम्रान ६६)

अब केवल यही एक रास्ता बाक़ी रह जाता है कि इन समस्याओं में हम कुछ ऐसे इन्सानों पर भरोसा करें जिनका ज्ञान इस बारे में अनुमान वाला न हो बल्कि निश्चित और निर्णायक हो, पक्का हो जिन्होंने इन ज्ञान व वास्तविकताओं को अपने निरीक्षण से इस प्रकार प्राप्त किया हो जिस प्रकार हमको इस संसार की दिखने व सुनने वाली चीजों का ज्ञान होता है, जिनके लिए यह चीजें ऐसे ही बिना दलील व तर्क के स्पष्ट हों जैसे हमारे लिये दुनिया की बहुत सी चीजें होती हैं, जिनमें किसी दलील की ज़रूरत नहीं, स्वतः सिद्ध जिनको संयुक्त इन्सानी ज्ञानेन्द्रियों के अलावा एक ज्ञानेन्द्रीय अधिक मिली हो जिसे हम "हास्स–ए–ग़ैबी" (वह ज्ञानेन्द्रीय जिससे ओट की चीज़ों का ज्ञान होता है) कह सकते हैं, जो ख़ुदा से प्रत्यक्ष रूप से उसकी मर्जीयात पसंद और आदेश मालूम कर सकें और दूसरे इन्सानों तक पहुँचा सके। यह सिर्फ पैगम्बरों की जमाअत (समूह) है। उनकी बेदाग सीरत (जीवन–चरित्र), उनकी बेलाग सदाक़त (सच्चाई), उनकी असामान्य व असाधारण (फौक़ुलबशरी) युक्ति व न्याय उनकी चमत्कारी शिक्षा इस बात का यक़ीन पैदा कर देती है कि यह एक अलग किस्म के लोग हैं और इनका ज्ञान व सूचना के उस स्रोत से ज़रूर जोड़ है जो इन्सानों की पहुँच से बाहर है। इनके चमत्कारिक गुण व ज्ञान की

दलील इसके सिवा नहीं हो सकती कि उनका नबी होना और उनके पास वह्इ (ईशवाणी) का आना तस्लीम किया जाए।

पूर्व वर्णित जमाअतें (हाकिम व फिलास्फर) अपने ज्ञान के यक़ीनी और कतई होने का खुद भी दावा नहीं करतीं, न उनको इस बारे में किसी निरीक्षण का दावा है, उनके कथन व दावों का हासिल बस यह है कि ऐसा होगा, या ऐसा होना चाहिए, या हमारे क़ायम किये हुए मुकदमात (जो यक़ीनी और कतई सबूत वाले नहीं हैं) हमको इस नतीजे पर पहुँचाते हैं, और वह इसके सिवा कह भी क्या सकते हैं?

लेकिन पैग़म्बरों को अपने इल्म व ज्ञान के निश्चित व निर्णायक होने का दावा है। वह सिर्फ यही नहीं कहते कि ख़ुदा है या उसकी यह सिफात (गुण) है, बल्कि वह इसके साथ यह भी कहते हैं कि हम उसकी बातें सुनते हैं। हम उससे बात करते हैं। हमारे पास उसके पैग़ाम (संदेश) पहुँचते हैं। हमारे पास उसके फरिश्ते आते हैं। उनके लिए कोई चीज़ उतनी निश्चित नहीं जितनी ख़ुदा की सिफात, उसके आदेश व संदेश और अपनी नबूव्वत व रिसालत। इसलिए उनको एक पल के लिए भी इन सच्चाइयों में कोई संदेह नहीं और किसी के कहने–सुनने से उन पर कोई असर नहीं होता।

पैग़म्बर नबूव्वत व रिसालत (दूतता) के उस बुलन्द मक़ाम पर खड़ा होता है, जहाँ से वह आलमे ग़ैब (ग़ैबी दुनिया) को भी इसी तरह देखता है जिस तरह सामने की चीजों को आलमे आख़िरत (परलोक) भी उसके सामने इसी तरह होता है जिस तरह यह दुनिया। जो लोग इस बुलन्दी पर नहीं हैं और ज़मीन की पस्ती से उसके मुशाहदात (दिखने वाली चीज़े) के बारे में उनसे बहस व हुज्जत करते हैं, वह लोगों से इसके सिवा क्या कह सकता है कि मेरी आँखें वह देखती हैं

जो तुम नहीं देख सकते, मेरे कानों में वह आवाजें आती हैं जो तुम नहीं सुन सकते, तुम्हारे लिये इसके सिवा चारा नहीं कि मैं अपनी आँखों से देखकर और कानों से सुनकर जो कुछ कहूँ तुम उसका यक़ीन करो, तुम्हारी निजात इसी में है।[१]

एक पैग़म्बर से जब उसकी क़ौम ने खुदा और उसकी सिफात (गुण) के बारे में हुज्जत की तो उसने बड़ी सादगी के साथ अपना और बेदलील बहस करने वालों का फर्क बयान कियाः—

अनुवाद— *और उनकी कौम उनसे झगड़ने लगी, तो उन्होंने कहा "क्या तुम मुझसे अल्लाह के बारे में झगड़ते हो? जबकि उसने मेरी रहनुमाई (मार्गदर्शन) की है।*

(सूरः अल् अन्आम ८०)

एक दूसरे पैगम्बर ने यही फर्क़ इस तरह बयान कियाः—

(१) सफा पर्वत के सम्बन्ध में हजरत मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इसी महत्वपूर्ण बिन्दु को जो पैग़म्बर और गैर पैग़म्बर के अन्तर को स्पष्ट करता है, अत्यन्त दिलनशीं अन्दाज में बयान फ़रमाया। आपने पहाड़ पर खड़े होकर क़ौम से पूछा कि तुमने आज तक मुझे कैसा पाया? सबने एकमत होकर कहा कि हमने आपको हमेशा सच्चा और अमानतदार पाया। फिर आपने कहा कि अच्छा अगर मैं तुमसे यह कहूँ कि इस पहाड़ी के पीछे एक लश्कर पड़ा हुआ है जो ग़फ़लत की हालत में तुम पर हमला करना चाहता है, तो तुम इसका विश्वास करोगे? लोगों ने कहा कि इसका विश्वास न करने की हमारे पास कोई वजह नहीं (इसलिए कि आपकी सत्यता का तजर्बः है और आप ऐसे ऊँचे स्थान पर खड़े हैं जहाँ से आपको वह नज़र आ सकता है जो हमको नज़र नहीं आ सकता) इस इकरार के बाद आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया कि मैं तुम्हें ख़बरदार करता हूँ कि अल्लाह का अज़ाब आने वाला है। इस यथार्थवादी पैगम्बराना तक़रीर में आपने पैगम्बर की इन्हीं दो विशेषताओं की विवेचना की एक उसकी आला सत्यता और पाकीजः सीरत, खुदा की दी हुई पैगम्बराना सूझ-बूझ और गैब का मुशाहदा, जो दूसरे इन्सानों को हासिल नहीं और जिसके बिना पर दूसरे इन्सानों के लिए इसकी तकलीद (किसी की पैरवी करना बिना दरयाफ़्त उसकी हकीकत) के सिवा चारा नहीं।

अनुवाद– उन्होंने कहा, "ऐ मेरी कौम यह तो बताओ, कि अगर मैं अपने रब की ओर से एक (रौशन) दलील पर हूँ और उसने अपनी विशेष कृपा से मुझे सम्मानित किया हो, मगर वह तुम्हें दिखाई न दे रही हो, तो क्या यह जबर्दस्ती तुम्हारे सर चिपका दे और जबकि वह तुम्हें अप्रिय है। (सूरः हूद २०)

एक तीसरे पैगम्बर के सम्बन्ध में यूँ कहा गयाः–

अनुवाद– और न वह अपनी इच्छा से बोलते हैं। यह तो बस एक वहइ (ईशवाणी) है, जो वहइ की जा रही है।

(सूरः अंनज्म ३–४)

इसी निरीक्षण के बारे में कहा गया है:–

अनुवाद– न उसकी निगाह बहकी और न हद से आगे बढ़ी, उन्होंने अपने रब की बड़ी–बड़ी निशानियां देखीं। रसूल के दिल ने झूठ नहीं कहा जो कुछ कि देखा, क्या तुम इसमें झगड़ते हो उस सम्बन्ध में जो कुछ वह देखता है। (सूरः अंनज्म १७–१८)

इस यकीन और निरीक्षण के मुकाबले में जो कुछ है उसकी हकीकत सुन लीजियेः–

अनुवाद– वे लोग तो केवल गुमान और मन की इच्छा के पीछे चल रहे हैं। हालाँकि उनके पास उनके 'रब' की ओर से हिदायत (सत्य मार्गदर्शन) आ चुकी है। (सूरः अंनज्म २३)

अनुवाद– और उन्हें इसका कोई ज्ञान नहीं, वे केवल अटकल के पीछे चल रहे हैं और कयास वास्तविकता का स्थान नहीं ले सकता।

(सूरः अंनज्म २८)

ज़िन्दगी की पूरी तौजीह (विवेचना) वह्इ और पैग़म्बरों की बसीरत (बुद्धिमता) के बिना सम्भव नहीं।

उन मेटाफिज़िकल प्रश्नों के अलावा जिनका जवाब दिये बिना हमारी ज़िन्दगी हैवानी ज़िन्दगी से विशिष्ट नहीं हो सकती, हम यूँ भी वह्इ की रौशनी और पैग़म्बरों के नूरे बसीरत (बुद्धिमता की ज्योति) के बिना अपने जीवन की पूरी विवेचना नहीं कर सकते और उस सर्वव्यापी तथा हकीमाना क़ानून की खोज नहीं कर सकते जो इस आलम में चल रहा है। अपनी स्वयं की सूझ–बूझ व समझ से हमको यह ज़िन्दगी एक वहदत (एकता) के तौर पर नज़र न आयेगी। बल्कि एक बिखरा हुआ क्रम मिलेगा। जिसके पन्ने बिखरे हुए हैं, इसकी कुछ सतरें और इसके कुछ शीर्षक हम ग़ौर करके पढ़ सकते हैं, मगर इस सृष्टि की किताब का विषय इस किताब का खुलासा इसके लेखक की मंशा, हमको पैग़म्बरों की बसीरत (बुद्धिमता) के बिना मालूम नहीं हो सकती।

मीमांसकों तथा भौतिक शास्त्र विशेषज्ञों ने ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में जो खोज की है, जीवन के बारे में जो यथार्थ खोज निकाले हैं, प्राकृतिक शक्तियों को अपने (ज्ञान) और प्रयोग से मनुष्य के लिए जिस तरह मातहत बनाया है और जिस तरह ब्रह्माण्ड के एक–एक संकाय और जीवन के एक–एक पहलू के लिए ज्ञान–विज्ञान की शाखें निकालीं और पुस्तकालय उपलब्ध कर दिये वह निःसंदेह इन्सानी ज्ञान का एक कारनामा है। लेकिन यह जो कुछ भी है यह ज़िन्दगी और कायनात के असल संग्रह के हिस्से हैं जिनमें आपस में कोई जोड़ नहीं, मेल नहीं, न उनका कोई केन्द्र मालूम है। यह सब किस व्यवस्था

के अधीन है? किस मक़सद के मातहत है? किस महत्वपूर्ण लक्ष्य के सेवक हैं? इन प्रश्नों का कोई उत्तर वैज्ञानिकों के पास नहीं है। हालाँकि ज्ञान की हैसियत से हमारे लिये यही प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण है। क्योंकि आचरण व व्यवहार और जीवन के बुनियादी दृष्टिकोण की निर्भरता इन्हीं प्रश्नों पर है। वैज्ञानिकों ने अपनी यात्रा असली शुरूआती बिन्दु (ख़ुदा की पहचान) से शुरू नहीं किया इसलिए वह हमेशा आफाक (क्षितिज) में गुम रहेंगे और जीवन की गुत्थी को कभी सुलझा न सकेंगे।

लेकिन ठीक इसके विपरीत जब हम वह्इ (ईशवाणी) की रौशनी और पैग़म्बर की बसीरत (बुद्धिमता) से इस संसार पर नज़र डालते हैं तो वह एक एकाई नजर आता है और एक आला एकीकृत व्यवस्था मालूम होता है जिसके हिस्सों में पारस्परिक पूरा सम्पर्क व सम्बन्ध है, सब एक केन्द्र के अधीन हैं। इनकी हर हरकत और कार्य एक मक़सद के अन्तर्गत है, इनमें न आपसी टकराव है, न स्वार्थ। दुनिया एक सुगठित संतुलित मशीन है जिसका हर पुर्जा अपनी जगह पर उपयोगी है और दूसरे पुर्जे की सहायता कर रहा है, या एक बड़ा कारख़ाना है जिसमें सैकड़ों मशीनें चल रही हैं। हर मशीन को दूसरी मशीन से पूरा संबंध है और यह पूरी मशीनरी या पूरा कारख़ाना एक ज्ञानी व साधिकार ताक़त के हाथ में है जो इसको एक कानून और व्यवस्था के अर्न्तगत जो उसी का बनाया हुआ है, चला रहा है।

नबियों और अनुसंधानकर्ताओं के विचार व कार्य-विधि का मतभेद

अंबिया, दार्शनिकों और अनुसंधानकर्ताओं के दृष्टिकोण और कार्य–विधि का इस ब्रह्माण्ड के बारे में जो मतभेद है उसे हम एक

उदाहरण से स्पष्ट करते हैं। किसी शहर में विद्वानों और शोधकर्ताओं की एक टोली दाख़िल होती है। उनमें से एक गिरोह यह जाँच करता है कि इस नगर की वस्तु स्थिति क्या है? इसका अक्षांश–देशान्तर क्या है? उसके पास कितनी नदियां और कितने पहाड़ है और नदियां कहां से आती है और पहाड़ कहां तक जाते हैं, शहर का क्षेत्रफल क्या है वहाँ क्या चीजें पैदा होती है? यह भुगोल देत्ताओं का गिरोह है। दूसरा गिरोह यह खोज करता है कि यह शहर कब से आबाद है? शहर में कौन–कौन से पुरातत्व पाये जाते हैं? इनका इतिहास क्या है? यह इतिहासकारों और पुरातत्व वेत्ताओं की टोली है।

कुछ लोग इसकी ज़मीन की हैसियत मालूम करते हैं, खुदाइयाँ करते हैं और इसके खनिजों की खोज करते हैं। यह भूगर्भशास्त्र देत्ताओं का गिरोह है। कुछ लोग वहाँ एक वैधशाला कायम करते हैं जहाँ से ग्रहों का अध्ययन करते हैं। यह लोग अन्तरिक्ष–विज्ञानी हैं। कुछ लोग वहाँ प्रयोगशाला कायम कर दवाइयों की विशेषताओं का अनुभव कर नए नए शोध करते हैं। यह रसायन व वनस्पति शास्त्र विशेषज्ञ हैं। कुछ लोग शहर की भाषा के संबंध में शोध करते हैं उसके साहित्य का अध्ययन करते हैं, यह साहित्यकरों का ग्रोह है। कुछ लोग इन शुष्क विषयों से हटकर फूल–पत्तियों और प्राकृतिक दृश्यों का आनन्द लेते हैं और उनके संबंध में प्रभावी व आकर्षक शैली में अपनी भावनाएं व्यक्त करते हैं, यह कवियों की टोली है। कुछ लोग वहाँ के रीति–रिवाज, आचार–व्यवहार, रहन–सहन का अध्ययन करते हैं और उनकी आलोचना करते हैं और यह पता लगाते हैं कि यह रीति रिवाज उन में कहां से दाख़िल हुए। कुछ लोग शहर से सम्बन्धित सुधार के कुछ सुझाव पेश करते हैं। यह सब टोलियाँ अपने–अपने काम में व्यस्त हो जाती हैं।

अब एक व्यक्ति इस शहर में दाख़िल होता है। वह पूरे शहर पर एक गहरी नज़र डालता है। वह देखता और सुनता सब कुछ है मगर व्यस्त किसी चीज़ में नहीं होता। उसके सामने महत्वपूर्ण प्रश्न यह होते हैं कि नगर का क्षेत्रफल क्या है? और वह दूसरी बातें जो पूर्व वर्णित टोलियों के लिए महत्वपूर्ण हैं। उसके सामने पहला और महत्वपूर्ण प्रश्न यह नहीं होता है कि यह शहर इस खूबसूरती व कारीगरी के साथ किसने बनाया और आबाद किया यहाँ किसकी हुकूमत है? नगर वासी किसकी प्रजा हैं? नगर की आबादी और सामान्य जीवन से नगर के मालिक और हाकिम का क्या और कैसा सम्बन्ध है? वह हुकूमत और प्रजा के बीच माध्यम बनता है, हुकूमत की तर्जुमानी करता है। अतएव वह तमाम ज्ञानमयी और टोलियाँ मिलकर भी इस व्यक्ति की जगह नहीं ले सकती, इसके बिना यह पूरा शहर एक अजायबघर और सैरगाह बनकर रह जाता है।

नबियों की सोच वैज्ञानिकों तथा मीमांसकों से बुनियादी रूप से जुदा होती है। उनका काम ब्रह्माण्ड की चीज़ों के भेद और यथार्थ को खोलना व खोज निकालना नहीं। उनका असल विषय व शीर्षक "मौजूद चीज़ों को वजूद में लाने वाली ज़ात (व्यक्तित्व) और सिफात (गुण) और उसके अहकाम (आदेश)" हैं। कायनात की किताब के पन्ने व पृष्ठ उनके सामने भी उसी तरह खुले और फैले हुए होते हैं जिस तरह दूसरे अहले नज़र के सामने मगर उनकी नज़र कहीं अटकती उलझती नहीं उनका इस किताब के लेखक से सीधे सम्बन्ध होता है। वह "आफाक" (क्षितिज) व "अनफुस" (आत्माओं) में उसकी खुली निशानियाँ देखते हैं और उसकी सत्ता को इस तरह देखते हैं कि इस ज़मीन व आसमान में उनको केवल उसी का हुक्म चलता नज़र आता है, और सिर्फ उसी का राज का जल्वा दिखाई देता है। उसका क़ानून

उनको किसी कोने में भी टूटता नज़र नहीं आता। सारी ऊँचाइयाँ उसके सामने शर्मिन्दा दिखाई देती हैं, और तमाम ताक़तें उसके सामने असमर्थ नज़र आती हैं। हर मामले में उसका ग़ैबी (अदृश) हाथ काम करता नज़र आता है, जमीन व आसमान उसी के सहारे थमे हुए मालूम होते हैं। और उसका आसमानों व ज़मीन का क़य्यूम (कायम रखने वाला) होना उनके लिए अतिविश्वस्त बन जाता है।

यही ख़ुदा की वह बादशाही है जो उनको स्पष्ट दिखाई देती है जिसका ज्ञान सबसे बड़ा ज्ञान और सच्चाइयों की सच्चाई है जिससे मीमांसकों के ज्ञानों को कण की भी तुलना नहीं और जिसके मुक़ाबले में इनकी हक़ीक़त बचकाना मालूमात से अधिक नहीं।

अनुवाद– *और इसी तरह हम इब्राहीम को आसमानों और ज़मीन की सत्ता दिखाते रहे, ताकि उनको ख़ूब विश्वास हो जाय।*

(सूरः अल–अनआम ७)

अम्बिया की प्रवृत्ति उनकी बुद्धि और उनका दिल सलामत और ज़कावत (बुद्धिमत्ता) का बेहतरीन नमूना होता है। उनके निरोग प्रवृत्ति की ख़ासियत है कि उनको होश संभालते ही इस संसार के ख़ालिक़ (सृजक) और व्यवस्थापक की सच्ची तलब पैदा होती है। उनकी बेचैन आत्मा को उस समय तक संतोष नहीं होता जब तक कि वह उसको पा नहीं लेते। उनकी निरोग प्रकृति पहले से उनमें इसका यक़ीन व विश्वास पैदा कर देती है कि इस संसार का रचियता और मालिक और उनका मुरब्बी (दीक्षा देने वाला) कोई ज़रूर है वह ढूँढते हैं, और इस तलाश व प्रयास में भी उससे जुदा नहीं होते और कहते हैं:–

अनुवाद– *"अगर मेरे रब ने मुझे राह न दिखाई तो मैं भटके हुए लोगों में हूँगा।*

(सूरः अल–अनआम ७७)

उनकी सही सूझ–बूझ और अक्ले सलीम (शुद्ध बुद्धि) का खुलासा यह है कि उनको इस दुनिया की हर नमूद (अस्तित्व) अस्थायी और हर बहार फानी (मरण शील) मालूम होती है। उनको तारे, चाँद, सूरज सब "आफिल" (गायब हो जाने वाले) अस्त हो जाने वाले, पतना–मुख और हारे हुए मालूम होते हैं। उनको किसी के बारे में अमर, अजर होने का धोखा नहीं होता। वह "आफिल" को अपनी मुहब्बत व इश्क के लायक नहीं समझते और इससे दिल लगाना पसन्द नहीं करते, और उनको देखकर बेइख़्तियार पुकार उठते हैं:–

अनुवाद– *मैं गायब हो जाने वालों को पसन्द नहीं करता।*

(सूरः अल–अन्आम ७६)

उनको हमेशा रहने वाली जात की तलाश होती है, फिर जब वह उनको मिल जाती है तो वह इस इल्म के बाद सब्र नहीं कर सकते और पुकार कर कह देते हैं:–

अनुवाद– *ऐ मेरी क़ौम के लोगो! जिन चीजों को तुम साझीदार बनाते हो मैं उनसे बरी हूँ, मैंने सबसे यक्सू (एकाग्र) होकर अपना चेहरा उसकी ओर कर लिया है। जिसने आसमानों और जमीन को पैदा किया, और मैं साझी ठहराने वालों में से नहीं।*

(सूरः अल–अन्आम ७८, ७६)

यही है शुद्ध मन जिसमें अल्लाह के सिवा किसी दूसरे की गुँजाइश नहीं होती और जो गैर अल्लाह की बड़ाई के तमाम निशानों से शुद्ध होता है। हजरत इब्राहीम अलैहिस्सलाम यही निरोग प्रकृति, बुद्धि और यही शुद्ध मन रखते थे।

अनुवाद– *इससे पहले हमने इब्राहीम को हिदायत और समझ दी थी,*

और "हम" उनको खूब जानते थे।

(सूरः अल्–अंबिया ५१)

अनुवाद– *नूह ही के रास्ते पर चलने वालों में इब्राहीम भी थे (याद करो), जबकि वह अपने रब के समक्ष साफ–सुथरा दिल लेकर आए फिर उन्होंने अपने बाप और अपनी क़ौम के लोगों से कहा, तुम किस चीज़ की पूजा करते हो? क्या अल्लाह को छोड़कर मनगढ़न्त मअ़बूदों (उपास्यों) को चाह रहे हो? तो तुमने सारे संसार के रब के बारे में क्या गुमान (समझ) कर रखा है।* (सूरः अस्साफ़फात ८३–८७)

नबियों की विशिष्टता

नबियों अलैहिमुस्सलातु वस्सलाम का इस जीवन–दायी ज्ञान में कोई शरीक व सझी नहीं जिसके बिना इन्सानों को न सौभाग्य हासिल हो सकता है न निजात (मुक्ति) मिल सकती है। वह इल्म (ज्ञान) जिसकी रौशनी में इन्सान अपने पैदा करने वाले (ख़ालिक) और इस सृष्टि रचियता, उसके उच्च गुणों तथा उसके और बन्दों के आपसी सम्बन्ध को मालूम करता है, इसी के प्रकाश में मानव का आदि–अन्त ज्ञात होता है और इस दुनिया में उसका मुकाम (स्थान) और रब (ईश्वर) के मुकाबले में इन्सान की धारणा सुनिश्चित होती है। इसी ज्ञान द्वारा अल्लाह को प्रसन्न व अप्रसन्न करने वाले कर्मों का निंधारण होता है। इसी के प्रकाश में यह मालूम किया जाता है कि कौन से कर्म आख़िरत में इन्सान को भाग्यशाली व सफल अथवा असफल बनाने वाले हैं। इसी के अलोक में समझा जा सकता है कि कौन से विश्वास, कर्म, आचरण व व्यहार का क्या पुण्य या पाप मिलेगा और इंसान द्वारा किए हुए कर्मों का क्या प्रभाव व परिणाम होगा। यही वह ज्ञान है जिसको "इल्मुन्नजात" (मोक्ष ज्ञान) कहा जा सकता है।

नबी (संदेष्टा) उच्च योग्यताओं, कोमल अनुभूति तथा प्राकृतिक बुद्धिमत्ता के मालिक होने के बावजूद अपने ज़माने के प्रचलित व सामान्य विज्ञान में हस्तक्षेप नहीं करते, न इस विज्ञान व कला कौशल में अपने कमाल या अपनी महारत का दावा करते हैं, बल्कि वह तमाम चीज़ों से बिल्कुल अलग सिर्फ उस कर्तव्य का निर्वाह तथा उसी सेवा कार्य में लगे रहते हैं जिनके लिये उनका अभ्युदय (बेअसत) हुआ है और जिस काम के लिए वह भेजे गये थे और जिन पर इन्सान के अहोभाग्य का दारोमदार है, वह उसी ज्ञान को दूसरों तक पहुँचाने की धुन में लगे रहते हैं।

नबियों की शिक्षा से विमुख होने का अंजाम

सभ्य तथा विकसित क़ौमें जो अपने–अपने ज़माने में सभ्यता व संस्कृति, बुद्धिमत्ता तथा ज्ञानमयी खोज में उच्चतम स्तर पर पहुँची हुई थीं वह भी नबियों की शिक्षा तथा उनके विशेष ज्ञान की उतनी ही ज़रूरतमन्द थीं जितना कि नदी में डूबने वाला सहारे के लिए किसी नाव का मुहताज होता है या जीवन से निराश रोगी को इक्सीर दवा की ज़रूरत होती है। इन विकसित क़ौमों के लोग इस विशेष तथा आवश्यक ज्ञान के ऐतबार से (दूसरे ज्ञान, या सभ्यता व कल्चर में जितने भी आगे रहे हों) दूध मुहें बच्चे, अज्ञान और ख़ाली हाथ व बेसरो सामन थे, और उन्होंने अपनी ज्ञानवी सफलताओं और सभ्यता के विकास के बावजूद जब नबियों के ज्ञान को रद्द कर दिया और उसका मज़ाक उड़ाया, तो उन्होंने अपने लिये और अपनी क़ौम व समाज के लिए विनाश मोल लिया। अनेक सभ्य और विकसित क़ौमें जो ज्ञान व साहित्य के बहुमूल्य ख़ज़ानों से मालामाल थीं, और बुद्धिमत्ता में जिनका उदाहरण दिया जाता था, इस इन्कार, अभिमान, स्वार्थ तथा

अपने विज्ञान व कलाकौशल पर गर्व का शिकार हो चुकी हैं। अपने ज़माने के नबी की लाई हुई शिक्षाओं को उन्होंने हिकारत, हीन व नफरत की नज़र से देखा उससे विमुख हुए, उसकी कद्र नहीं की, उसको बेकार व बेकीमत (बेमूल्य) समझा; तो वह इसी घमंड की नज़र हो गयी और वह मूर्खता जो उच्च बुद्धिमत्ता नज़र आती थी, वह तंग नज़री (संकीर्णता) जिसको उस समय दूर दृष्टि तथा यथार्थवाद कहा जाता था उनको ले डूबी और उन्होंने अपने किये का मज़ा चख लिया।

नबियों के ज्ञान और दूसरे ज्ञान व कला कौशल की तुलना।

नबियों के ज्ञान तथा दूसरे विद्वानों व वैज्ञानिकों के ज्ञान व कला–कौशल का स्पष्ट अन्तर एक कहानी से सुस्पष्ट हो जाता है, पाठकों ने इसे सुना तो ज़रूर होगा, लेकिन शायद इस प्रकार इस अन्तर पर सटीक न किया होगा और न इसके जतनपूर्ण होने को मालूम किया होगा और माफ कीजियेगा, यह कहानी आप ही लोगों अर्थात छात्रों से ही सम्बन्धित है" कथाकार सादिकुल बयान कहता है कि एक बार कुछ छात्र मनोरंजन के लिए एक नाव पर सवार हुए। तबीयत मौज पर थी, समय सुहाना था, मस्त हवा चल रही थी, और काम कुछ न था। ये युवा ख़ामोश कैसे बैठ सकते थे। जाहिल केवट मनोरंजन का अच्छा साधन और कटाक्ष व मज़ाक व तफरीह का सामान। अतएव एक तेज व तर्रार छात्र ने मल्लाह को सम्बोधित करके कहा:–

"चचा! आपने कौन से विषय पढ़े हैं?"

मल्लाह ने उत्तर दिया, "भैया! मैं कुछ पढ़ा लिखा नहीं।"

छात्र ने ठण्डी सांस भरकर कहा, "अरे आपने साइंस नहीं पढ़ी।"

मल्लाह ने कहा, "मैंने तो इसका नाम भी नहीं सुना।"

दूसरा युवक बोला, "ज्योमिट्री और बीजगणित तो आप ज़रूर जानते होंगे, मल्लाह ने कहा, "भैया! यह नाम मेरे लिए बिल्कुल नये हैं।"

अब तीसरे युवक ने शोशा छोड़ा, 'मगर आपने इतिहास और भूगोल तो पढ़ा होगा।"

मल्लाह ने कहा, "सरकार! यह शहर के नाम हैं या आदमी के?" मल्लाह का यह जवाब सुनकर लड़के हँस पड़े, और कहकहा लगाया फिर लड़कों ने पूछा, "चचा मियाँ! आपकी उम्र क्या होगी?"

मल्लाह : "यही कोई चालीस साल।"

लड़के : "आपने अपनी आधी उम्र बर्बाद की, और कुछ पढ़ा लिखा नहीं।" मल्लाह बेचारा शर्मिन्दा होकर रह गया और चुप्पी साध ली।

कुदरत का तमाशा देखिये कि नाव नदी में थोड़ी ही दूर गयी थी कि तूफान आ गया, लहरें मुँह फैलाये हुए बढ़ रही थीं, और नाव हिचकोले ले रही थी कि अब डूबी तब डूबी। नदी में नवकावाहन का लड़कों का पहला अनुभव था। उनके होश उड़ गये, चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। अब जाहिल मल्लाह की बारी आई। उसने गम्भीरता पूर्वक मुँह बना कर पूछा "भैया! आपने कौन–कौन से विषय पढ़े हैं?"

लड़के उस भोले भाले जाहिल मल्लाह का मक़सद नहीं समझ सके। और कालेज या स्कूल में पढ़े हुए विषयों की लम्बी सूची गिनानी

शुरू कर दी और जब भारी भरकम और रौब में लाने वाले नाम गिना चुके तो उसने मुस्कराते हुए पूछा, "ठीक है, यह सब तो पढ़ा लेकिन क्या तैराकी भी सीखी है? अगर अल्लाह (ईश्वर) न करे, नाव उल्ट जाये तो किनारे तक कैसे पहुँच सकोगे?"

लड़कों में कोई भी तैरना नहीं जानता था। उन्होंने दुःख के साथ उत्तर दिया, "चाचा जी! यही एक विषय हमसे रह गया है हम नहीं सीख सके।" लड़कों का जवाब सुनकर मल्लाह जोर से हँसा और कहा, "मियाँ! मैंने तो अपनी आधी उम्र खोई, मगर तुमने तो पूरी उम्र डुबोई, इसलिये कि इस तूफान में तुम्हारा पढ़ा लिखा कुछ काम न आयेगा, आज तैराकी ही तुम्हारी जान बचा सकती है, और वह तुम जानते ही नहीं।"

विकास के उच्च सोपान तय करने और सभ्यता व संस्कृति के उच्च स्तर पर पहुंचने वाली तमाम क़ौमों की यही हालत है, चाहे वह ज्ञान व विज्ञान के इन्साइक्लोपीडिया ही क्यों न रही हों। यह इन्सानों के तमाम ज्ञान, विज्ञान, आविष्कार तथा इस विशाल संसार में निहित सम्पत्तियों के खोज निकालने में पूरी दुनिया की चौधरी ही क्यों न रही हों, लेकिन वह उस ज्ञान से अनभिज्ञ थीं जिससे अल्लाह की मारफ़त (पहचान) हासिल होती है, जिसके जरिये, ख़ालिक (सृजनहार) तक पहुँचा जा सकता है, जिसके सहारे लक्ष्य को पाया जा सकता है, जो कर्म और सोच को दुरूस्त रखता, काम और कामनाओं को काबू में करता है। आचरण को सद् तथा मन को सभ्य बनाता है, बुराइयों से रोकता और भलाइयों पर उभारता है। दिल में अल्लाह का भय उत्पन्न करता है। जिसके बिना न समाज का सुधार हो सकता है न सभ्यता व संस्कृति की हिफाजत (सुरक्षा)। जो इन्सान को परलोक की तैयारी

के लिए आमादा करता है, घमंड व स्वार्थ की भावना को दबाता और ख़त्म करता है, दुनिया की तुच्छ वस्तुओं की लालच से आज़ादी दिलाता है, एहतियात और सन्तुलन का रास्ता दिखाता है और बे नतीजा व अलाभकारी प्रयासों से दूर रखता है।

मीमांसकों और विशेषज्ञों, ज्ञानियों के दामन और उनके बड़े-बड़े पुस्तकालय उन जानकारियों से एकदम ख़ाली होते हैं जो नबियों को खुदा की तरफ से मिलती हैं। उनको आख़िरत की उन मन्ज़िलों की हवा भी नहीं लगी होती है जिनकी अंबिया अपनी बसीरत की वजह से ख़बर देते हैं और जिनके सम्बन्ध में विस्तार से बताते हैं, उनकी दौड़ भाग दुनिया की हद तक है। मौत की सरहद के पार वह झांक कर देख नहीं सकते।

अनुवाद– *वह तो दुनिया की ज़िन्दगी के बाहरी रूप को जानते हैं, और आख़िरत से ग़ाफ़िल (बेपरवाह) हैं।*

(सूरः अरूम ७)

अनुवाद– *आख़िरत के बारे में उन लोगों की जानकारी ख़त्म हो गई है, बल्कि वे उसकी ओर से शक में हैं, बल्कि यह उससे अंधे हो रहे हैं।*

(सूरः अं–नमल ६६)

वैज्ञानिकों और विषय विशेषज्ञों की हक़ीक़त मानवजाति के बेड़ों के इन खेवनहारों के मुकाबले में वही होती है जो एक अनुभवी जहाज़राँ के सामने समुद्र तट पर सुन्दर सीपियों के साथ खेलने वाले बच्चों की। इन विद्वानों के लिए ज़रूरी है कि नबियों के सामने शिष्य बन कर बैठें और उनसे अपनी निजात व सौभाग्य का वह ज्ञान प्राप्त करें जो उनके बिना किसी से नहीं मिल सकता, जिसके बिना उनके

सारे ज्ञान, कला–कौशल, उनकी सारी खोज बेकार बल्कि उनके लिए बवाल है। अपने ज्ञान पर गर्व, अपनी खोज पर संतोष और नबियों के ज्ञान से पल्लू झाड़ लेना उनके लिए और उन तमाम आबादियों और मुल्कों के लिए जो उनका नेतृत्व स्वीकार करें और अपनी किस्मत उनके सुपुर्द करें, मौत का पैगाम है। जिन व्यक्तियों या कौमों ने अपने ज़माने के प्रचलित ज्ञान–विज्ञान पर भरोसा करके नबियों की शिक्षा व निर्देश की अनदेखी की वह बर्बाद हो गयीं।

अनुवाद– जब उनके रसूल उनके पास स्पष्ट प्रमाण लेकर आए तो जो (थोड़ा बहुत) ज्ञान उनके पास था वे उसी पर खुश होते रहे, और उनको उसी चीज़ ने आ घेरा जिनका वे मज़ाक उड़ाते थे।

(सूरः अल्–मोमिन ८३)

रसूल के आ जाने के बाद इन्कार की गुंजाइश नहीं

अंतिम संदेष्टा हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आ जाने के बाद भी हर उस कौम की यही हालत है जो ज्ञान–विज्ञान, कला–कौशल के उच्च स्तर तय कर चुकी और उसके अभिमान व घमण्ड और अपने ज्ञान–विज्ञान, विकास तथा विशेषज्ञों पर ज़रूरत से ज़्यादा भरोसे ने अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के तरीके अपनाने और आपके पगचिन्हों पर चलने की इजाजत न दी।

हमारे ज़माने की विकसित कौमों का उदाहरण भी यही है, जो क़यामत तक बाकी रहने वाले इस दीन से फायदा उठा सकती हैं और इस ज्योति पुँज से रौशनी की किरनें अपने दामन में समेट सकती हैं। जल्द ही इन कौमों के इन्कार, घमण्ड और अपने को

सर्वमान्य समझने का नतीजा ज़ाहिर हो जायेगा और इनकी सभ्यता की इमारत ज़मीन पर आ रहेगी।

नबियों का आवाहन

नबियों को जब खुली आँखों यह हक़ीक़त दिख जाती है, कि यह संसार खुदा का बनाया हुआ है, उसी का साम्राज्य है और उसी के हुक्म से यह पूरी व्यवस्था चल रही है। तो फिर वह इन्सानों की तरफ ध्यान देते हैं और आश्चर्य से देखते हैं कि सृष्टि और उसके तमाम अंग बेबस जिसके सामने सर झुकाये हुए हैं और चाहते हुए या न चाहते हुए जिस की फरमांबरदारी कर रहे हैं, इन्सान इस सृष्टि के कुल का एक हिस्सा होने के बावजूद उसके सामने अपनी चाहत और इच्छा से झुकने में आना कानी कर रहा है। यद्यपि यह बिना इरादे उसके सामने झुका हुआ है, उसके आदेशों व क़ानून के अधीन है, उसी के हुक्म से पैदा होता है, उसी के हुक्म से पलता पढ़ता है, बच्चा से जवान होता है और जवान से बूढ़ा। उसी की पैदा की हुई चीजों को खाता है, उसी के हुक्म से बीमार होता है, उसी के हुक्म से सेहत (स्वास्थलाभ) पाता है। जीवन की तमाम आवश्यकताओं में और अपने तमाम शारीरिक हालात में खुदा के बनाये हुए कानून और व्यवस्था के उसी प्रकार अधीन है जिस प्रकार पत्थर, जीव–जन्तु। लेकिन जब इससे कहा जाता है कि जिस शक्ति के सामने तू बिना इरादा झुका हुआ है, उसी के सामने अपने इरादे से झुक जाए तो उसको इसमें बहाना होता है। नबियों ने जब पहली हक़ीक़त के विपरीत यह घटना देखी और उन्होंने देखा कि उनकी इन्सानी बिरादरी के बहुत से लोगों ने निर्माता के बजाय उसकी कुछ **मख़लूक़ात (सृष्टियों) के आगे सर झुकाया है और उनकी इबादत और इताअत (आज्ञापालन) अपना**

लिया है तो उनकी ज़बान से अनायास निकला:–

अनुवाद– *क्या यह लोग अल्लाह के दीन के सिवा (किसी और तरीक़े को) तलाश रहे हैं, हालाँकि आसमान व ज़मीन में जो कुछ भी है, इच्छा से हो या मजबूरी से उसी के अधीन है, और 'उसी' की ओर सबको लौटना है।*

(सूरः आलि–इम्रान ८३)

कुर्आन में अल्लाह का कहना है:–

अनुवाद– *और आसमानों और ज़मीन में जितने भी जानदार हैं वे सब अल्लाह ही को सज्दा (विशेष शैली से माथा टेकना) करते हैं, और फ़रिश्ते भी और ये घमण्ड बिल्कुल नहीं करते।*

अपने रब से जो उनके ऊपर है डरते हैं, और यह वही करते हैं, जिसका उन्हें हुक्म मिलता रहता है।

(सूरः अंनह्ल ४९–५०)

अतएव नबियों का आवाहन यह होता है कि इन्सान भी उसी शक्ति के सामने सर झुका दे जिसके सामने सारी सृष्टि सर झुकाये है। सृष्टि का ऐसा अंग होकर जीवन यापन करे जो अपनी हरकत और अमल में उसी संकलित हरकत व रफ्तार से मेल खाती हो और सृष्टि के सृजनहार तथा ज़मीन व आसमानों के मालिक के आदेशों व कानून को माने। अपनी तमाम ग़लत इच्छाओं से, इख़्तियार व मनमानी से, आज़ादी व खुदमुख़्तारी (स्वतंत्रता) के दावा से और अपने हुकूके मालिकाना (स्वत्वाधिकार) के गर्व से दस्तबरदार होकर और छुट्टी करके अपने को बिल्कुल उसके हवाले कर दे. इसी का नाम "इस्लाम" है जिसकी दावत लेकर **तमाम नबी आये।**

ज़ाहिर है कि इस "दीन" और "इस्लाम" (पूरी इताअत और पूरी सुपुर्दगी) के बाद और इस विचार के साथ कि अन्ततः फिर वास्ता उसी से पड़ने वाला है, और उसके सामने इस ज़िन्दगी का हिसाब–किताब पेश करना है। इन्सान में मनमानी और खुदमुख़्तारी की भावना किसी तरह पैदा नहीं हो सकती, उसकी ज़िन्दगी का नक्शा उसके दिमाग के साँचे से ढल कर नहीं निकलेगा, बल्कि उसी का प्रस्तावित किया हुआ होगा जिसने सृष्टि का पूरा नक्शा बनाया है और जो खुद इन्सान का भी ख़ालिक़ है, विधाता है। उसका आचरण, उसके क्रिया–कलाप, सियासत व आदेश तथा क़ानून उसके अपने बनाये हुए न होंगे बल्कि उसको सब खुदा की तरफ से मिलेगा।

वह्इ (ईशवाणी) व रिसालत (दूतता) के इस रास्ते के विपरीत दूसरा रास्ता यह है कि इन्सान अपने को इस संसार में एक ऐसा स्थायी अस्तित्व मान ले जिसके जीवन की दिशा सृष्टि की अन्य वस्तुओं से बिल्कुल जुदा है, और इसमें वह किसी ऊपर वाली ताक़त के अधीनस्थ, किसी आसमानी व्यवस्था का मातहत और किसी गैर इन्सानी अदालत के सामने–उत्तरदायी नहीं है, यह जाहिलियत का रास्ता है। यह वास्तव में खुदा की इस सल्तनत में छोटी–छोटी अनेक आजाद सल्तनतें क़ायम करने की बगावत वाली कोशिश है।

वह्इ (ईश्वाणी) व रिसालत (दूतता) सभ्यता की बुनियाद है

नबी अलैहिमुस्सलाम इन्सान को वह अमर ज्ञान व यथार्थ, जीवन के वह परिपूर्ण सिद्धान्त और समाज व समूह के वह त्रुटिहीन नियम कानून प्रदान करते हैं जिनकी पाबन्दी से सही इन्सानी तहज़ीब (शुद्ध मानव सभ्यता) अस्तित्व में आती है और जिनकी बुनियाद पर न्यायप्रिय

तथा सही सभ्यता का विकास होता है।

संस्कृति ईंट और चूने, कागज और कपड़ों की किस्मों का नाम नहीं, न हैवानी तक़ाज़ों को इन्सानी हुनरमन्दी से पूरा करने और इसके लिए एक दूसरे से सहयोग करने का नाम है। संस्कृति उस सामूहिक जीवन का नाम है जिसमें कुदरत के क़ायम किये हुए नियम सीमाएं क़ायम रहें। समूह के प्रत्येक व्यक्ति को उसका वाजिबी हक मिले, और आस्था व आचरण तथा क़ानून व हुकूमत के सहयोग से एक ऐसा माहौल पैदा हो जिसमें इन्सान को प्रकृति की मँशा पूरा करने और अपने ईष्ट लक्ष्य पर पहुँचने में सहायता मिले।

अब हम देखते हैं कि वह्इ (ईश्वाणी) व रिसालत (दूतता) की रौशनी और नबियों के मार्गदर्शन के बिना इन्सान ने जब सामूहिक जीवन का कोई नक्शा बनाया तो कभी वह इसको पूरा न कर सका और उसमें संतुलन न पैदा कर सका जो एक सुधरी इन्सानी सभ्यता की उन्नति के लिए जरूरी है।

असल यह है कि खुदा के भेजे हुए पैग़म्बर खुदा की बनाई हुई इस दुनिया के बाग़बान हैं जो इस दुनिया की चमनबन्दी करते रहते हैं और इसके पत्तों व टहनियों को छाँटते रहते हैं। जो सभ्यतायें उनकी मदद के बिन उग आई और उनकी सिंचाई और निगरानी के बिना उग आई, वह स्वतः उग आये जँगली पेड़ की तरह हैं, इसमें वह तमाम खराबियाँ होंगी जो जंगल के स्वतः उग आने वाले पेड़ों और झाड़ियों में पाई जाती हैं, सम्भावना यह है कि वह मीठे फल देने वाले छायादार पेड के बजाय कडवे या करौले फल देने वाला काँटेदार पेड़ ही होगा।

नबी प्रकृति के नबज़ देखने वाले और इन्सानियात के प्रवृत्ति को जानने वाले डाक्टर हैं जिस सभ्यता का खमीर अंबिया की तरकीब और उनकी सलाह के बिना तैयार हो उसमें कभी संतुलन नहीं हो सकता। उसके मिजाज़ का असंतुलन कभी न जायेगा। ऐसी सभ्यता जितनी उन्नति करेगी उसकी छिपी हुई खराबियाँ जो उसकी फितरत में दाखिल हैं उतनी ही उभरती जायेंगी। इसलिए हम देखते हैं कि दुनिया की तमाम विख्यात ऐतिहासिक सभ्यताओं के उत्थान का ज़माना सबसे ज़्यादा सामूहिक और चरित्रक ख़राबियों का ज़माना रहा है जिसमें सामूहिक व्यवस्था के आन्तरिक अवगुण और असमानता धरातल पर उभर आती हैं। तमाम मानव सभ्यताओं के उत्थान के इसी दौर में पति–पत्नी के सम्बन्धों की ख़राबी, घरेलू जीवन की ख़राबी, वर्ग–भेद, नैतिक बीमारियाँ तथा सामूहिक अव्यवस्था सबसे अधिक बढ़ जाती हैं और उस सभ्यता की समाप्ति का समय करीब हो जाता है, मानो उसके उत्थान और उसकी बर्बादी का ज़माना एक ही होता है।

बहुत से लोग इस हकीकत से वाकिफ नहीं हैं कि अक़ायद (विश्वास) सभ्यता की मज़बूत बुनियाद हैं। जिस सभ्यता की बुनियाद ऐसी बातों पर न हो जो सर्वमान्य हों और यथार्थ हों, वह सभ्यता बेबुनियाद और बच्चों का खिलौना है। वह्इ (ईश्वाणी) और रिसालत (दूतता) ही सही आस्था प्रदान करते हैं। फिर उसको स्थिरता व मजबूती देते हैं इन्हीं के द्वारा इन्सान को आचरण और सम्मेलन के लिए ऐसी आधारभूत सर्वमान्य बातें प्राप्त होती हैं जो आसमान व ज़मीन की तरह पायदार और पहाड़ों की तरह स्थिर होती हैं। उन्हीं की बुनियाद पर सभ्यता व संस्कृति की पूरी इमारत खड़ी होती है। आचरण व समूह व समाज में वही बुनियाद का काम देते हैं। जब किसी कौम के हाथ से वह्इ व रिसालत का रिश्ता छूट जाता है, या

शुरू से ही अंबियां का दामन उसके हाथ नहीं आता तो फिर उसके नज़दीक हक़ीक़त, हक़ीक़त नहीं रहती। स्वतः स्पष्ट बातें, दृष्टिकोण (नज़रियात) बन जाते हैं, उसकी सामूहिक आइडियोलोजी, दिन–रात, सुबह–शाम बदलती रहती है। ज्ञानमयी यथार्थ बदलते रहते हैं। नैतिक शब्दावलियों में परिवर्तन होता रहता है और नैतिक दर्शनशास्त्र निरस्त होते रहते हैं। अच्छाई–बुराई, नेकी व फसाद का कोई स्तर बाक़ी नहीं रहता। कल जो चीज़ शिष्टाचार थी आज वह अशिष्टता गिनी जाती है। आज जिस का नाम अत्याचार है कल न्याय बन जाता है। चीज़ों की हक़ीक़त के फर्क से जेहन अपरिचित हो जाते हैं। उस समय उस कौम का मूल बिगड़ जाता है। उसकी नैतिक अनुभूति झूठ हो जाती है। आज़ादी के पर्दे में विचारों का घोर बिखराव और कर्म का विरोध पैदा होता है। अन्ततः उसमें वह अनारकी (अराजकता) और नैतिक इन्कार की प्रवृत्ति जन्म लेती है जो उस क़ौम का जीना दूभर कर देती है और स्वयं उसकी बनाई हुई धरती की जन्नत को उसके लिए जहन्नम (नर्क) और उसको दुनिया की दूसरी क़ौमों और सभ्यताओं के लिए प्लेग की महामारी बना देती है।

तमाम मानव संस्कृतियों और सभ्यताओं का इतिहास पढ़ जाइये। उनके सामूहिक और नैतिक रोगों और अन्ततः उसकी तबाही का असल कारण धार्मिक व नैतिक विश्वास व नजरियात की यही अस्थिरता, सर्वमान्य बातों की यही कमी और अच्छे–बुरे के स्टैंडर्ड्स का यही परिवर्तन पाया जायेगा। शुद्ध प्रवृत्ति, राष्ट्रीय चलन व परम्परायें नयी पुरानी दीक्षा कुछ दिनों ज़रूर इसकी हिफाजत करती है, मगर यह बहुत कमजोर किस्म की चीजें हैं यह नेशन के संकट तथा अनैतिकताओं और अव्यवस्थाओं का मुकाबला नहीं कर सकतीं। अनैतिकताओं और अव्यवस्थाओं के पीछे उनको जायज तथा बेहतर

करार देने के लिए अनेक प्रकार के नैतिक व सामूहिक फलस्फे होते हैं जिनकी ताक़त फितरत की आवाज़ को दबा देती है और राष्ट्रीय परम्पराओं और तहजीब के तिलिस्म (जादू) को भी तोड़ देती है और धीरे–धीरे उस कौम का दामन हर प्रकार की सर्वमान्य बातों और हर ऐसी चीज़ से खाली हो जाता है जो अच्छे–बुरे और नैतिक व अनैतिक की जाँच के लिए तराज़ू का काम दे सके।

इसी प्रकार वह्इ व रिसालत की शिक्षाओं से मुँह फेरना या विमुख हो जाना अथवा उनसे अनभिज्ञता का लाजिमी नतीजा यह है कि इस जीवन की परिकल्पना शुद्ध भौतिकवादी और इन्सान के अपने बारे में दृष्टिकोण सर्वथा हैवानी होकर रह जाये। क्योंकि इन्सान के पास अपने तौर पर जितने मालूमात के साधन हैं वह इसके अलावा और कोई सूचना नहीं देते। इनसे इस ज़िन्दगी के अलावा इन्सान की किसी और ज़िन्दगी का पता चलता, और कोई हकीक़त इसके अलावा समझ में नहीं आती कि वह एक "बोलने वाला जानवर" (हैवाने नातिक) है। यह अक़ीदा और स्वीकारोक्ति स्वभाविक रूप से इन्सान को हैवानियत के उस मकाम पर पहुँचा देता है, जहाँ शारीरिक स्वाद व दुख के एहसास के अलावा तथा कोई नैतिक सूझ और स्वार्थ व लाभ की पूजा के अलावा कोई मज़हब व दर्शनशास्त्र नही रहता।

नबूवत (दूतकर्म) ही इन्सान को अपनी बरतरी व शराफ़त और इन्सानियत का शऊर प्रदान करती है और इसके साथ यह समझ भी पैदा करती है कि वह एक महाशक्ति के अधीन है, उसके सामने अपने तमाम कर्मो व आचरण के लिए उत्तरदायी है। यह संसार उसी की सल्तनत और इस दुनिया के रहने वाले उसी के बन्दे हैं। वह इस सल्तनत में दखल देने (तसर्रुफ) और इस दुनिया में रहने वालों के

साथ मामला करने में आज़ाद नहीं हैं।

फिर नबूवत (दूत कर्म) सिर्फ नैतिक अनुभूत को जगाने पर बस नहीं करती बल्कि इन्सान को एक व्यवस्था पत्र तथा पूर्ण नैतिक नियमावली देती है। अच्छे आचरण पर उससे खुदा की प्रसंनता और उसकी खुशनूदी के महल व मक़ाम का वायदा करती है जिससे बेहतर कर्म के लिए कोई उत्प्रेरक (मोटीवेटर) साबित नहीं हुआ। अनाचार तथा कानून तोड़ने पर उसके अज़ाब (दण्ड) और कहर से डराती है जिससे अधिक कामयाब रोक दुनिया में मौजूद नहीं। खुदा के हाजिर (सर्वव्यापी) व नाजिर, (सर्वदृष्टा) सब कुछ सुनने वाला, सब कुछ देखने वाला, गैब की ख़बर रखने वाला होने का यक़ीन उसके मन–मस्तिष्क में बिठा देती है। जिससे बढ़कर इन्सान को कन्ट्रोल में रखने वाली कोई नैतिक शक्ति आज तक खोजी नहीं जा सकी। यह ताक़त है जो इन्सान को अकेले व दुकेले, बस्ती और वीराने में क़ानून का पाबन्द बनाती है जो पुलिस और फौज की ताक़त के बिना बड़े–बड़े जुर्म और सदियों की बुरी आदतों को जड़ से उखाड़ देती है जो ज़बान के एक इशारे से पूरी–पूरी क़ौम से मुँह लगी शराब छुड़ा देती है जो अपराधियों को बस्ती और वीरानों से खींच कर अदालत में हाजिर करती है और उनकी ज़बान से अपने जुर्म को इकबाल कराती है।

जिस नैतिक व्यवस्था के पीछे नबूवत की यह ताक़त न हो वह सिर्फ किताबी फलस्फा (पुस्तकीय दर्शन) है जो एक मामूली से जुर्म को भी नहीं रोक सकता[1] और अत्यन्त सीमित क्षेत्रफल में भी कोई

(१) इसकी बेहतरीन मिसाल अमेरीका की शराब पर रोक की नाकामी और शराब को अवैध करार देने वाले कानून का निरस्तरीकरण है। इस अभियान और कानून पर महाशक्ति यू०एस०ए० ने बेहद दौलत व सरमाया लगाया।..........

पवित्र नैतिक माहौल नहीं पैदा कर सकता।

जो सभ्यता इस आसमानी आचार संहिता से वंचित हो, और जिस क़ौम की कोख इस धार्मिक आत्मा से ख़ाली हो, वह दुनिया ही में जहन्नम (नर्क) के गढ़े के किनारे खड़ी है। उसका भौतिक व ज्ञानमयी विकास, कला कौशल व राजनीति पर उसकी विजय, सृष्टि पर उसकी जीत, उसका बाह्य शिष्टाचार, उसके कला कौशल कोई चीज़ उसको इस गढ्ढ़े में गिरने से रोक नहीं सकती, बल्कि यह सब चीजें मिलकर उसके गिरने की रफ्तार को और तेज कर देंगी। जो क़ौम वह्इ (ईशवाणी) की रक्षा और नबियों की सुरक्षा से वंचित हो उसके यही ज्ञान व शिष्टाचार (जो नबियों के मार्गदर्शन के बगैर जन्म लेते हैं, और जिनकी खमीर (माटी) ख़ुदा को पहचानने वाला और पवित्र नहीं है) उसके नैतिक पतन में सहायक तथा उसके सक्रिय कार्यकर्ता बन जाते हैं और अभद्रता के प्रचार–प्रसार में, बेहयाई और अनाचार व दुर्व्यवहार को फैलाने में, सभ्यता व लज्जा के पुराने दृष्टिकोण को बदलने और उनको दोषमुक्त करार देने तथा अपराध व अभद्रताओं को आकर्षक करने में, शैतान के एजेन्ट की हैसियत से

..........अनुमान है कि शराब के खिलाफ प्रचार व प्रसार में सिर्फ छः वर्षों के भीतर साढ़े छः करोड़ डालर खर्च हुए और जो साहित्य तैयार किया गया उस पर नौ अरब पेज छापे गये। क़ानून को लागू करने के सिलसिले में दो सौ आदमी मारे गये ५३४३३५ कैद किये गये। एक करोड़ साठ लाख पौंड के जुर्माने लगाये गये, चालीस करोड़ चालीस लाख पौंड मालियत की जायदाद ज़ब्त की गयी। लेकिन इसके बावजूद अमेरीका की हुकूमत व क़ानून और उसकी समाज सुधारक संस्थायें और संसाधन देशवासियों को क़ानून की पाबन्दी और शराब पीने से परहेज पर आमादा न कर सकीं। बल्कि इसके विपरीत उसमें शराब पीने का जुनून और अधिक पैदा कर दिया और अन्ततः चौदह वर्षों के बाद सन् १९३३ में अमेरीकी लोकतंत्र को बाध्य होकर इस क़ानून को निरस्त और शराब पीने को वैध करार देना पड़ा। (विस्तार के लिए देखें "तनकीहात" किताब का लेख "इन्सानी क़ानून और इलाही क़ानून")।

काम करते हैं, यूनान व रोम तथा आधुनिक योरोप का सामूहिक नैतिक व साहित्यिक इतिहास इसका गवाह है।

इन्सान की आज़ादी की इस राह में क़ानून भारी पत्थर साबित हो सकता था मगर उसको इन्सान ने अपने रास्ते से इस तरह हटा दिया कि वह खुद कानून बनाने वाला बन गया। जब क़ानून का स्रोत आसमानी किताब व वह्इ (ईशवाणी) के बजाय इन्सानी ज्ञान व अनुभव करार पाया और क़ानून बनाने वाला बजाय खुदा के इन्सान की बहुसंख्यक राय या ताक़त को माना गया तो रास्ते की सारी रूकावटें दूर हो गयीं। मानव रचना में काम और क्रोध तथा जानवरपन दाख़िल है, वह स्वभावतः बन्धनों से आज़ाद रहना चाहता है, वह प्रवृत्ति से भोगी और आराम तलब है जब उसके साथ ख़ुदा का भय और अपनी जिम्मेदारी का एहसास भी न हो तो उसको कौन सा उत्प्रेरक ऐसा क़ानून बनाने पर आमादा कर सकता है जो खुद उस पर बन्धन और व्यवस्था लागू करे, उसकी आज़ादी ले ले और उसके ऐश को ऐसा कर दे कि तबीयत उधर झुके नहीं, फिर जब यह क़ानून बनाने वाले इन्सान हों जिनकी परवरिश उन अस्थिर अक़ीदों (विश्वासों) उन उल्टे दृष्टिकोणों, उस विकारयुक्त मान्सिकता और उन व्यभिचारों में हुई हो जिनका ऊपर उल्लेख हुआ, तो उनसे ऐसे कानून बनाने की आशा करना कहाँ तक उचित है? जो अपराधों को रोके और जिसमें बुराइयों तथा दुराचारों के घुसने के लिए कोई रूकावट न हो, उनसे यह आशा रखनी चाहिए कि वह अपनी क़ानून बनाने की ताक़त और अपनी सत्ता से अनाचार को क़ानूनी हैसियत देंगे, उनके दौर में अनाचार क़ानून बन जायेंगे[१] और आचरण क़ानून के खिलाफ करार

(१) आधुनिक इतिहास में भी इसकी मिसालें मिलती हैं। नाज़ी दौर से पहले की बात है कि जर्मन में छः साल तक लड़कों के साथ दुष्कर्म का........

पायेंगे। विकृत और **अर्ध** विकृत **कौमों के इतिहास** में यह घटना अकेली नहीं है कि बड़े–बड़े अपराध जनमत **की** ताक़त से वैद्य, **बेहतर** और लोकप्रिय बन गये। पवित्रता सोसाइटी का जुर्म बन गयी। **पवित्र लोगों के लिए इस मुजरिम** सोसाइटी में रहने की गुँजाइश न **रही और जनमत ने यही इलजाम देकर** उनके निकाले जाने की मांग **की:–**

अनुवाद– *लूत के मानने वालों को अपनी बस्ती से निकाल दो यह लोग बड़े पवित्र रहना चाहते हैं।*

(सूरः अं–नमल ५६)

नबी दुनिया में जो सभ्यता क़ायम करते हैं उसकी यह विशेषता है कि वह क़ानून बनाने का हक इन्सान को नहीं देती उसकी सभ्यता में इन्सान गुनहगार तो हो सकता है और खिलाफे क़ानून भी कर सकता है, उसको उसकी सभ्यता में इसकी सज़ा झेलनी पड़ेगी, लेकिन वह अल्लाह के क़ानून में लेश मात्र संशोधन के लिए भी सक्षम नहीं। उसके हलाल व हराम ज़मीन व आसमान और सूरज और चाँद की तरह पायदार और प्रकृति के कायदा की तरह अपरिवर्तनशील हैं, **बल्कि** वह **शुद्ध प्रकृति** है जिसमें परिवर्तन नहीं।

अनुवाद– *अल्लाह की बनाई हुई प्रकृति जिस पर उसने इन्सानों को* ***पैदा*** *किया, अल्लाह की बनाई हुई संरचना बदली नहीं जा सकती,* ***यही*** *दीन सीधा है।* (सूरः अर्रूम ३०)

........प्रोपैगन्डा किया गया। और यह महान सुधारात्मक कार्य उन सज्जन ने किया **जो दुनिया** की लिंगीय सुधार कार्यकारिणी के **अध्यक्ष रह चुके थे**, अन्ततः देश की **विधायिका ने** बहुमत **से यह बिल** पास कर दिया कि **यह कर्म कानूनी जुर्म नहीं है, सिर्फ शर्त यह है कि दोनों राजी हों। मौलाना अबुल आला मौदूदी के रिसाला "पर्दा" में इसकी और भी मिसालें मिलेगीं।**

इसलिए इस सभ्यता में अभद्रता, गुनाह, भोग–विलास के साधन व उत्प्रेरक, खेल तमाशे और ग़फ़लत के साधन और तमाम नैतिक अपराध तथा जुर्म को हवा देने वाले कर्म व व्यस्ततायें हमेशा वर्जित रहेंगे। और जब तक इनकी प्रकृति न बदले (और इनमें से कोई चीज बदलने वाली नहीं) उनका हुक्म भी न बदलेगा।

मानवीय क़ानून का मक़सद केवल किसी ख़ास व्यवस्था की स्थापना लोक शान्ति की रक्षा और देश वासियों में व्यवस्था कायम करना होता है, इसलिए वह इन्सान के उन कर्म व आचरण से बहस करते हैं जो सोसाइटी और सार्वजनिक जीवन को प्रभावित करें, उनको वैक्तिक आचरण तथा आंतरिक खराबियों से बहस नहीं होती। इन क़ानूनों की हैसियत नैतिकता के एक शिक्षक और सुधारक की नहीं होती बल्कि पुलिस और मजिस्ट्रेट की होती है।

लेकिन आसमानी क़ानून का उद्देश्य मात्र व्यवस्था कायम करना नहीं है, बल्कि इन्सानों को पवित्रताप्रिय और संयमी बनाना है। इसलिए इनकी नियमावली में कुछ ऐसी चीजें, ऐसे आचरण ऐसे कार्य वर्जित होंगे जिनकी तरफ दुनियावी क़ानून बनाने वालों का ध्यान ही नहीं जायेगा। इनमें ऐसे तमाम अवरोध बन्द होंगे जिनसे बुराई और अनैतिकता सोसाइटी में दाख़िल होती है। जिनसे प्रवृत्ति में आराम तलीबी आती है, कौम में शारीरिक विश्राम और विलास पैदा होती है, आचरण हीनता और आपराधिक प्रवृत्तियां पैदा होती हैं जिनसे सोसाइटी को वह घुन लगता है जो अन्दर ही अन्दर उसकी जड़ों को खोखला कर देता है, ऐसी सब चीज़ें वर्जित होंगी जो उसके नैतिक स्तर के अनुरूप नहीं हों या उसके धार्मिक सिद्धान्त के अनुकूल नहीं हों। उसकी सभ्यता संगीत को बढ़ावा नहीं देगा, मौज मस्ती और तफरीह

में लीनता को पसन्द न करेगा। श्रृंगार तथा गर्व और धन–दौलत की होड़ को अच्छी नज़र से न देखेगा, यहाँ तक कि बेफायदा और अनावश्यक निर्माण जिनका मक़सद शान व शौकत के प्रदर्शन और आनन्द व मनोरंजन के अलावा कुछ न हो, इस सभ्यता में वर्जित होंगे। सोने चाँदी के बर्तनों का इस्तेमाल पूर्णरूप से और इनके आभूषण और रेशम का इस्तेमाल मर्दों के लिए वर्जित होगा। तस्वीरें और पत्थर के बुत और इन्सानी मूर्तियाँ सर्वथा हराम और वर्जित होंगी।

मानवीय कानून में केवल शाब्दिक प्रतिबन्ध ज़रूरी होती है और अपराधों से रोकने वाला सिर्फ सज़ा या पुलिस से भयभीत होता है, जहाँ यह रूकावटें मौजूद न हों वहाँ अपराध करने में कोई चीज़ रूकावट नहीं बनती। दिलों में कानून की गरिमा और सम्मान नहीं होता। इसलिए कि वह अपने जैसे इन्सानों का बनाया हुआ होता है जिनकी पवित्रता की कोई कल्पना लोगों के मन में नहीं होती। प्रायः कानून बनाने वाले सत्ता और क़ानून साज़ी के पद पर अपनी जुगाड़ या दौलत या ताक़त अथवा चुनावी प्रयासों की वजह से क़ाबिज हो जाते हैं और नैतिक रूप से उनका स्तर सैद्धान्तिक तौर से उनकी सीरत (चरित्र) आम लोगों के मुकाबले में कुछ बुलन्द नहीं होती, बल्कि कभी–कभी वह घोर कदाचारी, सिद्धान्तविहीन, लालची, रिश्वतखोर और कमीने होते हैं। इसलिए कभी तो वह अपने उद्देश्यों और फायदों के लिए अपनी कमजोरियों तथा दुराचरणों को क़ानूनी सनद देने के लिए और कभी जनता और वोटरों की तुष्टिकरण के लिए नियम विरुद्ध क़ानून बनाते हैं और इसमें समय की मांग व इच्छाओं के अनुकूल संशोधन करते रहते हैं। जनता उनके क़ानून को दबाव में स्वीकार करती है और उनमें एक बड़ा वर्ग इनसे छुटकारा हासिल

करने की कोशिश करता है और अपनी अकलमन्दी और बहानों से इनको असमर्थ करने की कोशिश करता है। और कानून तथा देशवासियों के बीच खींचतान जारी रहती है।

इसके विपरीत वह्ई (ईश्वाणी) व रिसालत (दूतता) का लाया हुआ क़ानून ख़ुदा और रसूल पर ईमान लाने वालों के लिए उतना ही पवित्र और माननीय होता है जितनी उनकी मज़हबी (धार्मिक) किताब और खुद उनका पैग़म्बर। वहाँ इसको अपनी होशियारी से हराने, विवश करने और इसको तंग और दिक करने का कोई सवाल ही नहीं होता. है कि ऐसा करना सर्वथा कुफ़्र व बग़ावत है।

अनुवाद— *और निःसंदेह जिन लोगों ने हमारी आयतों को हराने की कोशिश की उनके लिए सख़्त दुःख देने वाले अज़ाब (दण्ड) है।*

(सूरः सबा ५)

वहाँ सिर्फ क़ानून की लफ़्ज़ी पाबन्दी और बाहरी व शारीरिक रूप पर्याप्त नहीं बल्कि कानून की पाबन्दी की आत्मा भी ज़रूरी है क्योंकि क़ानूनसाज़ और हाकिम (अल्लाह) गैब (प्रोक्ष) से वाकिफ़ है, अन्दर बाहर से आगाह है और उसको ज़ाहिरी क़ानूनी पाबन्दी से दुनिया के हाकिमों की तरह धोखा नहीं दिया जा सकता।

अनुवाद-- *उन कुर्बानियों के गोश्त और ख़ून अल्लाह तक नहीं पहुँचते बल्कि तुम्हारा तक़वा (परहेजगारी) पहुँचता है।*

(सूरः अल्–हज्ज ३७)

जिस क़ानून में, यह विशेषताएं पायी जायेंगी उसका सभ्यता व समाज पर क्या असर होगा? सोसाइटी में किस दर्जे की पवित्रता व लज्जा, अमानत व दियानत, तहज़ीब व हया पैदा करेगा? और जब

उन लोगों के हाथों में हुकूमत आयेगी और उनको धरती के किसी भाग में सत्ता प्राप्त होगी जो धर्म व समाज आचरण व रहन—सहन तथा सभ्यता के बारे में ऐसे सिद्ध किये हुए यथार्थ अडिग अक़ायद (विश्वास) रखते हैं जो उनको ज्ञान और जानकारी के अमर और स्थायी, साफ और सुरक्षित स्रोत से हासिल हुए हैं और जो प्रकृति के अटल कानून की तरह अपरिर्वतित व अनिरस्त हैं, जिनकी ट्रेनिंग उन आचरण में हुई जो इन्सानी लालच से पाक और खुदा के गुणों की छाया है, जिनका क़ानून अल्लाह की शरीयत का दूसरा नाम है जो न्याय व इन्साफ के जिम्मेदार और अल्लाह के गवाह हैं तो उनकी हुकूमत और सत्ता के परिणाम क्या उससे भिन्न होंगे? जिसकी कुर्आन ने भविष्यवाणी की है:—

अनुवाद— *यह वे लोग हैं कि अगर धरती पर हम इन्हें सत्ता दें, तो वे नमाज़ कायम करेंगे, और ज़कात देंगे, और भली बात का हुक्म करेंगे और बुराइयों से रोकेंगे।*

(सूरः अल्—हज्ज ४१)

इनसे स्वाभाविक रूप से जो सभ्यता और जीवन—शैली वजूद में आयेगी, क्या उसकी पवित्रता और बुलन्दी में किसी को शक हो सकता है? इसके विपरीत जो सभ्यता उन लोगों के हाथों क़ायम हो, और जो सोसाइटी उनके द्वारा अस्तित्व में आये, जो मज़हब, आचरण व समाज और मानव—सभ्यता के या तो सिरे से कुछ तथ्य और सर्वमान्य बातें न रखते हों या उनके पास कुछ खोज हों जिनका कलैन्डर सूरज के चक्कर के साथ बदलता रहता हो, जिनके पास अच्छे बुरे की परख के लिए कोई स्थायी पैमाना और नैतिक मूल्यों के वज़न के लिए कोई न्यायसंगत तराज़ू न हो, जिनके यहाँ नैतिकता

स्वार्थ व हित का नाम हो और जिनका क़ानून स्वयं उन्हीं का बनाया हुआ हो और उनके ज्ञान व अनुभव और ज़रूरत व हित के अधीन हो, जिनकी हुकूमत वैयक्तिक या नसली या क़ौमी सत्ता का साधन और उसका सेवक हो और उसका दुनिया में कोई सुधारक मिशन न हो, जिसकी बुनियाद किसी सिद्धान्त और नैतिक दर्शनशास्त्र पर न हो, तो इस सभ्यता और इस सोसाइटी में क्या इन्सान को अपनी प्रवृत्ति की मंशा पूरी करने और अपने इच्छित कमाल तक पहुँचने में सहायता मिल सकती है? और अगर उसने कुछ उम्र पायी और उसकी जड़े ज़मीन में गहरी चली गयीं तो क्या इन्सान अपनी असली फ़ितरत पर क़ायम भी रह सकेगा? और उसको अपना इच्छित कमाल याद भी रहेगा? इस सभ्यता को मानव सभ्यता कहने की वजह इसके अलावा क्या हो सकती है कि वह सूरत में इन्सान हैं यद्यपि वह अपनी जीवन शैली में बेजान मशीनें, अपनी सोच और ट्रेनिंग के लेहाज से बेशऊर जानवर और अपने कार्य के लेहाज से खूँख्वार दरिन्दे हैं।

इन्सानियत की ख़ैर व बरकत (भलाई व बढ़ोत्तरी) और सभ्यता के विकास का बुनियादी कारण

नबी केवल अल्लाह की सही पहचान और इल्मुलयक़ीन (विश्वासात्मक ज्ञान) ही के केन्द्र व स्रोत नहीं हैं बल्कि इसके साथ ही वह मानव समाज को एक और बहुमूल्य दौलत भी प्रदान करते हैं जिस पर इन्सानियत की ख़ैर व बरकत और सभ्यता का निर्माण व विकास का पूरा-पूरा दारोमदार है और वह बहुमूल्य दौलत है, भलाई से मुहब्बत और बुराई से नफरत की पवित्रतम भावना और शिर्क की शक्तियों और उसके केन्द्र को टुकड़े-टुकड़े करने और भलाई विस्तार व विकास के लिए त्याग की भावना और इन्सान की तमाम तरक़्क़ियों,

सरबुलन्दियों और न भुलाये जाने वाले कीर्तिमानों का असल और मूल साधन यही पवित्र भावना और संकल्प ही है क्योंकि तमाम कारक व संसाधन, साज व सामान, प्रयोग और खोज की संस्थायें मनुष्य के संकल्प और इरादे के अधीन हैं। सारे कारनामों की बुनियाद यह है कि इन्सान इरादा करे। इस भलाई का असल उद्‌गम हमेशा नबियों की शिक्षायें रही हैं। उन्होंने अपने अभ्युदयकाल में अपनी क़ौम व उम्मत (समुदाय) और अपने पूरे समाज में भलाई की मुहब्बत और बुराई से नफ़रत की भावना को बढ़ावा दिया। सत्य का समर्थन और और असत्य का विरोध उनकी तबीयत और फितरत में दाखिल करने की कोशिश की और लम्बे इन्सानी इतिहास में जब भी यह भावना कमज़ोर पड़ी इन्सानी प्रकृति में परिवर्तन आया। उनमें असभ्यता के आसार ज़ाहिर हुए जैसा कि हम कुर्आन में बयान किये हुए अनेक क़ौमों के हालात में देखते हैं। नबियों ने तुरन्त इसका इलाज किया और संगदिली व दरिन्दगी को रहमत और शराफ़त व इन्सानियत में बदल दिया, उन्होंने अपनी उच्च शिक्षा का प्रसार किया, इसके लिए लगातार प्रयास किया, अपने आराम की परवाह न की, मान सम्मान का ख़्याल नहीं किया। इसी निरन्तर व हृदय विदारक मेहनत व मशक्कत के नतीजे में इन्सानियत से खाली हैवानों और फाड़ खाने वाले दरिन्दों में ऐसे नेक दिल लोग पैदा हुए जिनके अस्तित्व से और जिनके व्यवहार से दुनिया महक उठी, मानवता का इतिहास गौरवान्वित हो उठा, जो प्रतिष्ठा व पराकाष्ठा में फ़रिश्तों (देवदूतों) से भी आगे निकल गये। इन्हीं मिसाली आत्माओं की बरकत से तबाह व बर्बाद होने वाली इन्सानियत को नया जीवन मिल गया, न्याय व इन्साफ का दौर हो गया। कमज़ोरों में ताकत वालों से अपना अपना हक़ वसूल करने की हिम्मत व ताक़त पैदा हुई, भेड़ियों ने बकरियों की रखवाली की,

फिज़ाओं में करूणा व दया की खुनकी छा गयी, प्रेम व मुहब्बत की खुश्बू फैल गयी, विनम्रता का बाज़ार गरम हो गया, दुनिया में जन्नत की दुकानें सज गयीं, ईमान व यक़ीन (आस्था व विश्वास) की सुगन्धित हवाएं चलने लगीं, मानव आत्मायें ईर्ष्या व द्वेष की जकड़न से आज़ाद हो गईं। दिल भलाइयों की तरफ एसे खिंचने लगे जैसे चुम्बक की तरफ लोहे के टुकड़े।

मानव सभ्यता और उसके विकास पर इस पवित्र और पावन वर्ग के जितने एहसान हैं किसी और वर्ग के नहीं। सहृदयता और इनायतों की खुनुक व मन्द छाया इन्सानों की इज़्ज़त उनकी शराफत, उनकी संयमता उनके सन्तुलन और पूरे जीवन पर छाया हुआ है। इन्हीं इनायतों की छाया में मानव--जीवन के अस्तित्व की सम्भावना है। अगर अंबिया न होते तो मानवता की नवका अपने ज्ञान, हिकमत और सभ्यता समेत तूफान की भेंट चढ़ जाती और भू–तल पर इन्सानों के बजाय जँगली जानवरों और दरिन्दों के रेवड़ कुलेलें भरते नज़र आते, जो न अपने ख़ालिक़ और रब (सृजक व पालनहार) को पहचानते, न दीन व नैतिकता से अवगत होते, न रहमत व मुहब्बत का एहसास रखते और न खाना–पानी या घास--चारा से ऊपर कोई बात उनके ज़ेहन में आती।

आज दुनिया में जितने भी उच्च मानव मूल्य, नर्म एहसास, उत्तम व उच्च नैतिक शिक्षायें, सही व लाभदायक ज्ञान या असत्य से टकराने के संकल्प पाये जाते हैं, इन तमाम के इतिहास का सिलसिला वहइ (ईशवाणी), नबियों की शिक्षाओं, उनका प्रचार–प्रसार, उनके प्रयास और उनके सच्चे साथियों व उनके बाद के बुज़ुर्गों ही पर खत्म होता है। दुनिया (आदि काल अन्त तक) उन्हीं से लाभ उठाने पर

मजबूर रही है। उन्हीं की फैलाई हुई रौशनी में क़दम बढ़ाती रही है। उन्हीं की बनाई हुई मजबूत इमारत में सर छुपाती और जीवन व्यतीत करती रही है, और रहेगी। इन पवित्र आत्माओं पर हजार बार सलामती हो:—

बहार अब जो दुनिया में आई हुई है,
यह सब पौध उन्हीं की लगाई हुई है।

दीन व शरीअत के बारे में नबियों की ग़ैरत व अडिगता

नबी उन अक़ाएद (विश्वासों), दअ्वत व संदेश और शरीअत के बारे में जिनको वह लेकर आते हैं बड़े ग़ैरतमन्द और प्रवर सूझ—बूझ वाले होते हैं। वह किसी हालत में भी (चाहे उनकी कामयाबी और लोकप्रियता की ही मसलहत का तकाजा क्यों न हो) इसके लिए तैयार नहीं होते कि अपनी दावत व शरीअत (आवाहन व कानून) में कोई संशोधन या परिवर्तन सहन कर लें। उनके यहाँ जो दिल में हो उसके विपरीत ज़ाहिर करने और अपने सोच को बदल देने की गुँजाइश नहीं होती। क़ुर्आन अपने अन्तिम सन्देष्टा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को सम्बोधित करके कहता है:—

अनुवाद— *अतः आपको जिस काम का हुक्म दिया गया है उसे साफ सुना दीजिए, और मुश्रिकों की परवाह न कीजिए।*

(सूरः अल्हिज्र ६४)

अनुवाद— *ऐ रसूल! आपके रब की ओर से आप पर जो कुछ उतारा गया है, उसे पहुँचा दीजिए, और अगर ऐसा न किया तो आपने उसका पैग़ाम नहीं पहुँचाया और अल्लाह आपको लोगों की बुराइयों से*

बचाए रखेगा।

(सूरः अल–माईदः ६७)

अनुवाद– *ये लोग चाहते हैं कि आप नर्म पड़ जाएं, तो ये भी नर्म हो-जाएं।*

(सूरः अल–कलम ६)

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तौहीद की सोच बल्कि इस्लाम के तमाम बुनियादी अक़ायद यहाँ तक कि दीन के अरकान व फरायज़ (स्तम्भ व कर्तव्य– कलमा, नमाज, रोजा आदि) के बारे में भी लचकदार और सुलह वाला रवैया न था जो राजनेताओं का (जो स्वतः अपने को यथार्थवादी और व्यावहारिक इन्सान समझते हैं) हर ज़माने में विशिष्टता रही है। शहर तायफ की विजय के बाद, कुरैश के बाद, अरब के दूसरे ज़बरदस्त कबीला सक़ीफ़ का शिष्ट मण्डल इस्लाम कुबूल करने के बाद अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सेवा में उपस्थित होता है और प्रार्थना करता है कि लात नामी मूर्ति को (जिसकी वजह से तायफ़ को मक्का के बाद केन्द्रत्व और पवित्रता हासिल थी) तीन साल तक अपने हाल पर रहने दिया जाये और दूसरी मूर्तियों की तरह इसके साथ व्यवहार न किया जाये। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम साफ इन्कार फरमा देते हैं। शिष्ट मण्डल के लोग दो साल, फिर एक साल की मुहलत माँगते हैं, आप बराबर इनकार करते हैं, यहां तक कि वह इसपर उतर आते हैं कि हमारे ताएफ़ वापस जाने के बाद सिर्फ एक महीने की मोहलत दे दी जाए लेकिन आप उनकी अंतिम प्रार्थना स्वीकार करने के बजाय अबू सुफियान पुत्र हर्ब (जिनकी तायफ़ में रिश्तेदारी थी) और सक़ीफ़ कबीला ही के एक व्यक्ति मुगीरः पुत्र शोअ्बा को आदेश देते हैं कि वह जायें और लात को ढा दें। शिष्टमण्डल के लोग एक प्रार्थना यह भी

करते हैं कि उन्हें नमाज़ से माफ़ रखा जाये। आप कहते हैं उस दीन में कोई भलाई नहीं जिसमें नमाज़ नहीं। इस वार्ता के बाद वह अपने वतन वापस लौटते हैं और उनके साथ अबूसुफियान और मुगीरः भी जाते हैं और लात को ढा देते हैं और पूरे सकीफ कबीला में इस्लाम फैल जाता है, यहाँ तक कि पूरा तायफ मुसलमान हो जाता है।

(ज़ादुलमआद खण्ड एक पेज ४५८, ४५९)

नबियों की विशेषता यह भी है कि वह अपने प्रचार प्रसार में और समझाने–बुझाने में वही शैली अपनाते हैं जो उनके आवाहन की आत्मा और नबूवत के स्वभाव से मेल खाती है। वह खुलकर और पूरी स्पष्टता के साथ आख़िरत की दावत देते हैं, जन्नत (स्वर्ग) और उसकी नेमतों और लज़्ज़तों का शौक दिलाते हैं। दोज़ख़ (नर्क) और उसके भयावह दृश्यों से डराते हैं। मानो वह निगाहों के सामने हैं। वह बौद्धिक दलीलों व तर्क के बजाय ग़ैब (अदृश्य) पर ईमान की मांग करते हैं।

उनका ज़माना भी भौतिक दर्शनशास्त्रों और दृष्टिकोणों से (जो उनके युग की सतह और हालात के अनुरूप होते हैं) एकदम ख़ाली नहीं होता, उस युग में भी कुछ (वर्गों) की विशेष शब्दावली होती है, वह उनसे अनभिज्ञ नहीं होते, वह यह भी खूब समझते हैं कि यह दर्शन शास्त्र और परिभाषिक शब्द सिक्का रायजुलवक्त (व्यवहृत सिक्के) हैं और इनका इस दौर में चलन है, लेकिन लोगों को करीब लाने और अपनी तरफ दावत देने के लिए वह इनसे काम नहीं लेते। वह अल्लाह पर उसकी सिफ़ात (गुण) व अफ़आल (कर्म) के साथ फ़रिश्तों पर, भाग्य पर (अच्छी हो या बुरी), मौत के बाद उठाये जाने पर ईमान लाने की दावत देते हैं। वह निःसंकोच यह ऐलान करते हैं

कि उनकी दावत कबूल करने और उन पर ईमान लाने का इनाम जन्नत (स्वर्ग) और खुदा की प्रसन्नता है।

दावत के सिलसिले में नबवी मिजाज व कार्यशैली का उत्तम उदाहरण उकब–ए–सानिया के बैअत (संकल्प) की घटना है। जब मदीना वासियों की एक संख्या जिनमें ७३ पुरूष और दो स्त्रियाँ थीं हज के लिए मक्का आये और उकबः के पास घाटी में इकट्ठा हुए। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अपने चचा हज़रत अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब के साथ (जो अभी तक मुसलमान नहीं हुए थे, पधारे। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कुर्आन की आयत का सस्वर पाठ (तिलावत) किया, एक ईश्वर की ओर दावत और इस्लाम की तरफ शौक दिलाया और फरमाया कि तुमसे मैं यह बैअत (संकल्प) लेता हूँ कि तुम मेरे साथ हिफाज़त और ख्याल रखने का वही मामला करोगे जो अपने घर वालों के साथ करते हो। अन्सार ने बअ़ेत की और आपसे यह वायदा लिया कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उनको छोड़कर फिर अपनी कौम में वापस न जायेंगे वह समझदार थे और इस संकल्प के दूरगामी और ख़तरनाक नतीजों से भली प्रकार वाकिफ़ थे। वह समझते थे कि वह तमाम करीबी कबीलों, बल्कि पूरे मुल्क अरब से दुश्मनी मोल ले रहे हैं। उनके एक अनुभवी साथी (अब्बास बिन इबादः अन्सारी) ने भी उनको आगाह और होशियार किया लेकिन उन्होंने जवाब में एक स्वर होकर कहा कि हम माल व जागीरें के नुकसान और अपने खानदान के महत्वपूर्ण व्यक्तियों के कत्ल हो जाने का खतरा मोल लेते हुए आपको ले जा रहे हैं। फिर अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से विभोर होकर उन्होंने निवेदन किया, ऐ! अल्लाह के रसूल अगर हमने वादा वफा कर दिखलाया तो हमें क्या मिलेगा।

ऐसे नाजुक मौके पर अगर खुदा के पैगम्बर की जगह कोई सियासी लीडर, कोई नेशनल लीडर या केवल सियासी सूझ–बूझ का कोई इन्सान होता तो उसका जवाब यह होता कि बिखराव के बाद अब तुम्हारा गठजोड़ होगा, एक कबीले की मामूली हैसियत के बाद अब पूरे अरब में तुम्हारे अस्तित्व को स्वीकार किया जायेगा और तुम एक ताकत बनकर उभरोगे। यह कोई काल्पनिक बात न थी, स्वयं इन मदीना वासियों में से एक कहने वाले ने इससे पूर्व कहा था किः–

"हम अपनी कौम को इस हाल में छोड़ कर आये हैं कि शायद ही किसी कौम में ऐसी दुश्मनी और फूट हो जैसा हमारी कौम में है, हमें उम्मीद है कि खुदा आपके द्वारा इनको जोड़ दे। अब हम उनके पास जायेंगे और आपकी यह दावत उनके सामने पेश करेंगे, और जिस दीन को हमने कबूल किया है उनको भी इसकी दावत देंगे। अगर खुदा आपकी ज़ात पर उनको जोड़ दे तो आपसे बढ़कर कोई सत्ताधारी और प्रतिष्ठित व्यक्ति न होगा।"

(सीरत इब्ने हिशाम पेज ४२६)

लेकिन अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उनके इस सवाल के जवाब में कि "ऐ अल्लाह के रसूल फिर हमें क्या मिलेगा?" सिर्फ इतना कहा कि "जन्नत"। उस समय उन्होंने निवेदन किया कि हुजूर हाथ बढ़ाइये। आपने अपना मुबारक हाथ बढ़ाया और उन्होंने बैअत कर ली।

(सीरत इब्ने हिशाम पेज ४४६)

इसी गैरत और नबियों वाले काम के पूरा होने का असर है कि पैगम्बर किसी शरई हुक्म (धार्मिक आदेश) में किसी तब्दीली के न रवादार होते हैं और न किसी हुक्म पर अमल किसी की सिफारिश और

असर से टाल देते हैं। वह निकट व दूर अपने पराये सब पर समान रूप से अल्लाह के हुदूद (सीमाओं) व आदेशों को लागू करते हैं। बनी मख़ज़ूम (कबीले का नाम) की एक महिला के बारे में जिसने चोरी का अपराध किया था, उसामा पुत्र जैद (जिन पर अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़ास मेहरबानी थी) सिफारिश करने के लिए उपस्थित हुए तो आपने क्रोधित होकर कहा कि क्या अल्लाह की निर्धारित सीमाओं के बारे में सिफ़ारिश करते हो? फिर आपने सम्बोधित क्या कि "ऐ लोगो! तुमसे पहले उम्मतें इसलिए ख़त्म हुई कि जब उनमें कोई प्रभावशाली व्यक्ति और खानदानी आदमी चोरी करता है तो उसको छोड़ देते और कोई कमज़ोर और मामूली आदमी चोरी करता तो उसे सज़ा देते। कसम है ख़ुदा–ए–पाक की अगर मुहम्मद की बेटी फातिमा भी चोरी करेगी तो मैं उसका हाथ काटने से संकोच न करूँगा।"

यही वह गैरत है जो नबियों के सत्संगियों (सहाबा) व उत्तराधिकारियों में ट्राँस्फर हुई। उन्होंने भी कामयाबी व नाकामी और नफा व नुक़सान से आँखें बन्द करके कुर्आनी शिक्षा, शरअई अहकाम (आदेशों) और इस्लाम के नियम–क़ानून की रक्षा की। इतिहास में इसकी शानदार मिसाल फारूक आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु की वह घटना है जो जबलः पुत्र ऐहम ग़स्सानी के साथ पेश आयी। वह कबीला अक्क व ग़स्सान के पाँच सौ लोगों के साथ मदीना आया। जब वह मदीना में प्रवेश किया तो कोई जवान व पर्दानशीन औरत ऐसी न थी जो उसको और उसके ज़र्क़ बर्क़ लिबास को देखने के लिए न निकल आई हो। और जब हज़रत उमर फारूक़ हज के लिए गये तो जब्लः भी साथ गया। वह काबा का तवाफ कर ही रहा था कि बनी फिजारः के एक व्यक्ति का पैर उसके लटकते हुए तहबन्द की कोर पर पड़

गया और वह खुल गया जब्लः ने हाथ उठाया और फिज़ारी की नाक पर जोर का थप्पड़ मारा। फिज़ारी न हज़रत उमर के यहाँ शिकायत की फारूक–ए–आज़म ने जब्लः को बुला भेजा। वह जब आया तो उसने पूछा कि तुमने यह क्या किया? उसने कहा कि हाँ, अमीरूल मोमिनीन! इसने मेरा तहबन्द खोलना चाहा था, अगर काबा का सम्मान रूकावट न डालता तो मैं इसके माथे पर तलवार का वार करता। हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फरमाया, तुमने इकरार कर लिया अब या तो तुम उस व्यक्ति को राज़ी कर लो वरना मैं किसास (बदला) लूँगा। जब्लः ने कहा कि आप मेरे साथ क्या करेंगे? हज़रत उमर ने फरमाया कि उससे कहूंगा कि तुम्हारी नाक पर वह वैसे ही चोट लगाए जैसी तुमने उसकी नाक पर लगाई, जब्ल ने हैरत से कहा कि अमीरूल मोमिनीन! यह कैसे हो सकता है? वह एक आम आदमी है, और मैं अपने इलाके और कौम का ताजदार (शासक) हूँ। हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फरमाया कि इस्लाम ने तुमको और उसको बराबर कर दिया, अब सिवाय तक़वा (परहेज़गारी) और आफियत के किसी और चीज़ की बुनयाद पर तुम उससे अफ़ज़ल नहीं हो सकते। जब्लः ने कहा कि मेरा ख़्याल था कि मैं इस्लाम कुबूल करके जाहिलियत के मुकाबले में ज़्यादा इज़्ज़त व एतबार वाला हो जाऊँगा। हज़रत उमर ने फरमाया, यह बातें छोड़ो। या तो इस व्यक्ति को राज़ी करो वरना किसास (बदला) के लिए तैयार हो जाओ।

जब्ला ने जब हज़रत उमर के यह तेवर देखे तो कहा कि मुझे आज रात गौर करने का मौका दिया जाये। हज़रत उमर ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की। रात के सन्नाटे और लोगों की लाइल्मी (नजानना) में जब्ला अपने घोड़ों और ऊँटों को लेकर सीरिया की तरफ रवाना हो गया। सुबह मक्का में उसका पता निशान न था। एक ज़माना के बाद

जब जुसामा पुत्र मसाहिक कनानी से जो उसके दरबार में शरीक हुए थे हजतर उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने उसके शाहाना ठाठ–बाट के हालात सुने तो सिर्फ यह फरमाया, "वह महरूम रहा। आख़िरत के बदले में दुनिया ख़रीद ली। उसकी तिजारत खोटी रही।"

(फुतूहुल बुल्दान पेज ४७२)

दावत की हिकमत (युक्ति)

इसका मतलब यह नहीं कि नबी दावत व तबलीग़ के सिलसिले में हिकमत से काम नहीं लेते। और लोगों से उनकी समझ के अनुसार बात नहीं करते। ऐसा नहीं है। यह तो कुर्आन की आयतों और पाक सीरत की बीसियों घटनाओं के विपरीत है।

अनुवाद– और हमने जो भी रसूल भेजे, उनकी अपनी क़ौम की भाषा के साथ भेजा, ताकि उन्हें स्पष्ट तरीके से (अल्लाह के आदेशों को) बयान करें।

(सूर: इब्राहीम ४)

भाषा का भावार्थ यहाँ कुछ वाक्यों और शब्दों में सीमित नहीं। वह शैली और समझाने के ढँग सब पर हावी है। इसका आकर्षक नमूना हज़रत यूसुफ के जेल में अपने दोनों साथियों से नसीहत (उपादेश) हज़रत इब्राहीम और हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के अपनी–अपनी कौम और अपने–अपने दौर के बादशाहों से संवाद में नज़र आता है। अल्लाह ने पवित्र कुर्आन में यह हिदायत दी है।

अनुवाद– ऐ पैग़म्बर लोगों को हिकमत से और अच्छी नसीहत से अपने 'रब' की राह की ओर बुलाइए और उनके साथ तर्क–वितर्क अच्छे तरीके से कीजिए। (सूर: अं–नहल १२५)

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम साहाब (मित्रों) को जब इस्लाम के प्रचार व प्रसार के लिए रवाना करते तो नर्मी, स्नेह और आसानी पैदा करने और खुशख़बरी देने का निर्देश देते। आपने हज़रत मआज पुत्र जबल और हज़रत अबू मूसा अशअरी रज़ियल्लाहु अन्हुमा को यमन भेजते हुए वसीयत की "आसानी पैदा करना सख़्ती न करना, खुशख़बरी देना, वहशत इख़्तियार करने वाला न बनना और खुद अल्लाह ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को सम्बोधित करते हुए कहा–

अनुवाद– *ऐ मुहम्मद अल्लाह की रहमत से आपका स्वभाव उन लोगों के लिए नर्म है, और अगर आप तेज मिज़ाज (क्रूर स्वभाव), सख़्त दिल होते, तो यह आपके पास से भाग जाते।*

(सूरः आलि इम्रान १५६)

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सहाबा से सामान्यतः कहा 'तुम्हें आसानी पैदा करने के लिए उठाया गया है, कठिनाई पैदा करने के लिए नहीं उठाया गया है।

(बुख़ारी शरीफ़)

पवित्र कुर्आन अनेक नबियों का उल्लेख करते हुए कहता हैः–

अनुवाद– *यह ऐसे लोग थे जिनको 'हमने' किताब और हुक्म (निर्णायक राय स्थापित करने की योग्यता) और नबूवत दी थी।*

(सूरः अल्–अनआम ८६)

लेकिन इस आसानी, दर्जा बदर्जा और आसान करने का सम्बन्ध शिक्षा–दीक्षा और आंशिक समस्याओं से था जिनका अकायद (विश्वासों) और दीन के आधारभूत सिद्धान्तों से सम्बन्ध नहीं। जिन बातों का सम्बन्ध सामूहिक और अल्लाह के आदेशों से है, उनमें हर

दौर के अंबिया फौलाद से अधिक बेलचक और पहाड़ से ज़्यादा मज़बूत होते हैं।

नबियों की इताअत (आज्ञा पालन) और तक्लीद (अनुकरण) पर कुर्आन का जोर

पवित्र कुर्आन जगह–जगह नबियों का अनुसरण, उनकी सीरत (चरित्र) को अपनाने और उनके तर्ज पर ज़िन्दगी गुजारने और यथासम्भव उनकी मुशाबहत (सदृश्यता) अपनाने पर ज़ोर देता और कहता है:–

अनुवाद– *निःसंदेह तुम्हारे लिए अल्लाह के रसूल में उत्तम आदर्श है, उस व्यक्ति के लिए जो अल्लाह और आख़िरत का उम्मीदवार हो और अल्लाह को ज़्यादा से ज़्यादा याद करे।*

(सूरः अल्–अहज़ाब २१)

वह मुसलमानों को हिदायत करता है कि वे बराबर यह दुआ माँगते रहें किः–

अनुवाद– *हमें सीधे रास्ते पर चला, उन लोगों का रास्ता जिनको तूने पुरस्कृत किया, उन लोगों का रास्ता नहीं जिन पर तेरा गज़ब (प्रकोप) हुआ, और न भटके हुओं के (रास्ते पर चला)*

(सूरः अल्–फ़ातिहा ५–७)

इसमें कोई शक नहीं कि खुदा के इनाम से सम्मानित बन्दों के सरदार नबी और रसूल ही हैं। इस दुआ को नमाज़ में भी शामिल कर दिया गया। जब भी इन्सान इस दुआ के क़ानून की पैरवी और इन पुरस्कृत बन्दों की सीरत (चरित्र) और सूरत में मुशाबहत (सदृश्यता) करेगा तो खुदा से करीब और उसके नज़दीक सम्मानित होगा।

नबियों का सम्मान और उनसे प्रेम

पवित्र कुर्आन नबियों के लिए उस सम्मान और प्रतिष्ठा की मांग करता है जो दिल की गहराइयों से पैदा हो और उनसे भावनात्मक लगाव तथा प्रेम पैदा करना चाहता है। और केवल उनकी उस इताअत (आज्ञापालन) पर राज़ी नहीं जो भावना, मुहब्बत और आदर से ख़ाली हो; जैसे कि प्रजा का बादशाह के साथ, और दूसरे फौजी व सिय़ासी लीडरों के साथ जनता का एक औपचारिक संबंध होता है। कुर्आन मोमिन से ज़कात व सदक़ात (इस्लामी दान) के केवल कर्तव्यों का निर्वाह और आदेशों के नियम क़ानून की तालीम को काफ़ी नहीं समझता बल्कि उसकी मांग यह भी है:—

अनुवाद— *ताकि तुम लोग अल्लाह और उनके रसूल पर ईमान लाओ, और उनकी मदद करे। और उनका आदर करो।*

(सूर: अल्–फ़तह ६)

अनुवाद— *जो उस रसूल पर ईमान लाए और जिन्होंने उसकी मदद की।* (सूर: अल्–अअ्राफ १५७)

इसलिए उसने हर उस चीज़ का हुक्म दिया जिसमें उनकी इज़्ज़त व सम्मान की रक्षा होती हो, और हर उस चीज़ से मना किया जिससे उनकी अनादरता होती हो और जिससे उनकी इज़्ज़त पर आँच आती हो, उनकी शान घटती हो और उनकी बड़ाई कम होती हो।

अनुवाद— *ऐ ईमान वालो! अपनी आवाज़ नबी की आवाज़ से ऊँची न करो और न उससे इस तरह ऊँची आवाज़ से बोलो जिस तरह आपस में बोलते हो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे कर्म बर्बाद हो जाएं और तुम्हें*

ख़बर भी न हो, जो लोग अल्लाह के रसूल के पास अपनी आवाज़ों को नीची करते हैं, वे लोग हैं जिनके दिलों को अल्लाह ने परहेज़गारी के लिए जाँच लिया है, उसके लिए माफी और बड़ा बदला है।

(सूरः अल्–हुजुरात २–३)

अनुवाद– *(मोमिनो!) रसूल के बुलाने को तुम आपस में एक–दूसरे को बुलाने की तरह न बनाओ।* (सूरः अं–नूर ६३)

इसीलिए नबी के निधन के बाद उम्मत पर उनकी बीबियाँ हराम कर दी गयीं।

अनुवाद– *तुम्हे इसकी इज़ाजत नहीं कि तुम रसूल को तकलीफ पहुँचाओ और न यह जायज़ है कि उनके बाद भी कभी तुम उनकी पत्नियों से निकाह करो, बेशक यह अल्लाह के नज़दीक बड़ी गम्भीर बात है।* (सूरः अल्–अहजाब ५३)

इसके अलावा बहुत से साफ़ आदेशों में रसूल की मुहब्बत, और अपनी जान, माल आल–औलाद के मुकाबले पर वरीयता की माँग की गयी है। बुख़ारी व मुस्लिम में है।

"तुममें से कोई मोमिन नहीं हो सकता जब तक कि मैं उसके लिए उसके बाप, उसके लड़के और तमाम लोगों की तुलना में अधिक प्रिय न हो जाऊँ।"

तिबरानी मोजम कबीर (किताब का नाम) और औसत (किताब का नाम) में 'मिन नफ़्सिहि' भी है, अर्थात अपनी जान से भी अधिक प्रिय हों।

और इसी प्रकार कहाः–

जिसमें तीन बातें हों उसने ईमान की मिठास पाली, एक वह जिसके लिए अल्लाह तथा उसका रसूल दूसरे से बढ़कर प्रिय हो!

यहाँ इस बात को स्पष्ट कर देना जरूरी है कि नबी जिनके सरदार हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हैं, का मख़लूक़ से और उन क़ौमों से जिनकी तरफ वह भेजे जाते हैं पोस्टमैन और डाकियों जैसा तअल्लुक़ नहीं होता, जिसकी ज़िम्मेदारी सिर्फ यह है कि वह डाक जिसकी हो उस तक पहुँचा दे, फिर उसे उन लोगों से कोई सरोकार नहीं। और इन लोगों को उस मध्यस्त और डाकिये से कोई मतलब नहीं वह अपने कामों और अधिकारों में बिल्कुल आज़ाद है। और उन क़ौमों का तअल्लुक़ जिनके बीच नबी आये, अपने नबी से महज सामाजिक व क़ानूनी होता है, उनको उनकी सीरत, तौर तरीका पसन्द नापसन्द और उनकी वैयक्तिक ज़िन्दगी और व्यक्तिगत ज़िन्दगी से कोई दिलचस्पी नहीं, यह वह गलत व आधारहीन और अधूरी कल्पना है जो उन क्षेत्रों में प्रचलित था जो नबूवत के बुलन्द मक़ाम से नावकिफ थे, और हमारे इस दौर में उन हल्कों में फैला हुआ है जो सुन्नत के मक़ाम से नावाकिफ़ और हदीस और उसकी हुज्जत (दलील) होने को नहीं मानते हैं और जिन पर मज़हब की ईसाइयों वाली सोच का असर और पश्चिमी चिन्तन शैली का वर्चस्व है।

इसके विपरीत वास्तविकता यह है कि नबी पूरी इन्सानियत के लिए परिपूर्ण पेशवा, उच्च अनुकरणीय नमूना, आचरण, अभिरूचि स्वीकारने व रद्द करने और निकटता व अलगाव के बारे में परिपूर्ण और अन्तिम नमूना होते हैं। उनके आचार–व्यवहार उनका रहन सहन सब खुदा की नज़र में प्रिय है। रहन–सहन में उनका ढँग, इन्सानों के आचरण में उनके आचरण, लोगों की आदतों में उनकी आदतें अल्लाह

के नज़दीक प्रिय बन जाती हैं। नबी जिस रास्ते को अपनाते हैं वह रास्ता खुदा के यहाँ प्रिय बन जाता है और उसको दूसरे रास्तों पर प्राथमिकता हासिल होती है, सिर्फ इस वजह से कि नबियों के कदम उस रास्ते पर पड़े हैं। उनकी तमाम पसन्दीदा चीज़ों, तौर तरीकों, और उनसे सम्बन्ध रखने वाले कार्यो से अल्लाह की मुहब्बत और पसन्दीदगी जुड़ जाती है। उनको अपनाना और उनके आचरण की झलक पैदा करना अल्लाह को राज़ी करने का निकट और अति सरल रास्ता हो जाता है, इसलिये कि दोस्त का दोस्त, दोस्त, और दुश्मन का दोस्त, दुश्मन समझा जाता है। अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़बान से कहलवाया गयाः–

अनुवाद– *कह दीजिए, "अगर तुम अल्लाह से मुहब्बत रखते हो, तो मेरी पैरवी (अनुसरण) करो, अल्लाह भी तुमको चाहने लगेगा, और तुम्हारे गुनाह माफ़ कर देगा, और अल्लाह बड़ा माफ़ करने वाला, कृपा वाला है।*

(सूरः आलि–इम्रान ३१)

इसके विपरीत जो जुल्म पर कमर बाँधे हुए और कुफ्र की राह अपनाए हुए हैं उनकी तरफ दिल का झुकाव उनके रहन–सहन के ढंग की वरीयता और उन जैसा बनने की कोशिश, अल्लाह की गैरत को हरकत में लाने वाली और अल्लाह से बन्दे को दूर करने वाली बताई गयी है। फरमाया गयाः–

अनुवाद– *और उनकी ओर मत झुकना, जिन्होंने जुल्म किया, वरना आग तुम्हें आ लिपटेगी और अल्लाह के सिवा तुम्हारा कोई न दोस्त होगा और न तुम्हारी मदद ही की जायेगी।*

(सूरः हूद ११३)

पैग़म्बरों की इन विशेष आदतों और रहन–सहन का नाम शरीअत की ज़बान में "खेसाले फ़ितरत" और "सुननुलहुदा" है जिसकी तरफ़ शरीअत प्रेरित करती है। इन आचरणों और व्यवहारों को अपनाना लोगों को नबियों के रंग में रंग देता है और यह वह रंग है जिसके बारे में पवित्र क़ुर्आन कहता है:–

अनुवाद– (कह दो कि हमने) "अल्लाह का रंग अपना लिया है और अल्लाह से बेहतर रंग किसका हो सकता है?" और हम तो 'उसी' की इबादत करने वाले हैं।

(सूरः अल्–बक़रह् १३८)

एक आदत की दूसरी आदत, एक आचरण के दूसरे आचरण, एक तौर तरीक़ा के दूसरे तौर तरीक़े पर दीन व शरीअत (धर्म व इस्लामी क़ानून) में प्राथमिकता का यही रहस्य है। इसी कारण से इसको इस्लामी शरीअत, ईमान वालों की पहचान, प्रकृति की माँग की पूर्ति, और इसके ख़िलाफ़ तरीक़ों को शुद्ध प्रवृति से विचलन और अज्ञान लोगों की पहचान करार देती हैं और इन दोनों तरीक़ों और रास्तों में मात्र इस बात का अन्तर है कि एक ख़ुदा के पैग़म्बरों और उसके प्रिय भक्तों का अपनाया हुआ है, दूसरा उन लोगों और क़ौमों का जिनके पास हिदायत (सत्यमार्ग) की रौशनी और आसमानी शिक्षायें नहीं हैं। इन उसूल के तहत खाने–पीने, कामों में दायें–बायें हाथ का फ़र्क़, पहनाव व श्रृंगार, रहन सहन व सभ्यता के बहुत से नियम आ जाते हैं। और यह सुन्नत, सुन्ने नबवी और इस्लामी विधि शास्त्र का एक विस्तृत अध्याय है। (विस्तार के लिए लेखक की किताब मंसबे नबूवत पढ़ें)

जहाँ तक अल्लाह के रसूल मुहम्मद **सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम** का

संबंध है, वहाँ इस पहलू पर और अधिक बल देने की जरूरत है। आपके व्यक्तित्व के साथ केवल नियम और क़ानून का संबंध काफी नहीं, भावनात्मक सम्बन्ध और ऐसा गहरा प्रेम वांछित है जो जान व माल, परिवार के प्रेम पर हावी हो। सही हदीस में आया है-- "तुम में से कोई व्यक्ति उस समय तक मोमिन नहीं हो सकता जब तक कि मैं उसको अपनी संतान, मां बाप तथा तमाम लोगों से अधिक प्रिय न हो जाऊं" (बुख़ारी व मुस्लिम)। दूसरी सही हदीस में है, 'तुम में से कोई उस समय तक मोमिन न होगा, जब तक मैं उसे अपने आपसे अधिक प्रिय न हूँ।'

इस सिलसिले में उन सारे विरोधी कारणों व उत्प्रेरकों से बचने व एहतियात बरतने की ज़रूरत है, जो इस मुहब्बत के स्रोतों को शुष्क या उसको कमजोर करते हैं। भावनायें और अनुभूतियाँ मुहब्बत में उदासीनता, सुन्नत पर अमल करने की ललक में कमज़ोरी और आपको "दाना-ए-सुबुल (रास्तों को अच्छी तरह जानने वाला), ख़त्मुर्रसुल (अंतिम संदेष्टा) मौला-ए-कुल" (सबके सरदार) समझने में हिचक और सीरत व हदीस के अध्ययन से मुँह फेरने तथा असावधानी का कारण बनते हैं। कुर्आन की सूरः हुजरात, फ़तह आदि के गहन अध्ययन और नमाज़ व नमाज़ जनाजा में दुरूद व सलात को शामिल किये जाने पर विचार-विमर्श करने में दुरूद की फज़ीलत (महत्व) में आई अनेक आयतों और हदीसों का रहस्य समझने का यह आवश्यक नतीजा निकलता है कि रसूल के बारे में एक मुस्लिम से उससे कुछ अधिक वांछित है जिसको केवल कानूनी और वैधानिक सम्बन्ध कहा जाता है और जो केवल बाहरी इताअत से पूरा हो जाता है, बल्कि वह लेहाज व अदब, मुहब्बत व कृतज्ञता की भावना भी वांछित है जिसके सोते दिल की गहराइयों से निकलते हों, और जो नस-नस में रच बस

गयी हो, इसी भावना को कुर्आन ने "ताज़ीर" (मदद) व "तौकीर" (आदर) कहा है:–

अनुवाद– उसकी मदद (सहायता) करो और उसे बुजुर्ग (बड़ा) समझो।

इसकी ज्वलन्त मिसाले गज़व–ए–रजी (रजी नामी युद्ध) के मौके पर हज़रत खुबैब पुत्र अदी और जैद बिन दुसुन्नह के वाकिए, ग़ज़व–ए–उहद (उहद नामी युद्ध) के मौके पर अबूदुजानह और हज़रत तल्हा के व्यवहार, गज़व–ए–उहद में बनी दीनार की मुसलमान महिला के जवाब, सुल्हे हुदैबिया के मौके पर अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ सहाबा का घनिष्ठ प्रेम और मान–सम्मान में देखी जा सकती हैं। जिस कारण अबू सुफ़ियान (जो उस समय तक मुसलमान नहीं हुए थे) की जबान से बेझिझक निकला कि "मैने किसी को किसी से इस तरह मुहब्बत करते हुए नहीं देखा, जिस तरह मुहम्मद के साथी, मुहम्मद से मुहब्बत करते हैं।" और कुरैश के सन्देश वाहक उर्वः पुत्र मसऊद सक़फ़ी ने कहा है, मैंने किसी बादशाह की ऐसी इज़्ज़त होते हुए नहीं देखी, जिस तरह मुहम्मद के साथी मुहम्मद की इज़्ज़त करते हैं।"[१]

---

(१) पूरी घटनायें सीरत (मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का जीवन चरित्र) की किताबों में पढ़ी जायें। जैद बिन दुसुंनः को जब कत्लगाह में ले जाया जा रहा था तो अबू सुफ़ियान ने उनसे कहा कि "क्या तुम यह पसन्द करोगे कि मुहम्मद तुम्हारी जगह पर हों, और तुम अपने घर में सुरक्षित हो?" हज़रत जैद ने कहा, "खुदा की कसम मुझे तो यह भी मँजूर नहीं कि मुहम्मद जहाँ हैं वहाँ उनके कोई काँटा भी चुभे। और मैं अपने घर में आराम से बैठा रहूँ। दीनार कबीला की एक मुसलमान महिला के पति, भाई और बाप गज़व–ए–ओहद में शहीद हुए जब उनको इस घटना की सूचना दी गयी, तो उनकी ज़बान से बेइख़्तियार निकला कि यह बताओ कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कैसे हैं? लोगों ने कहा कि अल्हमदुल्लिाह (अल्लाह का शुक्र है) आप सकुशल हैं। उन्होंने कहा.....

इस रसूल प्रेम से महान इस्लामी पंडितों, सुधारकों, नवीनीकरण करने वाले नेताओं को बड़ा भाग प्राप्त हुआ, जिन्होंने दीन के वास्तविक आत्मा (रूह) को अपने भीतर उतार लिया था और जिनके भाग्य में दीन मिल्लत (धर्म व सम्प्रदाय) के पुनर्जागरण का महत्वपूर्ण किर्तिमान अंजाम देना था। सच यह है कि इस पाक मुहब्बत के बिना रसूल के तरीके की पूरी पैरवी और खुदा व रसूल का आज्ञापालन मुमकिन नहीं! मुहब्बत की एक लहर कूड़े करकट को बहा ले जाती और तन–मन में इस तरह दौड़ जाती और रच–बस जाती हैं,

शाखे गुल में जिस तरह बादे सहरगाही का नम।

मुसलमान जो कभी खुदा और रसूल के प्रेम की बदौलत शोलए जव्वालः (आलात–चक्र) थे, उसके बिना सूखी लकड़ी और राख बने हुए हैं:–

बुझी इश्क की आग अन्धेर है,
मुसलमाँ नहीं ख़ाक का ढेर है।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की इताअत (आज्ञापालन) व मुहब्बत में क़ौम का कल्याण है।

उम्मतों की तकदीरें, उनमें भेजे गये रसूलों की आज्ञापालन, उनके झण्डे तले जमा होने, उनकी सीरत (आचरण) को अपनाने और मान–अपमान हर हाल में उनसे जुड़े रहने से सम्बन्धित होती है।

.......कि मुझे दिखा दो। जब उनकी नज़र पावन चेहरे पर पड़ी तो बोल उठीं, "आपके होते हुए हर मुसीबत हल है।" अबूदुजाना ने अपने को अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिए ढाल बना दिया, और हज़रत अबू तल्हा ने अपने हाथ को ढाल बना दिया यहाँ तक कि वह हरकत व इस्तेमाल के काबिल न रहा (सीरत इब्न हशाम, बुखारी, अलइसाबः)

अतएव कोई उम्मत तमाम ताक़तों, संसाधनों के साथ युग, संस्कृति, दर्शनशास्त्रों तथा हालात और तरक्कियों के बावजूद कामयाब नहीं हो सकती, जब तक कि वह नबी का अनुसरण, उससे लगाव और उसके बुलावे (दावत) के लिए हर हाल में प्रयास न करे। और जो उम्मत भी इस तरीक़े से हट कर इज़्ज़त ताक़त व प्रतिष्ठा की प्राप्ति के लिए अपनी कूटनीति या किसी बड़ी ताक़त की पुश्तपनाही पर भरोसा करती है तो उसका अंजाम अपमान व नाकामी, अन्दरूनी फूट और देर सवेर रूसवाई के अलावा कुछ नहीं।

मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रिसालत (दूतता) महानता और मानव जाति को इसकी आवश्यकता

छठी सदी ईसवी में विश्वव्यापी स्तरपर यह हालत नज़र आती है कि पूरी मानव जाति आत्म हत्या पर आमादा नहीं कमर कसे हुए है, जैसे खुदकुशी करने की उसने कसम खाई है, सारी दुनिया में आत्म हत्या की तैयारी हो रही है अल्लाह ने पवित्र कुर्आन में उस दृश्य व स्थिति की जो तस्वीर खींची है उससे बेहतर कोई बड़े से बड़ा चित्रकार, साहित्यकार व इतिहासकार तस्वीर नहीं खींच सकता:—

अनुवाद— *और अल्लाह की उस कृपा को याद करो, कि जब तुम आपस में दुश्मन थे, तो उसने तुम्हारे दिलों में मुहब्बत डाल दी, तो तुम उसकी मेहरबानी से (आपस में) भाई—भाई बन गये, और तुम आग के गढ़े के किनारे तक पहुँच चुके थे। तो उसने तुम्हें उससे बचा लिया।*

(सूरः आलि इम्रान १०३)

हमारे इतिहासकारों और सीरत निगारों (जीवनी लेखकों) से जाहिलियत की तस्वीर पूरे तौर पर न खिंच सकी। वह न केवल

क्षमादान के योग्य बल्कि हमारे धन्यवाद के पात्र हैं कि साहित्य व भाषा का भण्डार साथ नहीं देते। घटना और वस्तु स्थिति इतनी संगीन, इतनी नाजुक, इतनी भयावह और इतनी पेचीदा और गम्भीर थी कि लेखनी से उसका चित्रण और भाषा व साहित्स की बड़ी से बड़ी कुदरत व सलाहियत (क्षमता) से उसकी व्याख्या सम्भव नहीं। कोई इतिहासकार इसका हक कैसे अदा कर सकता है? जाहिलियत (अज्ञानता) का दौर जिसमें अल्लाह के रसूल मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का अभ्युदय हुआ, क्या वह एक या दो क़ौमों के पतन अथवा नैतिक बिगाड़ की समस्या थी? ख़ाली बुत परस्ती (मूर्ति पूजन) की समस्या थी, नैतिक अपराधों की समस्या थी? मदिरा पान, जुआ बाज़ी, भोग विलास, अधिकारों के हनन, अनाचार व अत्याचार, आर्थिक शोषण, जालिम हुकूमतों, अत्याचारी व्यवस्था और अन्यायपूर्ण क़ानून की समस्या थी? क्या समस्या यह थी कि किसी देश में बाप अपनी नवजात बच्ची को ज़िन्दा दफ़न कर रहा था? समस्या यह थी कि मनुष्य मनुष्यता को ख़ाक में मिला रहा था। समस्या यह नहीं थी कि अरब के कुछ कठोर दिल लोग अपनी मासूम बच्चियों को झूठी शर्म व लाज से बचने के लिए एक स्वरचित अत्याचार, परम्परा के आधार पर अपने हाथों ज़िन्दा दफन कर देना चाहते थे। समस्या यह थी कि मातृ भूमि अपनी पूरी पीढ़ी को ज़िन्दा दफन करना चाहती थीं। वह युग बीत चुका। अब उसको कैसे लाकर सामने खड़ा कर दिया जायें। वह दौर जिन लोगों ने देखा था, वही इसकी हकीकत (वास्तविकता) को समझते और जानते हैं।

समस्या किसी एक देश व क़ौम की न थी, न किसी एक भ्रम की थी। समस्या मानवजाति की किस्मत की थी। समस्या मानव–जाति के भविष्य की थी। यदि कोई चित्रकार ऐसा चित्र प्रस्तुत करे जिसमें

दिखाया गया हो कि मानव–जाति का प्रतिनिधित्व एक इन्सान कर रहा है, एक सुन्दर मनुष्य, एक मोटा ताजा तन्दुरूस्त इन्सान जो ख़ुदा की कारीगरी का बेहतरीन नमूना है, जिससे आदम का नाम ज़िन्दा और उसका सिलसिला क़ायम है, जिस पर फ़रिश्ते हसद करते हैं, जो सर्वोत्तम प्राणी है, जिसके सर पर ख़ुदा ने ख़िलाफ़त (प्रतिनिधित्व) का ताज रखा है, और जिसकी वजह से यह धरती एक वीराना नहीं, एक आबाद और गुलज़ार जगह है, इस इन्सान के सामने आग का एक समुद्र है, एक बहुत गहरा गड्ढा है, जिसकी कोई थाह नहीं, वह इन्सान इसमें छलांग लगाने के लिए तैयार खड़ा है, उसके पाँव उठ चुके हैं, ऐसा नज़र आ रहा है कि कुछ ही पलों में वह उसकी अन्धेरों में गायब हो जायेगा। अगर उस दौर की ऐसी तस्वीर खींची जाये तो किसी हद तक उस वस्तु स्थिति का अन्दाज़ा (अनुमान) हो सकता है जो हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अभ्युदय के समय पायी जाती थी। और इसी हक़ीक़त को बयान करने के लिए फ़रमाया गया है कि:–

अनुवाद– *और तुम आग के गड्ढे के किनारे तक पहुँच चुके थे, ख़ुदा ने तुम्हें उससे बचा लिया।*

(सूरः आलि–इमरान १०३)

इसी बात को एक हदीस में उदाहरण देकर बयान किया गया है। कहा कि "मेरी उस दावत व हिदायत की मिसाल जिसके साथ मुझे दुनिया में भेजा गया है, ऐसी है जैसे एक व्यक्ति ने आग जलाई, जब उसकी रौशनी आस–पास फैली तो वह परवाने और कीड़े जो आग पर गिरा करते हैं, हर तरफ से उमड़ कर उस में कूदने लगे, इसी तरह से तुम आग में गिरना और कूदना चाहते हो, और मैं तुम्हारी

कमर पकड़ कर तुमको उससे बचाना और अलग करना चाहता हूँ"
(सही बुखारी व मिश्कात भाग–१, पेज–२८)

वास्तव में असल समस्या यही थी कि मानव जाति की नौका को सलामती के साथ, सकुशल पार लगाया जाये। जब इन्सान अपने सही "मूड" में आ जायेगा, जब जीवन में नार्मल (साधारण) हालात पैदा हो जायेंगे, तो उन सब रचनात्मक, कल्याणकारी, ज्ञानमयी साहित्यिक और विकास के प्रयासों और मँसूबों का दौर आयेगा जिनकी योग्यता अनेक इन्सानों और मानवता के शुभ चिन्तकों में पायी जाती है। वास्तव में सारी दुनिया पैग़म्बरों की एहसान मन्द है कि उन्होंने मानव जाति को उन ख़तरों से बचा लिया जो उसके सर पर नंगी तलवार की तरह लटक रहे थे। दुनिया का कोई ज्ञानमयी, रचनात्मक, सुधारात्मक कार्य, कोई दर्शनशास्त्र, कोई विचारधारा उनके एहसान से ख़ाली नहीं। सच पूछिये तो दुनिया अपने अस्तित्व, विकास और जीवन की हक़दारी में पैग़म्बरों ही के प्रति आभारी है। इन्सानों ने अपनी दशा से कई बार यह ऐलान किया कि अब उनकी उपादेयता समाप्त हो गयी और अब वह दुनिया के लिए कोई लाभ बरकत व रहमत और कोई पैगाम और दावत नहीं रखते। उन्होंने अपने खिलाफ खुदा की अदालत में खुद नालिश (शिकायत) की और गवाही दी और वह अपने को बड़ी से बड़ी सज़ा बल्कि मृत्युदण्ड का पात्र साबित कर चुके थे।

जब सभ्यता अपनी सीमाओं से परे निकल जाती है, जब वह नैतिकता को एकदम भुला देती है, जब इन्सान अपनी तुच्छ इच्छाओं और नफ्स (काम) के हैवानी अपेक्षाओं की पूर्ति के अलावा हर मक़सद और हर हकीकत को भुला देता है, जब उसके पहलू में इन्सान के

दिल के बजाय भेड़िये और चीते का दिल पैदा हो जाता है, जब उसके शरीर में एक फर्जी पेट और एक असीम बुरे काम करने की प्रवृत्ति जन्म लेती है, जब दुनिया पर पागलपन सवार होता है, तो कुदरत उसको सजा देने या उसके पागलपन के नशे को उतारने के लिए नये–नये नश्तर और नये–नये जर्राह पैदा करती है:–

करती है मुलूकियत अन्दाजे जुनूँ पैदा,
अल्लाह के नश्तर हैं तैमूर हो या चँगेज़।

आप मुलूकियत (बादशाहत) के शब्द को सभ्यता से बदल दीजिये कि सभ्यता का बिगाड़ और उसका जुनून, मुलूकियत (बादशाही) के जुनून से ज़्यादा खतरनाक और अधिक व्यापक होता है। एक कमजोर सा मरीज अगर पागल हो जाता है तो मुहल्ले की नींद हराम कर देता है, और पूरा मुहल्ला अज़ाब से ग्रस्त हो जाता है। आप कल्पना कीजिये कि जब मानव–जाति पागल हो जाये, जब इन्सानियत का मिज़ाज ख़राब हो जाये तो इसका क्या इलाज है। जाहिलियत में सभ्यता सिर्फ बिगाड़ी ही नहीं थी उसमें सड़ाहिन्द (तअफ्फुन) पैदा हो गयी थी, उसमें कीड़े पड़ गये। मानव–जाति का शिकारी बन गया था। उसको किसी इन्सान की जाँकनी, किसी घायल की तड़प और किसी पीड़ित की कराह में वह मज़ा आने लगा था जो प्याले व सुराही में, और दुनिया के स्वादिष्ट खाने और सुन्दर दृश्य में नहीं आता था। आप रोम का इतिहास पढ़ें। जिसकी विजय, शान्ति–व्यवस्था और विधि–रचना और सभ्यता के दुनिया में डँके बजे। योरोप के इतिहासकार उसके बारे में लिखते हैं कि "रोम वासियों के लिए सबसे अधिक रोचक और मस्त कर देने वाला दृश्य वह होता था जब आपस में तलवार के वार या खूँख्वार जानवरों की लड़ाई में पराजित और घायल

ग्लैडियेटर जाँकनी की तकलीफ से तड़प रहा होता, उस समय रोम के रईस और ज़िन्दा दिल तमाशाई इस आनन्ददायी दृश्य को देखने के लिए एक दूसरे पर गिरे पड़ते, और पुलिस के लिए भी उनको कन्ट्रोल में रखना सम्भव न होता।"

हिस्ट्री आफ योरोपियन मारल्स—लेकी (तारीखे अख़लाक यूरोप)

रूमी काल की जल्लादी, जिसमें इन्सान को जानवरों से लड़ने पर मजबूर किया जाता था, इन्सान के पत्थर दिल होने की बदतरीन मिसाल पेश करती है। लेकिन, इन खेलों की लोकप्रियता बयान करते हुए लिखता है।

"जल्लादी की यह लोकप्रियता इस लेहाज से कदापि आश्चर्यजनक नहीं कि मनोरंजन के जितने दृश्य इसमें आकर एकत्र हो गये थे उतने किसी दूसरे खेल तमाशे में न थे। लक व दक अखाड़ा, रईस लोगों की जर्क व बर्क अच्छी—अच्छी पोशाकें, तमाशाइयों की भीड़, इतनी बड़ी भीड़ अपेक्षित खामोशी, अस्सी हजार ज़बानों से एक साथ 'शाबाश' का निकलना, जिसकी आवाज़ से शहर गूँज पड़ता, लड़ाई का घड़ी—घड़ी रंग बदलते रहना, अद्वितीय साहस, इनमें से हर चीज़ प्रभावित करने के लिए काफी है।

इन अत्याचारी खेल तमाशों को रोकने के लिए आदेश जारी किये गये, लेकिन यह बाढ़ इतनी जोर पर थी कि कोई बन्धा उसे रोक नहीं सकता था।"[१]

अतएव जाहिलियत (अज्ञानता) की असल समस्या यह थी कि पूरी ज़िन्दगी की चूल अपनी जगह से हट गयी थी, बल्कि टूट गई

[१] हिस्ट्री आफ योरोपियन मारल्स—लेकी (तारीखे अखलाक यूरोप पृष्ठ २३०, अनुवाद मौनाला अब्दुल माजिद दरयाबादी)

थी, इन्सान, इन्सान नहीं रहा था। इन्सानियत का मुकदमा अपने अंतिम चरण में खुदा की अदालत में पेश था। इन्सान अपने खि़लाफ गवाही दे चुका था। इस हालत में खुदा ने हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को दुनिया में भेजा और कहा गया–

अनुवाद– *और 'हमने' आपको दुनिया के लिए रहमत बनाकर भेजा है।* (सूरः अल्–अंबिया १०७)

हकी़क़त यह है कि हमारा यह दौर बल्कि क़यामत तक पूरा दौर हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अभ्युदय, दावत और सदप्रयासों के हिसाब में है। आपका पहला काम यह था कि आपने उस तलवार को जो मानव–जाति के सर पर लटक रही थी और कोई घड़ी थी कि उसके सर पर गिर कर उसका काम तमाम कर दे, उस तलवार को हटा लिया। और उसको वह उपहार दिये जिन्होंने उसको नया जीवन, नया हौसला, नई ताक़त, नई इज़्ज़त और सफलता की नई मँजिल प्रदान की और उनकी बरकत से इन्सानियत, सभ्यता व संस्कृति, कला, कौशल, ज्ञान, आध्यात्म व निष्ठा और इन्सानियत की रचना का एक नया दौर शुरू हुआ। हम यहाँ पर आपके द्वारा दी गई उन चीज़ों का उल्लेख कते हैं, जिन्होंने मानव–जाति के मार्गदर्शन व सुधार तथा मानवता के विकास में बुनियादी किरदार अदा किया और जिनकी बदौलत एक नई दुनिया वजूद में आई।

आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का सबसे बड़ा उपकार यह है कि आपने दुनिया को तौहिद (एकेश्वरवाद) के अक़ीदा (विश्वास) का वरदान दिया। इससे अधिक क्रांन्तिकारी, जीवनदायी और चमत्कारिक अक़ीदा (विश्वास) दुनिया को न पहले कभी मिला है और न क़यामत तक कभी मिल सकता है, यह इन्सान जिसको शायरी, फलसफः और

सियासत में बड़े–बड़े दावे हैं, और जिसने क़ौमों, मुल्कों को बार–बार गुलाम बनाया, चारों तत्वों पर अपनी हुकूमत चलाई, पत्थर में फूल खिलाये और पहाड़ों का जिगर काट कर दरिया बहाये और जिसने कभी–कभी खुदाई का भी दावा किया, यह अपने से कहीं अधिक विवश व हीन, बेहिस व हरकत, बेजान व मुर्दा और कभी–कभी स्वयं अपनी बनाई हुई चीज़ों के सामने झुकता था। यह पहाड़ों, नदियों, पेड़ों, जानवरों, आत्माओं व शैतानों तथा कुदरत के मज़ाहिर (बाह्य रूपों) ही के सामने नहीं बल्कि कीड़े–मकोड़ों तक के सामने सिर नवाता था और उसकी पूरी ज़िन्दगी उन्ही से भय व आशा और इन्हीं खतरों में बसर होती थी, जिसका नतीजा कायरता, मानसिक तनाव, अंध विश्वास और अविश्वास था। आपने उसको ऐसे विशुद्ध, सहज, जीवनदायी तौहिद के अक़ीदा की शिक्षा दी जिससे वह खुदा के अलावा, जो सृष्टा है, हर एक से आज़ाद निडर और निश्चिन्त हो गया। उसमें एक नई शक्ति, नया हौसला, नया शौर्य और नयी वहदत (एका) पैदा हुई, उसने सिर्फ खुदा को असली मालिक, जरूरतों को पूरा करने वाला और नफा–नुकसान पहुँचाने वाला समझना शुरू किया इस नयी खोज से उसकी दुनिया बदल गयी। वह हर प्रकार के बेजा खौफ और हर तरह के तनाव से सुरक्षित हो गया। वह खुदा के अलावा हर प्रकार की गुलामी से छुट्टी पा गया। उसको अनेकता में एकता दिखने लगी। वह अपने को सारी सृष्टि से उत्तम, सारी दुनिया का सरदार और व्यवस्थापक और सिर्फ खुदा का अधीन और आज्ञापालक समझने लगा। इसके नतीजे में इन्सान की प्रतिष्ठा कायम हुई जिससे पूरी दुनिया वंचित हो चुकी थी।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अभ्युदय के बाद हर तरफ से तौहिद के अक़ीदो की गूँज आने लगी। दुनिया के सारे

दर्शनशास्त्रों और विचारधाराओं पर उसका प्रभाव पड़ा कहीं कम कहीं ज्यादा। वह बड़े–बड़े धर्म जिनकी नसों में शिर्क और अनेक खुदाओं का अक़ीदा (विश्वास) रच बस गया था किसी न किसी लै में ऐलान करने पर मजबूर हुए कि खुदा एक है और वह अपने बहुदेववादी विश्वासों की व्यख्या पर मजबूर हुए और उनकी ऐसी दार्शनिक व्याख्या करने लगे जिससे उन पर शिर्क (बहुदेववाद) का इल्ज़ाम न आये और वह इस्लाम के तौहीद के अक़ीदा (विश्वास) से कुछ न कुछ मिलता हुआ नज़र आये। उनको शिर्क का इकरार करने में शर्म और झिझक महसूस होने लगी। और सारी मुशरिकाना (बहुदेववादी) व्यवस्था, सोच व विश्वास, हीनता की भावना से ग्रसित हुए। उस महान उपकारी का महान उपकार यह है कि उसने तौहिद की नेअमत दुनिया को प्रदान की।

आपका दूसरा महान उपकार मानव–एकता की परिकल्पना है। इन्सान क़ौमों और बिरादरियों ज़ात–पात और ऊँच–नीच के वर्गों में बँटा हुआ था। और उनके बीच इन्सानों और जनवरों, आकाओं और गुलामों और बन्दा व खुदा का फर्क़ था, वहदत व मसावाता (एकता व समरसता) की कोई परिकल्पना न थी। हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सदियों के बाद पहली बार यह क्रान्ति और आश्चर्यजनक ऐलान किया–

अनुवाद– *"लोगो! तुम्हारा पालनहार एक है और तुम्हारा बाप भी एक है, तुम एक आदम की संतान हो और आदम मिट्टी से बने थे। अल्लाह के नज़दीक तुममें से सबसे अधिक प्रतिष्ठित वह है, जो तुममें सबसे ज़्यादा परहेज़गार है। किसी अरबी को अजमी (गैर–अरब) पर फजीलत (उत्कृष्टता) नहीं मगर तकवा (अल्लाह का डर और लेहाज) के बिना पर।"*

(कनज़ुल–अमाल)

यह वह शब्द है जो हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपने आख़िरी हज में एक लाख चौबीस हजार लोगों के महासम्मेलन में फरमाये थे। इनमें दो वहदतों (एकताओं) का ऐलान किया गया है, और यही वह दो वास्तविक मजबूत बुनियादें हैं जिन पर मानव जाति की वास्तविक एकता का महल बनाया जा सकता है। और जिसके साया के नीचे इन्सान को अमन चैन हासिल हो सकता है। और वह सहयोग और सहायता के सिद्धान्त मानवता के नव-निर्माण का काम अंजाम दे सकते हैं। यह दो वहदतें क्या हैं- एक मानव-जाति के खालिक (सृजक) की वहदत, और एक इन्सानी नस्ल के पितामह की वहदत्। इस तरह हर इन्सान दूसरे इन्सान से दोहरा रिश्ता रखता है, एक आध्यात्मिक और हकीकी तौर पर, वह यह कि सब इन्सानों और जहानों का रब एक है। दूसरा शारीरिक तौर पर, वह यह कि सब इन्सान एक बाप की औलाद हैं।

जिस समय यह ऐलान किया गया था, उस समय दुनिया इसको सुनने के मूड में न थी। यह ऐलान उस समय की दुनिया में एक भूचाल से कम न था। कुछ चीजें ऐसी होती हैं जो सोपानवार सहन योग्य हो जाती हैं, बिजली का यही हाल है कि इसको पर्दो में रखकर छू लेते हैं। लेकिन बिजली के करेन्ट को कोई डायरेक्ट छू ले तो शरीर में उसका करेन्ट दौड़ जाता और उसका काम तमाम कर देता है। आज ज्ञान-विज्ञान और मानव चिन्तन के विकास की उन मंजिलों ने जो इस्लाम की दावत, इस्लामी समाज की स्थापना, सुधारकों की कोशिशों से तय हुई उस क्रान्तिकारी ऐलान को दैनिक जीवन की हकीकत बना दिया है। संयुक्त राष्ट्र संघ के स्टेज से लेकर, जिसने मानवाधिकार चार्टर प्रकाशित किया, प्रत्येक लोकतंत्र तथा हर संस्था की तरफ से इन्सानी हुकूक और समानता की घोषणा

की जा रही है और कोई इसको सुन कर आश्चर्य चकित नहीं होता। लेकिन एक जमाना था जब अलग–अलग कौमों और खांनदानों के माफ़ोकल बशर (मनुष्य की शक्ति से बाहर की चीज) होने का अकीदा कायम था और बहुत सी नस्लों और खानदानों का नसब नामा (शजरा) खुदा से और सूरज चाँद से मिलाया जा रहा था। कुर्आन ने यहूदियों और ईसाइयों का कथन नक़ल किया है कि हम खुदा की लाड्ली और चहेती औलाद की तरह हैं। मिस्र के फिरऔन अपने को सूरज देवता का अवतार कहते थे। हिन्दुस्तान में सूर्य वँशी और चन्द्रवँशी खानदान मौजूद थे। ईरान के बादशाहों को जिन की उपाधि किस्रा (खुसरो) हुआ करती थी, उसका दावा था कि उनकी नसों में खुदाई ख़ून है। ईरानवासी उन्हें इसी नज़र से देखते थे। उनकी आस्था थी कि इस पैदाइशी बादशाहों की ख़मीर में कोई पवित्र आसमानी चीज़ शामिल है। कियानी वँशज के अन्तिम ईरानी सम्राट यज़्दगर्द का नाम बताता है कि वह और ईरानी उनको खुदा के कितने करीब समझते थे।

चीनी अपने बादशाह को आसमान का बेटा समझते थे। उनका अक़ीदा (विश्वास) था कि आसमान नर और ज़मीन मादा है। इन दोनों के मेल से ब्रह्माण्ड की रचना हुई और बादशाह इस जोड़े का पहला बेटा है। अरब अपने अलावा सारी दुनिया को गूँगा और बेज़बान (अजम) कहते थे उनका सबसे विशिष्ट क़बीला कुरैश आम अरबों से भी अपने को उत्कृष्ट समझता था और इसी एहसासबरतरी में हज के ऐसे सार्वजनिक सम्मेलन में भी अपनी विशिष्टता को क़ायम रखता था। कुर्आन ने इस माहौल में ऐलान किया:–

अनुवाद– ऐ लोगो! हमने तुमको एक ही मर्द और एक ही औरत से पैदा किया और तुम्हें बिरादरियों और कबीलों का रूप दिया, ताकि तुम

एक–दूसरे को पहचानों, अल्लाह के नज़दीक तुममें सबसे इज़्ज़त वाला वह है, जो तुममें सबसे ज्यादा मुत्तक़ी (परहेज़गार) है।

(सूरः अल्–हुजुरात १३)

आपका तीसरा महान उपकार मानव सम्मान की वह इस्लामी परिकल्पना है जो इस्लाम की भेंट है। इस्लाम के उदयकाल में इन्सान से अधिक अपमानित कोई नहीं था। उसका अस्तित्व बे क़ीमत होकर रह गया था। कभी–कभी तो पालतू जानवर, कुछ "पवित्र" हैवानों, कुछ वृक्ष, इन्सान से कहीं अधिक क़ीमती और माननीय थे। उनके लिए निःसंकोच इन्सानों की जानें ली जा सकती थीं, और इन्सानों के ख़ून और गोश्त के चढ़ावे चढ़ाये जा सकते थे। आज भी कुछ बड़े–बड़े विकसित देशों में इसके नमूने देखे जा सकते हैं। हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इन्सानों के मन–मस्तिष्क में यह छाप बैठा दी कि इन्सान इस सृष्टि का सबसे अधिक क़ीमती, माननीय प्रेम और हिफाजत का पात्र है। आपने मनुष्य को ऐसी प्रतिष्ठा दी कि उससे ऊपर सिर्फ सृष्टि के रचयिता की हस्ती रह जाती है। कुर्आन ने ऐलान किया कि वह ख़ुदा का नायब है। सारी दुनिया उसी के लिए पैदा की गई–

अनुवाद– वह (अल्लाह)जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन की तमाम चीज़ों को पैदा किया।

(सूरः अल–बक़रह २६)

अनुवाद– और 'हमने' आदम की औलाद को इज़्ज़त दी, और उनको थल और जल में सवारी और अच्छी पाक रोज़ी दी और अपनी बहुत सी मख़्लूक सृष्टि पर फ़जीलत (श्रेष्ठता) दी।

(सूरः इस्रा ७०)

इससे अधिक उसकी प्रतिष्ठा क्या हो सकती है कि साफ कह दिया गया कि इन्सान खुदा का कुँबा (परिवार) है और खुदा को अपने बन्दों में सबसे अधिक प्रिय वह है जो उसके कुटुम्ब के साथ अच्छा व्यवहार करे और उसको आराम पहुँचाये।

हदीसे कुदसी[1] में फरमाया कि "अल्लाह कियामत के दिन कहेगा ऐ आदम के बेटे! मैं बीमार हुआ था तू मुझे देखने नहीं आया बन्दा कहेगा, परवरदिगार! मैं तेरी अयादत (बीमार को देखने जाना) क्या कर सकता हूँ? तू तो सारे जहानों का रब है। इरशाद होगा, क्या तुझे ज्ञात नहीं हुआ। मेरा अमुक भक्त बीमार पड़ गया था, तू उसे देखने को नहीं गया। तुझे मालूम नहीं था कि अगर तू उसकी अयादत करता, तो तू मुझे उसके पास पाता। फिर इरशाद होगा, ऐ आदम के बेटे! मैंने तुझसे खाना माँगा था, तूने मुझे खाना नहीं दिया। बन्दा कहेगा, तू तो सारे जहानों का रब है। इरशाद होगा, क्या तुझे इसकी जानकारी नहीं हुई कि मेरे अमुक बन्दे ने तुझसे खाना माँगा तूने उसे नहीं खिलाया। क्या तुझे इसकी ख़बर न थी कि अगर तू उसे खाना खिलाता तो तू मुझे उसके पास पाता? ऐ आदम की औलाद! मैंने तुझसे पानी माँगा, तूने मुझे पानी नहीं पिलाया। बन्दा कहेगा, ऐ रब! मैं तुझे कैसे पानी पिला सकता हूँ, तू तो सारे जहानों का पालनहार है? इरशाद होगा तुझसे मेरे फलाँ बन्दे ने पानी माँगा था, तूने उसे पानी नहीं दिया। तुझे इसका पता नहीं चला कि अगर तू उसको पानी पिलाता तो तू मुझे उसके पास पाता?(सही मुस्लिम)

जो धर्म एक ईश्वर को मानता हो, क्या इन्सानियत की बुलन्दी का इससे बढ़कर उसमें ऐलान पाया जा सकता है? और क्या दुनिया

[1] अल्लाह की बात मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के शब्दों में

के किसी मज़हब और फ़लसफ़ में इन्सान को यह मक़ाम दिया गया है? अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया,

"रहम करने वालों पर रहमान की रहमत होती है। अगर तुम धरती वालों पर रहम खाओगे तो वह जो आसमान पर है वह तुम पर रहम करेगा।" (अबू दाऊद)

करो मेहरबानी तुम अहले ज़मीं पर,
ख़ुदा मेहरबाँ होगा अर्शे बरीं पर।

(हाली)

आप गौर कीजिये कि इन्सानी एकता की छाप दिलों पर बिठाने के लिए जब यह प्रयास नहीं किया गया था, उस समय इन्सान का क्या हाल रहा होगा? एक इन्सान की तुच्छ इच्छा की कीमत हजारों इन्सानों से अधिक थी। बादशाह उठते थे और मुल्कों के मुल्कों का सफाया कर देते थे। सिकन्दर उठा और जैसे कोई कबड्डी खेलता है, हिन्दुस्तान तक चला आया और क़ौमों तथा तहजीबों के चिराग गुल कर दिये। सीज़र उठा और इन्सानों का इस तरह शिकार खेलना शुरू किया जैसे जँगली जानवरों का शिकार खेला जाता है। हमारे ज़माने में भी दो-दो विश्व युद्ध हुए जिन्होंने लाखों इन्सानों को मौत के घाट उतार दिया और यह सिर्फ राष्ट्रीय गर्व, राजनीतिक चौधराहट, सत्ता का लोभ या व्यापारिक मंडियों पर कब्जा करने की भावना का नतीजा था। इकबाल ने सच कहा:-

अभी तब आदमी सैदे ज़बून-ए-शहर यारी है,
क़यामत है कि इन्साँ नौए इन्साँ का शिकारी है।

चौथा इन्क़लाबी कारनामा यह हे कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु

अलैहि वसल्लम के अभ्युदय के समय मानव जाति के अधिकांश लोगों पर मानव स्वभाव से बदगुमानी और खुदा की रहमत से मायूसी व निराशा का एक आम माहौल था। इस मानसिक दशा के पैदा करने में ऐशिया के कुछ प्राचीन धर्म और मध्य पूर्व तथा योरोप की परिवर्तित ईसायी धर्म ने समान रोल अदा किया था। हिन्दुस्तान के धर्मो ने आवागमन के दर्शन शास्त्र के द्वारा जिसमें इन्सान के इरादा व इख़्तियार को कतई दखल नहीं है, और जिसके अनुसार हर इन्सान को अपने पहले जन्म के कर्मो और गलतियों की सज़ा भुगतनी ज़रूरी है। और ईसाइयत ने इन्सान के पैदाइशी **गुनहगार** (पापी) होने और इसके लिए हज़रत मसीह के कफ्फारः **(प्रायश्चित)** बनने की जरूरत के अक़ीदा (विश्वास) के नतीजे में उस समय के सभ्य संसार के लाखों करोड़ों व्यक्तियों को जो इन धर्मो के अनुयायी थे, अपने आपसे बदगुमानी और अपने भविष्य और खुदा की रहमत से निराशा से ग्रसित कर दिया था।

अल्लाह के रसूल मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने पूरी ताक़त व सफाई से ऐलान किया कि मानव स्वभाव एक सादा तख़्ती (स्लेट) की तरह है जिस पर पहले से कोई तहरीर लिखी नहीं है, इस पर बेहतर से बेहतर तहरीर लिखी जा सकती है। इन्सान अपने जीवन का स्वयं शुभारम्भ करता है और अपने अच्छे या बुरे कर्म से अपना लोक–परलोक बनाता या बिगाड़ता है। वह किसी दूसरे के कर्म का ज़िम्मेदार या उत्तरदायी नहीं। कुर्आन ने बार–बार ऐलान किया कि आख़िरत (परलोक) में कोई किसी का बोझ नहीं उठा सकेगा, और यह कि उसके हिस्से में उसी की कोशिश और उसके नतीजे आने वाले हैं। इन्सान में उसकी कोशिश का नतीजा ज़रूर ज़ाहिर होगा और उसका उसको भरपूर बदला मिलेगा।

अनुवाद– यह कि 'कोई' व्यक्ति दूसरे (के गुनाह) का बोझ न उठाएगा, और यह कि इन्सान को वही मिलता है, जिसके लिए उसने कोशिश की, और कि उसकी कोशिश देखी जाएगी, फिर उसको पूरा–पूरा बदला दिया जाएगा।

(सूरः अंनज्म ३८ / ४१)

इस ऐलान से इन्सान का अपनी प्रवृत्ति और अपनी क्षमताओं पर वह आत्म विश्वास बहाल हो गया जो बिल्कुल विचलित होकर डगमगा गया था। वह नये संकल्प और विश्वास तथा उत्साह के साथ अपनी और इन्सानियत की तकदीर चमकाने और अपना भाग्य जगाने के सफर में सक्रिय हो गया।

अल्लाह के रसूल मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने गुनाहों और भूल–चूक व गल्तियों को एक अस्थायी हालत करार दिया, जिसमें इन्सान कभी–कभी अपनी नादानी, अदूर दृष्टि और काम–लोभ व शैतान के उकसाने से लिप्त हो जाता है। नेक स्वभाविकता, लज्जा इन्सान की प्रवृत्ति का असल तकाजा और इन्सानियत का जौहर है। अपनी गलती मानना, उस पर पछताना, खुदा के सामने रो–धो कर अपने कुसूर को माफ करा लेना, और आगे ऐसी गलती न करने का इरादा करना, इन्सान की शराफत और आदम की विरासत है। आपने दुनिया के निराश व टूटे दिल और गुनाहों के दलदल में गले–गले डूबे हुए इन्सानों पर तौबा का ऐसा दरवाजा खोला और इसका इस जोर शोर से प्रचार प्रसार किया कि आपके इस विभाग का दोबारा ज़िन्दा करने वाला कहना सही होगा। इसी आधार पर आपके नामों में एक नाम 'नबी उत्तौबह (तौबा का पैगम्बर) भी है। आपने तौबा को एक मजबूरी की बात के तौर पर पेश नहीं किया, बल्कि आपने उसके

मर्तबा को इतना बुलन्द किया कि वह आला दर्जे की इबादत और खुदा को राज़ी करने का ऐसा **साधन** बन गया कि उस पर बड़े–बड़े अल्लाह (ईश्वर) के भक्त रश्क **करने** लगे।

कुर्आन का यह ऐलान गुनहगार बन्दों के हक में खुदा के रहीम व करीम (कृपालू व **दानशील**) होने के साथ उनका सच्चा कद्रदाँ होने की तरफ इशारा **करता** है:–

अनुवाद– *(ऐ नबी) कह दीजिए "ऐ मेरे वह बन्दो! जिन्होंने अपने आप पर ज़्यादती की, अल्लाह की रहमत **(कृपा) से मायूस (निराश) न हों,** अल्लाह सभी गुनाहों को माफ़ कर **देता है। वह बड़ा क्षमादाता, कृपालू** है।"*

(सूरः अज़्ज़ुमर ५३)

एक **दूसरी** आयत में कहा गया–

अनुवाद– *और **अपने रब** (पालनहार) की माफ़ी और उस जन्नत (स्वर्ग) की ओर दौड़ो, **जिसका फैलाव सारे** आसमान और ज़मीन जैसा है, **जो डरने** वालों के लिए तैयार की गई है। जो खुशहाली और तंगी **हर हाल में खर्च** करते हैं, और गुस्से को रोकते हैं और लोगों को माफ़ करते हैं और अल्लाह नेक लोगों को पसंद करता है। और यह कि जब वे कोई खुला गुनाह या अपने आप पर जुल्म कर लेते हैं तो अल्लाह को याद करते हैं और वे अपने गुनाहों की माफ़ी माँगते हैं, और अल्लाह के अलावा कौन है जो गुनाहों को माफ़ कर सके, और जानते बूझते वे अपने किये पर अड़े नहीं रहते, उनका बदला उनके रब की ओर से मग़्फ़िरत (क्षमादान) है और ऐसे बाग़ है जिनके नीचे नहरें बहती होंगी, उनमें वे हमेशा रहेंगे और क्या ही अच्छा बदल है (अच्छे) अमल करने वालों को।*

(सूरः आलि–इम्रान १३३–१३६)

इससे भी आगे बढ़कर सूरः तौबा में कहा गयाः–

अनुवाद– *तौबा करने वाले, इबादत करने वाले, हम्द (प्रशंसा) करने वाले, रोजा रखने वाले (मिःसंबंध) रुकूअ करने वाले, सज्दा करने वाले, भलाई का हुक्म करने वाले, और बुराई से रोकने वाले और अल्लाह की सीमाओं की रक्षा करने वाले (यही मोमिन लोग हैं) ईमान वालों को (जन्नत की) खुशखबरी सुना दीजिए।*

(सूरः अत्तौबा ११२)

इस प्रतिष्ठा की एक रौशन मिसाल यह है कि जब कुर्आन की ज़बान से उन तीन सहाबियों की तौबा की स्वीकार्यता का ऐलान किया गया जो गज़व–ए–तबूक के नाजुक मौके पर (जिसमें सम्मिलित होना अत्यावश्यक था) बिना किसी उचित कारण के मदीना में रहकर बड़ी कोताही की थी, तो उनका उल्लेख करने से पहले खुद पैगम्बर और उन मुहाजिरीन (शरणार्थियों) व अन्सार (सहायकों) का उल्लेख किया गया जिनसे इस मौके पर कोई कोताही नहीं हुई थी ताकि इन तीन पीछे रह जाने वालों को अपने अकेले और पसमान्दा (पिछड़ा) होने का एहसास न हो, और यह कि इन पर कोई उंगुली न उठा सके। और इन पर और क़यामत तक कुर्आन के पढ़ने वालों पर यह बात साफ़ हो जाये कि इनकी असल जगह और असल गिरोह यही सच्चे लोग, अन्सार व मुहाजिरीन के प्रथम पंक्ति के लोग हैं। सूरः तौबः में कहा–

अनुवाद– *बेशक अल्लाह नबी पर मेहरबान हो गया और मुहाजिरों और अन्सार पर भी, बावजूद इस के कि उनमें से एक गिरोह के दिल फिर जाने को थे (अर्थात–कुटिलता की ओर झुक गये थे) मुश्किल की घड़ी में पैगम्बर के साथ रहे, फिर खुदा ने उन पर रहमत की नज़र डाली।*

बेशक वह उनके हक़ में बड़ा शफ़ीक़ (करूणामय), रहम वाला है। और उन तीनों पर भी जिनका मामला मुलतवी किया गया था, यहाँ तक कि जब धरती विस्तृत होते हुए भी उन पर तंग हो गई और उनकी जान उन पर भारी हो गई और उन्होंने जान लिया कि अल्लाह से बचने के लिए उसके सिवा कहीं पनाह (शरण) नहीं मिल सकती, फिर ख़ुदा ने उन पर रहम किया ताकि वे पलट आए, बेशक अल्लाह ही तौबा कुबूल करने वाला रहम वाला है। (सूरः अत्तौबः ११७–११८)

इसके अलावा एक नियम के तौर पर इसका ऐलान किया कि अल्लाह की रहमत (कृपा) हर चीज़ पर हावी है और ग़ज़ब गुस्सा व जलाल पर ग़ालिब है:–

अनुवाद– *मेरी रहमत हर चीज पर छाई हुई है।*

(सूरः अल्–अअराफ १५६)

हदीसे कुदसी में है, मेरी दया मेरे क्रोध से बढ़कर है।

कुर्आन ने निराशा को भी कुफ्र और जिहालत का पर्याय करार दिया है। एक जगह एक पैगम्बर (हज़रत याकूब अलैहिस्सलाम) की ज़बान से कहलवाया गया–

अनुवाद– *अल्लाह की रहमत से तो काफ़िर ही मायूस होते हैं।*

(सूरः यूसुफ ८७)

दूसरी जगह एक दूसरे पैग़म्बर (हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम) का कथन नक़्ल किया गया–

अनुवाद– *अपने 'रब' की रहमत (कृपा) से पथ भ्रष्टों के अतिरिक्त निराश कौन हो सकता है?* (सूरः हिज्र ५६)

इस प्रकार अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने तौबा की फज़ीलत (प्रतिष्ठा) और खुदा की रहमत (कृपा) की विशालता का ऐलान करके डरी और सहमी इन्सानियत को, जो यहूदियों व ईसाइयों की देन थी, नई ज़िन्दगी का पैगाम दिया। उसके निराश और दुखे दिल में नई जान डाली, उसे तसल्ली दी और उसे धूल ग्रसित दशा से उठा कर मान–सम्मान और आत्मविश्वास का वरदान दिया।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का पाँचवा महान अविस्मर्णीय उपकार तथा एक अमूल्य उपहार दीन व दुनिया की वहदत (एकता) की परिकल्पना और यह क्रान्तिकारी सीख है कि इन्सान के कर्म व आचरण और उनसे पैदा होने वाले परिणामों की निर्भरता इन्सान की मानसिक दशा, कर्म के कारकों और उसके उद्देश्य पर है जिसको शरीअत की ज़बान में "नीयत" कहते हैं। उसके नज़दीक न कोई चीज़ "दुनिया" है और न कोई चीज़ "दीन" उसके नज़दीक खुदा की रजा की चाहत, निष्ठा और उसके आज्ञापालन की भावना व इरादों से बड़े से बड़ा दुनियावी कार्य, यहाँ तक कि हुकूमत, जँग, आनन्द, भोग, मेहनत–मजदूरी, जायज़ तफ़रीह का साधन, दाम्पत्य जीवन, सब उच्च कोटि की इबादत व आराधना, अल्लाह (ईश्वर) के सानिध्य का साधन, विलायत (परम भक्ति) तक पहुँचने का माध्यम और दीन बन जाते हैं। इसके विपरीत बड़ी से बड़ी इबादत और दीनी काम जो खुदा की प्रसन्नता से ख़ाली हो, ख़ालिस दुनिया और ऐसा कर्म गिना जायेगा जिस पर कोई सवाब (पुण्य) और बदला नहीं है।

प्राचीन धर्मों ने जीवन को दो ख़ानों (दीन व दुनिया) में बाँट दिया था एक दीनदार दूसरे दुनियादार लोग, जो न केवल एक दूसरे से जुदा थे और उनके बीच एक दुराव था बल्कि वह एक दूसरे से

संघर्षरत थे। उनके नज़दीक दीन व दुनिया में खुला विरोध और घोर द्वेष था। जिसको इनमें से किसी एक से मेलजोल पैदा करना हो, उसको दूसरे से सम्बन्ध विच्छेद और ऐलान जंग करना ज़रूरी था। कोई इन्सान एक समय में इन दोनों नवकाओं में संवार नहीं हो सकता था। रोज़ी–रोटी कमाना गफ़लत और ख़ुदा को भूले बिना, हुकूमत धार्मिक व नैतिक शिक्षाओं की अनदेखी किये बिना और दीनदार (धर्मिक) बननां दुनिया छोड़े बिना सोचा भी नहीं जा सकता था। ज़ाहिर है कि इन्सान की प्रवृत्ति में आराम तलबी और आनन्द है। धर्म की ऐसी परिकल्पना जिसमें दुनिया के किसी जायज लाभ, तरक्की और सरबुलन्दी, ताक़त और हुकूमत की गुँजाइश न हो बहुसंख्यकों के लिए स्वीकार्य नहीं। नतीजा यह हुआ कि दुनिया के सभ्य, बुद्धिमान, योग्य और व्यवहारिक इन्सानों की बड़ी तादद ने अपने लिये "दीन" के बजाये "दुनिया" को चुना और उसने इस पर अपने को राजी कर लिया। यह हर प्रकार की धार्मिक उन्नति से निराश होकर दुनिया की प्राप्ति और उसकी तरक्की में लग गयी। दीन व दुनिया के इस विरोधाभास को एक मज़हबी हकीक़त समझ कर इन्सानों के अनेक वर्गों ने आम तौर पर मज़हब को छोड़ दिया। राजनीति और सरदारी ने मज़हब के प्रतिनिधि चर्च से बग़ावत की और अपने को इसकी हर पाबन्दी से आज़ाद कर लिया। इन्सान "बेजंजीर हाथी" और समाज "बे नकेल ऊँट" होकर रह गया। दीन व दुनिया की इस दुई और दीनदारों तथा दुनियादारों की इस प्रतिद्वन्दिता ने न सिर्फ यह कि मज़हब व नैतिकता के असर का सीमित व कमज़ोर और मानव जीवन और मानव–समाज को उसकी बरकत व रहमत (बढ़ोत्तरी व कृपा) से वंचित कर दिया। बल्कि उस इल्हाद (दीन से फिर जाना) व लादीनियत (अधर्मता) का दरवाज़ा खोला जिसका सबसे पहले योरोप

शिकार हुआ, फिर दुनिया की दूसरी क़ौमें, जो योरोप की विचारधारा अथवा सत्ता के प्रभाव में आयीं इससे प्रभावित हुईं कोई कम, कोई अधिक वर्तमान संसार की वस्तुस्थिति जिसमें मज़हब व अख़लाक़ का पतन और भोग विलास अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई है, इसी दीन व दुनिया के भेद का नतीजा है।

अल्लाह के रसूल मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का यह महानतम चमत्कार और इन्सानियत के लिए महानतम भेंट आपकी सारे जहानों के लिए रहमत होने का मज़हर (रूप) है कि आप पूरे तौर पर रसूले वहदत (एकता के दूत) हैं और एक साथ "बशीर" (खुशख़बरी देने वाला) और "नजीर" (डराने वाला) हैं। आपने दीन व दुनिया के विरोधाभास के नजरिया (दृष्टिकोण) को ख़त्म करके पूरी ज़िन्दगी को इबादत में और भूतल को एक विशाल इबादतगाह (पूजा स्थल) में बदल दिया। दुनिया के इन्सानों को संघर्षरत कैम्पों से निकाल कर सद्कर्म, जनसेवा और अल्लाह की प्रसन्नता हासिल करने के एक ही मोर्चे पर खड़ा कर दिया। यहाँ दुनिया के पहनावे में दरवेश (सन्त), शाही जुब्बः में फ़क़ीर व ज़ाहिद, तलवार और तस्बीह के एक साथ रखने वाले, रात के इबादत गुजार और दिन के घुड़सवार नज़र आयेंगे। और उनको इसमें किसी प्रकार का विरोधाभास महसूस नहीं होगा।

छठी क्रान्ति यह है कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अभ्युदय (बेअसत) से पहले इन्सान अपने लक्ष्य से बेख़बर था। उसको याद नहीं रहा था कि उसको कहाँ जाना है? उसकी क्षमताओं का असल मैदान और उसकी कोशिशों का असल निशाना क्या है? मनुष्य ने कुछ अस्पष्ट लक्ष्य और अपनी कोशिशों के लिए कुछ छोटे–छोटे

दायरे बना लिये थे, उनमें उनकी क्षमतायें खर्च हो रही थीं। कामयाब और बड़ा इन्सान बनने का मतलब सिर्फ यह था कि मैं धनी बन जाऊँ, शक्तिमान और हाकिम बन जाऊँ। बड़े से बड़े इलाके (क्षेत्र) और अधिक से अधिक इन्सानों पर मेरी हुक्मरानी हो। लाखों आदमी ऐसे थे जिनकी कल्पना की उड़ान, साज–सज्जा, रंग व राग, लज्जत व स्वाद, चौपायों की नकल से बुलन्द नहीं होता था। हजारों इन्सान ऐसे थे जिनकी सारी बुद्धि अपने समय के दौलतमन्दों और तकतवरों तथा दरबारों में खुशामद या बेमकसद शायरी से दिल खुश करने में खर्च हो रही थी। हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मानव जाति के सामने उसकी वास्तविक मंज़िल ला कर खड़ी कर दी आपने यह बात दिलों में बिठा दी कि सृष्टा की सही मारफत (पहचाना) उसकी जात व सिफात (गुण) और उसकी कुदरत व हिकमत युक्ति का सही ईमान व यकीन की प्राप्ति, खुदा का प्रेम, उसको राजी करना और उससे राज़ी हो जाना, इस अनेकता में एकता की तलाश, इन्सान की वास्तविक सौभाग्य है। अपने अन्तःकरण को सशक्त बनाना, ईमान व यक़ीन की दौलत से मालामाल होना, मानव–सेवा द्वारा खुदा को राजी करना और कमाल व तरक्की की उस सीढ़ी तक पहुँच जाना जहाँ तक फरिश्ते भी नहीं पहुँच सकते, इन्सान के प्रयासों का असल मैदान है।

आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अभ्युदय (बेअसत) के बाद दुनिया की रूत बदल गयी, इन्सानों के मिजाज बदल गये, दिलों में खुदा की मुहब्बत का अंगारा भड़का, खुदा प्राप्ति की ललक आम हुई, इन्सानों को एक नई धुन खुदा की सृष्टि को खुदा से मिलाने और उसको लाभ पहुँचाने तथा खुदा को राजी करने की लग गयी, जिस तरह बसन्त या बरसात के मौसम में ज़मीन में उर्वरा शक्ति, सूखी सी

टहनियों में हरियाली पैदा हो जाती है, नई–नई कोपलें निकलने लगती हैं, उसी तरह मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अभ्युदय के बाद दिलों में नई हरारत पैदा हो गयी। करोड़ों इन्सान अपनी हक़ीक़ी मंज़िल की तलाश और उस पर पहुँचने के लिए निकल खड़े हुए। हर मुल्क और कौम में यही भावना और यही नशा और हर तब्क़े में इस मैदान में एक दूसरे से बाज़ी ले जाने की होड़ नज़र आती है। अरब व अजम (ग़ैर अरब), मिस्र व सीरिया, तुर्किस्तान व ईरान, ईराक व खुरासान, उत्तरी अफ्रीका और स्पेन और अन्ततः हमारा मुल्क हिन्दुस्तान और सुदूर पूर्वी द्वीप समूह सब इस मधुशाले के मतवाले और इसी मक़सद के दीवाने नज़र आते हैं। ऐसा लगता है जैसे इन्सानियत सदियों की नींद सोते–सोते जागी। आप इतिहास व तज़किरे की किताबें पढ़िये तो आपको नज़र आयेगा कि खुदा प्राप्ति के अलावा कोई काम ही न था। शहर–शहर, कस्बा–कस्बा, गाँव–गाँव बड़ी तादाद में ऐसे खुदा मस्त, साहसी, जन सेवक, इन्सान दोस्त, त्यागी इन्सान नज़र आते हैं जिन पर फरिश्ते भी रश्क करें। उन्होंने दिलों की सर्द अंगेठियाँ गर्मा दीं! कला–कौशल के दरिया बहा दिये, इश्के इलाही (ईशप्रेम) का शोला भड़का दिया, मारफत व मुहब्बत की ज्योति जगा दी और जेहालत, वहशत, जुल्म व अदावत से नफ़रत पैदा कर दी। मसावात (समरस्ता) का सबक़ पढ़ाया। दुखों के मारे और समाज के सताये हुए इन्सानों को गले लगाया। ऐसा मालूम होता है कि बारिश के क़तरों की तरह ज़मीन के हर चप्पे पर यह चीज़ें ज़हिर हुई और उनका शुमार नामुमकिन है।

नबूवत (दूतकर्म) का असल कारनामा

हमारी आधुनिक सभ्यता और मौजूदा वैचारिक नेतृत्व मानव

समाज को जिम्मेदारियाँ संभालने वाले व्यक्ति तैयार करने और इन्सान की किरदार साजी में बुरी तरह नाकाम रही है। वह सूरज की किरणों को कैद कर सकती है। वह अन्तरिक्ष यात्रा के लिए सुरक्षित और तेज रफ्तार उपकरण मुहैया कर सकती है। वह अणुशक्ति से बड़े–बड़े काम ले सकती है, वह मुल्क से गरीबी दूर कर सकती है, वह पूरे–पूरे राष्ट्र को साक्षर बना सकती है। उसकी इन कामयाबियों से किसी को इन्कार की गुंजाइश नहीं। लेकिन वह नेक और आस्था वाले लोग पैदा करने में बिल्कुल असमर्थ है और यही उसकी सबसे बड़ी नाकामी और दुर्भाग्य है। और इसी कारण सदियों की मेहनतें बर्बाद हो रही हैं। सारी इन्सानी दुनिया निराशा और बिखराव का शिकार है। और अब उसका ज्ञान–विज्ञान पर से भी विश्वास उठ रहा है। आशंका है कि दुनिया में एक तीव्र प्रतिक्रिया का आन्दोलन और ज्ञान व सभ्यता के खिलाफ़ बग़ावत के दौर की शुरूआत न हो जाये। फसादी लोगों ने मासूम और नेक साधनों को भी फसादी बल्कि फसाद व तोड़–फोड़ का आला बना दिया है। आधुनिक सभ्यता की कश्ती मौजों की ताब नहीं रखती, उसका हर तख़्ता घुन खाया हुआ और दीमक का चाटा हुआ है। कमजोर तख़्तों से कोई उम्दा व मजबूत बेड़ा तैयार नहीं हो सकता। यह भ्रम है कि कमजोर तख़्ते अलग–अलग फासिद, कमजोर और अविश्वसनीय है, लेकिन जब इनको एक दूसरे से जोड़ दिया जाये और उनसे कोई सफीना (बेंड़ा) तैयार किया जाये तो वह ठीक हो जाते हैं। डाकू और चोर अलग–अलग तो रहजन और चोर है लेकिन जब वह अपनी पार्टी बना लें तो वह पासबानों और जिम्मेदार इन्सानों की पवित्र पार्टी हैं।

नये वैचारिक नेतृत्व ने जो व्यक्ति दुनिया को दिये हैं वह ईमान व यक़ीन (आस्था व विश्वास) से ख़ाली, मानव–आत्मा से वंचित,

नैतिक अनुभूति से महरूम, प्रेम और निष्ठा के भावार्थ से अपरिचित, मानवता की प्रतिष्ठा और सम्मान से गाफिल हैं। वह या तो स्वाद व सम्मान के फल्सफ़ा से वाकिफ़ हैं या फिर राष्ट्रवाद और देशभक्ति के भावार्थ से परिचित हैं इस तरह के लोग चाहे लोकतांत्रिक व्यवस्था के मुखिया हों या कम्युनिस्टिक व्यवस्था के जिम्मेदार कभी कोई स्वस्थ समाज, शान्तिपूर्ण माहौल और खुदा से डरने वाली व पाकबाज़ सोसाइटी क़ायम नहीं कर सकते, और उन पर खुदा की सृष्टि की किस्मत के बारे में कभी भरोसा नहीं किया जा सकता। इस दुनिया में अत्यन्त नेक लोग और अत्यन्त नेक समाज सिर्फ नबूवत ने तैयार किया है और उसी के पास दिल को फेरने और गरमाने, मन को झुकाने और जमाने, नेकी और पवित्रता की मुहब्बत, और गुनाह और बदी से नफरत पैदा करने, धन दौलत, मुल्क व सल्तनत, मान सम्मान, रियासत व बरतरी का जादुई आकर्षण का मुकाबला करने की ताकत पैदा करने की क्षमता है। लोग जो इन क्षमताओं के मालिक हों दुनिया को बर्बादी से और आधुनिक सभ्यता को तबाही से बचा सकते हैं। नबूवत ने दुनिया को साइंस का ज्ञान नहीं दिया, ईजादें नहीं दीं, उसका कारनामा यह है कि उसने दुनिया को वह लोग दिये जो स्वयं सही रास्ते पर चल सकते हैं और दुनिया को चला सकते हैं और हर अच्छी चीज़ से स्वयं नफा उठा सकते हैं, दूसरों को पहुँचा सकते हैं और जो हर शक्ति और वरदान को ठिकाने लगा सकते हैं, जो जीवन के उद्देश्य से वाकिफ और पैदा करने वाले से अवगत हैं और उसकी ज़ात से लाभान्वित होने और उससे और अधिक नेअमतें हासिल करने की योग्यता रखते हैं।' उन्हीं का वजूद इन्सानियत की असल पूँजी और उन्हीं की दीक्षा नबूवत का असल कारनामा है।

ख़त्म नबूवत का अक़ीदा (विश्वास) एक इन्सानी ज़रूरत

यह अक़ीदा कि दीन (धर्म) मुकम्मल हो चुका है और अल्लाह के रसूल मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम खुदा के आख़िरी पैग़म्बर और ख़ातिमुन्नबीईन हैं और यह कि इस्लाम खुदा का आख़िरी पैग़ाम और जीवन की पूर्ण व्यवस्था है, अल्लाह का एक इनआम है जिसको ख़ुदा ने इस उम्मत के साथ खास किया। इसीलिए एक यहूदी विद्वान ने हज़रत उमर के सामने इस पर बड़े रश्क और हसरत व्यक्त किया और कहा कि कुर्आन की एक आयत है जिसको आप लोग पढ़ते रहते हैं, अगर वह हम यहूदियों की किताब में उतरती और हमसे सम्बन्धित होती तो हम उस दिन को जिसमें यह आयत उतरी है, अपना राष्ट्रीय पर्व बना लेते। वह आयत सूरः माइदा की यही आयत थी जिसका अर्थ है:—

अनुवाद— *आज हमने तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन (धर्म) मुकम्मल कर दिया और तुम पर अपनी नेअ़मत पूरी कर दी, और तुम्हारे लिए धर्म के रूप में इस्लाम को पसंद किया।*

(सूरः अल्–माइदः ३)

हज़रत उमर ने इस नेअमत की महानता से इन्कार नहीं किया सिर्फ इतना कहा कि हमें किसी नये खुशी के दिन और त्योहार की ज़रूरत नहीं। यह आयत खुद ऐसे मौक़े पर उतरी है जो इस्लाम में एक शानदार महासम्मेलन और इबादत का दिन है। इस मौक़े पर दो ईदें एकत्र थीं, यौमे अरफः (नौ जिलहिज्जा) और जुमा का दिन।

ख़त्म नबूवत के अकीदे ने इस्लाम को फूट पैदा करने वाले उन आन्दोलनों का शिकार होने से बचा लिया जो इस्लाम के दीर्घकाल

इतिहास और इस्लामी जगत के विस्तृत क्षेत्रफल में समय–समय पर सर उठाते रहे। ''ख़त्म नबूवत'' के इसी घेरे के भीतर मिल्लत (मुस्लिम सम्प्रदाय) उन नबूवत के दावेदारों की चढ़ाई से सुरक्षित रही जो इतिहास के विभिन्न चरणों और इस्लामी जगत के विभिन्न भागों में पैदा होते रहे और वह उन तमाम खतरों का मुकाबला कर सकी जिनसे किसी पैगम्बर की उम्मत इससे पहले सुरक्षित नहीं रही और इतनी लंम्बी अवधि तक इसकी दीनी वहदत् और यकसानी (एकता) क़ायम रही। अगर यह घेरा न होता तो यह उम्मत ऐसी अनेक उम्मतों में बट जाती जिनमें से हर उम्मत का रूहानी मरकज (आध्यात्मिक केन्द्र) अलग होता, ज्ञान और सभ्यता का स्रोत अलग होता, हर एक का अलग इतिहास होता, हर एक के अलग पूर्वज और धार्मिक रहनुमा होते, हर एक का अलग अतीत होता।

ख़त्म नबूवत (नबूवत का समापन) का अक़ीदा वास्तव में मानव–जाति के लिए एक प्रतिष्ठा और विशिष्टता है। वह इस बात का ऐलान है कि मानव जाति प्रौढ़ता को पहुँच गयी है और उसमें यह योग्यता पैदा हो गयी है कि वह खुदा के आख़िरी पैग़ाम को क़बूल करे। अब मानव समाज को किसी नई वह्इ, किसी नये आसमानी पैगाम की ज़रूरत नहीं। इस अकीदे से इन्सान के अन्दर आत्मविश्वास पैदा करने में मदद मिलती है। उसको यह मालूम होता है कि दीन अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुका है और अब दुनिया को इससे पीछे जाने की ज़रूरत नहीं। अब दुनिया को नई वह्इ के लिए आसमान की तरफ देखने के बजाय ख़ुदा की पैदा की हुई ताक़तों से फायदा उठाने और ख़ुदा के नाज़िल किये हुए दीन व अख़लाक (धर्म व आचरण) के बुनियादी उसूलों पर जीवन की व्यवस्था के लिए जमीन की तरफ और अपनी तरफ देखने की ज़रूरत है। ख़त्म नबूवत का

अक़ीदा **इंसान को पीछे** की तरफ करने की **भावना पैदा करता** है, यह अक़ीदा **इन्सान को** अपने प्रयासों का मैदान और दिशा बतलाता है। अगर खत्म नबूवत का अक़ीदा न हो तो इन्सान हमेशा अनिश्चितता व अविश्वास के आलम में रहेगा। वह हमेशा ज़मीन की तरफ देखने के बजाय आसमान की तरफ देखेगा वह हमेशा अपने भविष्य की तरफ से असंतुष्ट और आशंकित रहेगा। उसको हर बार हर नया व्यक्ति यह बतलायेगा कि मानवता की वाटिका और रौज–ए–आदम (आदम का बग़ीचा) अभी तक अपूर्ण थी अब वह डाल–पात से पूरी हुई है। और वह यह समझने पर मजबूर होगा कि जब इस तरह वह बजाय इसकी सिंचाई और इसके फल–फूल के फायदा उठाने के नये बाग़बान का इन्तज़ार करेगा जो उसको डाल–पात से पूरा करे।

मुस्लिम समप्रदाय की सबसे बड़ी विशेषता

मैं इतिहास के एक विद्यार्थी बल्कि एक लेखक, और विश्व–इतिहास के एक जानकार की हैसियत से और फिर इसके साथ दुनिया के अनेक देशों और दुनिया के एक बड़े हिस्से का भ्रमण करने वाले एक दायी की हैसियत से भी आपके सामने कुछ विशेष बातें रखना चाहता हूँ, ऐसी बातें जो इस विषय पर निर्णायक सिद्ध होंगी, अल्लाह तआला कहता है–

अनुवाद– *आज हमने तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन (धर्म) मुकम्मल कर दिया और तुम पर अपनी नेअमत पूरी कर दीं, और तुम्हारे लिए हमने धर्म के रूप में इस्लाम को पसंद किया।*

(सूरः अल–माइदः ३)

दूसरी आयत में कहा–

अनुवाद– मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तुम पुरुषों में से किसी के बाप नहीं बल्कि वह अल्लाह के रसूल और अंतिम नबी (ईशदूत) हैं।

इन आयतों से उम्मत को नहीं बल्कि संसार को जो दौलत मिली है जो विशेषता मिली है, उस पर भी बहुत कम लोगों ने गौर किया। एक बात तो यह है कि इन आयतों से हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नबूवत के समापन का ऐलान किया कि आप खातिमुन्नबीईन हैं, नबूवत का सिलसिला आपकी ज़ात पर समाप्त होता है, अब कोई नबी नहीं आयेगा। अब कोई दर्जा और अधिक तालीम व इस्लाह का बाक़ी ही नहीं रहा कि किसी नये नबी की ज़रूरत बाक़ी रहती। नबूवत के दावा की गुंजाइश ख़त्म हो जाती है। अल्लाह ने इस दीन (अर्थात इस्लाम) को परिपूर्ण कर दिया और अपनी नेअमत पूरी कर दी। इसके बाद यह बात सुस्पष्ट हो जाती है कि अब दीन में किसी संशोधन, घटाने बढ़ाने की गुंजाइश बाक़ी नहीं रही और न ही किसी नबी के अभ्योदय (बेअ्सत) की आवश्यकता।

यह इस उम्मत पर अल्लाह का एक महान उपकार व इनाम है और इसकी विशेषता कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के निधन से पहले ही, यह खुला ऐलान कर देना था कि नबूवत का मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर समापन हो गया। और दीन और खुदा के महान वरदान को परिपूर्ण कर दिया गया। अब न मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के बाद कोई नबी आयेगा, और न ही मुस्लिम संप्रदाय के बाद कोई मिल्लत होगी।

इस एलान से हमें बड़ा सबक़ और सन्देश मिलता है। पहली बात तो यह इससे सुस्पष्ट होती है कि क़यामत तक के लिए अब इस उम्मत के अक़ीदे भी एक होंगे, अरकान (स्तम्भ) भी एक होंगे, दूसरी

बात यह कि हर काल में हर दौर में और हर उस जगह जहाँ मुसलमान आबाद हैं, वहाँ पर एक वहदत (एकता) पायी जायेगी, अर्थात दीनी वहदत।

अक़ीदों की वहदत (एकता)

"अक़ीदों की वहदत" यह है कि इस "उम्मत" के (जो अपने को मुसलमान कहती है, कुर्आन का कलिमा पढ़ती है, इस्लाम का दावा करती है) अक़ायद हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अभ्योदय (बेअसत) से लेकर क़यामत (महाप्रलय) तक एक रहेंगे, तोहीद पूरी रहेगी। पैगम्बरों की रिसालत (दूतता) और नबियों की नबूवत पर ईमान जिन्हें अल्लाह ने अपने–अपने समय और अपनी–अपनी जगह इस नाज़ुक और अज़ीम (महान) काम के लिए चुना, और फिर अन्तिम नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम कि जिन के बाद अब कोई नबी नहीं आयेगा, पिछले पैगम्बरों की रिसालत पर भी ईमान, ख़त्म नबूवत पर ईमान, कि अब किसी को भी क़यामत तक नबूवत नहीं मिलनी है। यह कोई मामूली और हल्की बात नहीं है, दुनिया में किसी भी उम्मत को यह फज़ीलत (बड़ाई) नहीं मिली।

अरकान की वहदत (एकता)

"अरकानी वहदत" यह है कि दीन के अरकान (स्तम्भ) में तनिक भी अंतर नहीं आने दिया जायेगा, न किसी ज़माने में न किसी इलाके में, कि हालात को देखकर नमाज़ तीन वक्त की कर दी जाय या कोई और परिवर्तन लाया जाये, या यह कि रोजा के दिन बदल दिये जायें। एक चुटकुला याद आया। बड़े पद पर प्रतिष्ठित एक माननीय व्यक्तित्व ने (मैं नाम नहीं लूँगा) हमसे कहा कि मौलाना

साहब! आप लोग इतने सख़्त मौसम में रोज़े रखते हैं, रमज़ान जाड़े में क्यों नहीं कर लेते। तो याद रखिये! अरकान जैसे थे वैसे ही रहेंगे, और उसी तरह अदा किये जायें, नमाज वही पाँच वक़्तों की, रोज़े वही रमजान के मुबारक महीने के, न जाड़े से उसमें फर्क़ आयेगा न गर्मी से, ज़कात (विशेष इस्लामी दान) उसी तरह अपने निज़ाम (पद्धति) व निसाब (धन की निर्धारित मात्रा) के मुताबिक जो बनाया गया है और जिसकी हमें तालीम दी गयी है, "हज" ठीक उसी तरह "बैतुल्लाह शरीफ (कअ्बा) का अपने तमाम मानासिक (कर्म) के साथ बिना किसी फर्क़ और तब्दीली के और इसके तमाम मानासिक (कर्म) हमेशा एक ही रहेंगे। क़यामत तक इसमें कोई फर्क नहीं हो सकता और न होने दिया जायेगा। यह जो वहदत्त है इसे वहदते अरकानी कहते हैं।

नबूवत के समापन का एलान इस उम्मत की हिफाज़त व बक़ा की जमानत लेता है

आप इतिहास का अध्ययन करें। हमने अल्हम्दुलिल्लाह (अल्लाह का शुक्र है) इतिहास का अध्ययन ख़ूब किया है। और हमें इसकी अपने लिखने-पढ़ने के कामों में बराबर ज़रूरत भी पड़ती रहती है। हमने यहूदी व इसाई धर्म की प्रामाणिक पुस्तकें भी पढ़ी हैं। आपको साफ नज़र आयेगा कि इनका पूरा इतिहास ज्वार-भाटा व उतार चढ़ाव का इतिहास है, पूरब-पश्चिम का इतिहास है, प्रेम और मतभेद का इतिहास है। अक़ायद में मतभेद, अरकान के अदा करने में मतभेद। यह जो मैं आपसे कह रहा हूँ मात्र उम्मत का एक व्यक्ति होने के नाते नहीं, इतिहास व धर्मों का अध्ययन रखने वाले की हैसियत से भी। जरा आप भी अध्ययन कीजिये, फ्रेंच की किताबें पढ़िये, जर्मन किताबें पढ़िये, इंग्लिश किताबें पढ़िये, धर्मों के इतिहास

का अध्ययन कीजिये। धर्मों का इतिहास लिखा गया है। आप इन इतिहासकारों को इसका एक़रार करते नहीं बल्कि शर्म से मानो मुँह पर हाथ रखते हुए बल्कि ऐसे हीन भावना के साथ इस हक़ीकत को बयान करते हुए देखेंगे और आप देखेंगे कि इस्लाम से पहले के धर्मों में से कोई भी धर्म ऐसा नहीं है कि उसके पैगम्बर ने जिस तरह एलान किया और जो बातें बताई वह धर्म उनकी बताई हुई शिक्षाओं के अनुसार सदियों चलता रहा हो। सदियों क्या बल्कि कभी तो आधी सदी और दहाइयों तक चलना मुश्किल हो गया।

इन धर्मों का इतिहास बताता है कि वहाँ ख़त्मे—नबूवत (नबियों के आने के क्रम की समाप्ति) का एलान नहीं किया गया था। यह कहीं नहीं मिलता है इन धर्मों को जो लोग सच्चा मानते हैं और इन पर पूरा यक़ीन रखते हैं और गर्व रखते हैं वह भी जहाँ तक हमारी मालूमात हैं इनमें से किसी ने यह दावा नहीं किया कि नबी व रसूल ने अपने अंतिम नबी होने का दावा किया हो। किसी ने भी ऐसा नहीं किया। न ही अल्लाह की तरफ से ऐसा ऐलान हुआ।

आप इन तमाम धर्मों के इतिहास में पढ़ेंगे, तनिक उदारता के साथ आप देखें तो आपको साफ नज़र आयेगा कि इनमे केवल विरोधाभास ही नहीं वरन् टकराव पाया जाता है, यह धर्म आरम्भ में यह कहता था और अब यह कहता है। इस मज़हब के पेशवा अगर यह न कहें तो कम से कम एहतियात के लिए यह कहते हैं। इस मज़हब के पेशवा और प्रवक्ता तथा इसके प्रामाणिक पंडित पहले यह कहते थे, अब उनकी राय वह नहीं यह है, इबादत यह है, नहीं यह इबादत नहीं थी बिदअत है। यह साबित है, नहीं यह साबित नहीं मफरूज़ः (मान लिया गया) है। आप देखेंगे कि इन धर्मों में अक़ीदों (विश्वासों)

का मत–भेद मिलेगा, अरकान की स्तम्भों का मत–भेद मिलेगा, ज़माने के साथ वह बदलते रहेंगे। युग के कारण भी और स्थान की वजह से भी मतभेद मिलेंगे। इसके आपको साफ–साफ नमूने मिलेंगे। ऐसे नमूने कि इस मज़हब के प्रचार का जो दायरा और क्षेत्र है, जो इसकी दुनिया है उसके किसी हिस्से में कुछ हो रहा है, किसी हिस्से में कुछ। यह सब इसका नतीजा था, कि वहाँ ख़तम नबूवत का ऐलान नहीं हुआ था, उन लोगों के लिए इसका मौका था, और गुंजाइश थी, वैध और अवैध की सम्भाविक गुंजाइश थी कि वह जो चाहें दावा करें। आज यह बात क्यों है कि सारी दुनिया की क्रान्तियों के बावजूद सियासी इन्क़लाब भी, सामूहिक और नैतिक क्रान्तियाँ भी, यह हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अभ्योदय से पहले नहीं पेश आयीं। यह इतिहास की गवाही है। इससे कोई इनकार नहीं कर सकता। ज्ञान–विज्ञान की क्रान्ति के साथ, तरक्क़ी के साथ, शोध कार्य के साथ, नयी–नयी खोज के साथ, नये–नये फायदे हासिल होने की उम्मीद के साथ, जो इसमें परिवर्तन करने और नया दीन और नया अक़ीदा पेश करने से हो सकते हैं, यह जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अभ्युदय के बाद हुआ है, इसके पहले कभी नहीं हुआ। मैं इतिहास से जानकार की हैसियत से कहता हूँ कि इसकी कोई मिसाल नहीं मिलती।

लेकिन इसके बावजूद यह दीन अब तक चला आ रहा है। नबी और रसूल जो गुज़र गये हैं, उन पर ईमान बाक़ी है। अभी भी अल्लाह की बरतरी, उसकी कुदरत और शान है कि जब किसी चीज़ का इरादा करता है तो बस उसका यह कहना कि हो जा तो वह चीज हो जाती है, और उसकी ज़ात की वहदत (एकता) है कि पूरे आलम का चलाने वाला वही है। इन सब के बावजूद यही एक चीज़ है जो

अभी तक बुनियादी अक़ायद पर क़ायम है, मैं उन चीज़ों को नहीं कहता जो किसी ने अपने सांसारिक लाभ के लिए या किसी रिशवत के नतीजे में या किसी फायदे के लिए, मान सम्मान के सिलसिले में पैदा कर दिया, दीन में वह चीज बिल्कुल नहीं चलने पाई। आज तक दीन बिल्कुल साफ और रौशन मौजूद है। और सब जानते हैं कि अगर नीयत ख़राब नहीं है और ख़ुदा का डर अगर किसी दर्जे में बाक़ी है तो वह बिदअत और सुन्नत को समझता है कि वह सुन्नत है और यह बिदअत है, बिदअत को कोई भी सुन्नत साबित नहीं कर सकता, गुनाह को कोई भी इबादत साबित नहीं कर सकता, शिर्क को कोई तौहीद साबित नहीं कर सकता। कोई अल्लाह की रज़ा (प्रसन्नता) का ऐसा तरीका, जिसमें रस्म व रिवाज की बू आती हो, दुनियावी फायदा हो, नहीं जाना जा सकता। यह किस बात का नतीजा है, यह नतीजा है ख़त्म नबूवत के ऐलान का।

आज आप योरोप व अमेरीका के आख़िरी सिरे तक चले जाइये क्षमायाचना के साथ कहता हूँ कि कम लोगों को इतने भ्रमण का इत्तफाक़ हुआ होगा जितना हमें हुआ। इसमें हमारी योग्यता को दख़ल नहीं यह केवल अल्लाह का फ़ज़्ल (कृपा) व इनाम है कि कम से कम इस्लामी दुनिया को ले लीजिये, गैर इस्लामी दुनिया की भी हमने ख़ूब सैर की है, योरोप, अमेरीका व अफ्रीका सब हमने देखे हैं। इस्लामी दुनिया का तो शायद ही कोई कोना हमसे बचा हो, मोरक्को के अन्तिम छोर तक मैं गया हूँ, और फिर इसके बाद ताशक़न्द व बुख़ारा और समरकन्द भी जाना हुआ है, वहाँ नमाज़ें भी पढ़ी हैं, बुज़ुर्गों के मज़ारों की ज़ियारत (दर्शन) भी की है, इसके अलावा अरब दुनिया का कोई मुल्क नहीं जहाँ मैं न गया हूँ। ईराक, सीरिया, मिस्र, लीबिया, जार्डन, तुर्की, खाड़ी का इलाक़ा और सिर्फ एक मुल्क ही नहीं

शहर–शहर गया हूँ लेकिन कोई जगह ऐसी न पाई जहाँ दीन की बुनियादी बातों में फर्क पाता। यहाँ दीन के अरकान (स्तम्भ) कुछ हों, वहाँ कुछ हों। नमाज पढ़ी भी और अल्लाह के फज़्ल से पढ़ाई भी, लेकिन इसके लिए हमें कोई गाइड बुक तक नहीं दी गई कि आप नमाजें पढ़ाने जा रहे हैं, यहाँ आपके मुल्क की तरह नमाज़ नहीं होती यहाँ वज़ू के बाद यह–यह करना और पढ़ना होता है, यहाँ खड़े होकर एक ख़ास दुआ पढ़नी होती है, यहाँ दीवारों पर यूँ हाथ लगाना होता है, यहाँ नमाज़ शुरू करने से पहले यह शब्द कहने पड़ते हैं, विशेष प्रकार की शिक्षा देनी पड़ती है कुछ कहना पड़ता है अगर क़ब्र है तो उसके आगे झुकना पड़ता है, बेजान से आवश्यकता पूरी करनी पड़ती है। यह कितना विशाल संसार है। चप्पे–चप्पे पर मुसलमान आबाद हैं लेकिन एक तरह की नमाज़ हर तरफ हो रही है। जाकर आप कहीं देख लीजिये। अफग़ानिस्तान, तुर्किस्तान, इंग्लैंड, मोरक्को, मिस्र, स्पेन, रूस, चीन और जापान कहीं चले जाइये, इधर लीबिया, सूडान जाकर देख लीजिये, आप इतमीनान से नमाज़ पढ़ सकते हैं। खुदा के फज़्ल से यह सम्मान व प्रतिष्ठा भी हमें हासिल हुई मगर किसी ने कुछ कहने की ज़रूरत न समझी और हमने कुछ पूछने की, वक्त हुआ तो कहा गया आगे बढ़िये, आगे गया, बाद में भी किसी को कोई शंका, ऐतराज नहीं हुआ और न कोई कमी लगी।

सब फ़ैज़ है ख़त्मे नबूवत का।

आख़िर यह किस बात का नतीजा है, यह नतीजा है ख़त्म नबूवत का। अगर यह ख़त्म नबूवत की दौलत न होती तो इस उम्मत को यह विशिष्टता न मिलती। मैं आपसे साफ कहता हूँ कि यह जो आप यहाँ बैठे, इतने विशाल मैदान में बड़ी संख्या में इकट्ठा हुए दीन

की बातें सुन रहे हैं यही नमाज, यही रोजा, यही ज़कात, यही हज, सारे अरकान इसी तरह बाकी है। राजनैतिक क्रान्तियाँ आई और कितनी रूकावटें पैदा हुई, समुद्र का सफर कितना खतरनाक बन गया, लेकिन हज का सफर उसी तरह चला आ रहा है। कोई भी इसको रोक न सका, बड़ी–बड़ी घटनायें घटित हुईं, हंगामे बरपा हुए, कुछ अंतर न पड़ा, कैसे–कैसे इन्क़लाब आये, हुकूमतें हट गयीं, माहौल बदल गया लेकिन हज जैसा कल फर्ज़ था आज भी फर्ज़ है, आज वैसे ही लोग हंज को जा रहे हैं जो पहले जाते थे बल्कि अब तो बहुत बड़ी संख्या में जा रहे हैं कोई इसको रोक न सका। हिजाज़ में तो राजनीतिक व्यवस्था में ठहराव रहा ही नहीं। पहले किसी और की सत्ता। फिर शरीफ मक्का आये वह गये तो अब आले सऊद हुक्मरां हैं।

व्यवस्था और राजनीतिक परिवर्तन जो हों लेकिन दीन के अरकान में कोई परिवर्तन नहीं। हज की अदायगी में कोई रूकावट पैदा नहीं हुई। अल्लाह के फ़ज़्ल से हरमैन शरीफ़ैन (मक्का व मदीने का विशेष क्षेत्र) से उमरा करके अभी कुछ दिन हुए आ रहा हूँ वही काबा, वही मताफ़, वही हरम शरीफ वही तवाफ। ज़मानों के साथ तवाफ़ में कमी ज़्यादती की जाती या इसकी सलाह दी जाती, ऐसा कुछ नहीं हुआ। जैसा हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम कर गये और बता गये वैसा ही आज जारी है। आज दीन वैसा ही है जैसा सहाबा ताबेईन, वलियों, बुजुर्गों के ज़माने में था। अगर कुछ बातों में नई चीज़े आ गयी हैं तो यह नतीजा है जेहालत का, गफलत का, मनमानी का, दावा कोई नहीं कर सकता कि यह सही है। कुर्आन में न कोई संशोधन कर सकता है, न यह सुन सकता है और देख सकता है। अल्लाह ने साफ–साफ कह दिया है:–

*अनुवाद– इस नसीहत नामा (कुर्आन) को हमने हाँ हम ही ने **उतारा** है और हम ही इसके निगहबान (रक्षक) हैं।*

(सूरः हिज १)

शरीअत में इज़ाफा करने वाला गुस्ताख़ है

हमें इस नेअ़मत (वरदान) की कद्र करनी चाहिए **और इस पर** अल्लाह का शुक्र अदा करना चाहिए, गर्व करना चाहिये और **मुसलमानों** को इस पर गर्व करने का पूरा हक़ है कि उनका दीन परिपूर्ण **हो चुका** है। पूरी शरीअत अब हमारे सामने है। अब इस शरीअत **(ईश्वरीय** संविधान) में कोई इज़ाफ़ा नहीं होना है। और अगर ऐसा **करने का** दुस्साहस करता है तो वह गुस्ताख़े रसूल सल्लल्लाहु अलैहि **वसल्लम है।** हम किसी भी योरोपियन अंग्रेज और किसी भी दूसरे धर्म **के मानने** वाले से यह कहने का हक रखते हैं कि कहीं भी चले जाइये **यही** शरीअत मिलेगी जो यहाँ है, यही अहकाम मिलेंगे जो यहाँ **है, यही** अरकान मिलेंगे जो आप यहाँ देख रहे हैं। नमाज़ के जो अवक़ात **यहाँ** हैं वही दूसरी जगह। वही लन्दन में वही न्यूयार्क में, वही मास्को में, वही पेरिस में, कहीं कैसे भी हालात हों, मौसमी हालात हों, **सियासी** हालात हों, ख़तरात हों, सफर करना हो, गर्म इलाक़े हों या **ठँडे इसमें** कोई परिवर्तन नहीं। छोटे या बड़े दिन के कारण नमाज़ पाँच **वक़्त से** घटा कर तीन वक़्त या पाँच वक्त से बढ़ाकर सात वक़्त की न **कर** दी जाये या मग़रिब की अस्र के वक़्त या अस्र की जुहर के वक़्त **कर** दी जाये यह सब कुछ भी नहीं। न कहीं ऐसा है न कभी हो सकता है। याद रखिये यह उसका फैज है और देन है ख़त्म नुबूवत के ऐलान का।

अध्याय तीन

आख़िरत

कुर्आन में आख़िरत का बयान और उसके तर्क

अल्लाह की ज़ात व सिफ़ात (गुण) के ज्ञान के बाद दूसरा बड़ा ज्ञान जो नबी दुनिया को प्रदान करते हैं और जो उनके बिना किसी अन्य स्रोत से कदापि नहीं मिल सकता, वह यह ज्ञान है कि इन्सान मर कर दोबारा ज़िन्दा होगा और यह संसार टूट–फूट कर दोबारा बनेगा। उस दूसरी ज़िन्दगी में इन्सान को अपनी पहली ज़िन्दगी का हिसाब व किताब देना होगा। उसने दुनिया की ज़िन्दगी में कुछ किया वह उसके सामने आयेगा।

इन्सान के पास इस ज्ञान की प्राप्ति के लिए नबियों के अलावा कोई साधन नहीं, इन्सान के पास हासिल करने की जो ताक़तें हैं उनसे न यह ज्ञान प्रारम्भिक रूप से हासिल किया जा सकता है न इसको नकारा जा सकता है। ज्ञानेन्द्रियाँ, बुद्धि, अनुभव और इनके अलावा इन्सान की निहित शक्तियों और आध्यात्म में से कोई स्रोत ऐसा नहीं है जिससे इस दुनिया की ज़िन्दगी के अतिरिक्त किसी और ज़िन्दगी के अस्तित्व और उसके विवरण को साबित किया जा सके और न कोई पद्धति सम्भव है कि इस ज़िन्दगी में आख़िरत की बातों को देखा जा सके। यह जानकारी सब ग़ैब (परोक्ष) से सम्बन्ध रखती हैं और ग़ैब को इन्सान खुद नहीं जान सकता। उसके ज्ञान और उसकी अक़्ल इसके हासिल करने में इन्सान की कोई मदद नहीं कर सकते।

इन्सान के लिए दो ही बातें शेष रह जाती हैं या नबियों पर

भरोसा करके और उसके दावा की सच्चाई के प्रमाणों व लक्षणों को देखकर उनके बयान की तस्दीक़ या बिना किसी सबूत और तर्क के उसका इन्कार।

अनुवाद— *आप कह दीजिए, आसमानों और ज़मीन में कोई भी ऐसा नहीं, जो ग़ैब (परोक्ष) का ज्ञान रखता हो, सिवाय अल्लाह के और, वे नहीं जानते कि कब उठाए जायेंगे।" बल्कि आख़िरत के बारे में उन लोगों की जानकारी असमर्थ हो गयी है, बल्कि वे उसकी ओर से शक में हैं, बल्कि वे उससे बिल्कुल अन्धे हैं।* –

(सूरः अ–नम्ल ६५–६६)

लेकिन जैसा कि ऊपर कहा गया है, इस पेश आने वाली सच्चाई की निशानियाँ और इसके वजूद की सम्भावनायें इस दुनिया में और इस जीवन में मिलते हैं जिनसे इन्सान यह अनुमान लगा सकता है कि ऐसा होना हर प्रकार मुमकिन है। और इससे कोई बौद्धिक शंका नहीं है।

इसका एक बड़ा लक्षण और इसका एक गवाह खुद इन्सान की पैदाइश और उसका जीवन है। उसने न होने से होने तक, फिर होने के बाद अस्तित्व की परिपूर्णता तक कितने सोपान तय किये हैं। उसने वीर्य से नुत्फ़े, नुत्फ़े से जमे हुए ख़ून की या जोंक का रूप धारण किया फिर एक गोश्त का टुकड़ा बना, फिर हड्डियों का ढाँचा बना, फिर उस पर मास चढ़ाया गया, फिर वह एक दूसरी सृष्टि बन कर प्रकट हुआ। फिर उसे पेट की अन्धेरी कोठरी से निकालने के बाद वह कुछ समय तक शैश्वावस्था में रहा, फिर जवान हुआ, फिर या तो उसका दूसरा क़दम मौत की चौखट पर पड़ा या उसको इतनी मुहलत मिली कि जीवन की इस बहार को देख कर उसने बुढ़ापे का

पतझड़ भी देखा और जीवन का उल्टा सफर शुरू हुआ अर्थात जवानी के बाद बुढ़ापे में फिर उस पर बचपने की बातें तारी होने लगीं, उसकी शक्तियों ने एक–एक करके जवाब दिया, स्मरण शक्ति ने साथ छोड़ा, वह बच्चों की तरह बेबस, दूसरों के सहारे का मुहताज हुआ, उस पर खुद फरामोशी तारी रहने लगी। उसके लिए हर जानी पहचानी चीज अंजानी हो गयी।

इस मंजिल पर सफर का एक हिस्सा ख़त्म हो गया, लेकिन उसका सफर ख़त्म नहीं हुआ, सफर की सिर्फ एक बीच की मंज़िल पेश आई जिसका नाम मौत और आलमे बरज़ख है:–

मौत एक मान्दगी का वकफ़ा है
यानी आगे चलेंगे दम ले कर।

अतः जिस इन्सान की असल व हक़ीक़त (मिट्टी और पानी) और फिर उसकी शुरूआत और उसकी उत्पत्ति मालूम है, उसके नज़दीक मर कर ज़िन्दा होने में कौन सी बौद्धिक शंका है और जिसने इन्सान में इतने इन्क़लाब देखे उसके लिए एक आख़िरी इन्क़लाब को मुमकिन मानने में क्या कठिनाई है। ज़िन्दगी बाद मौत का दुसरा खुला हुआ नमूना ज़मीन की दोबारा जिन्दगी के दृश्य हैं जो बार–बार आँखों के सामने आते रहते हैं, यह ज़मीन जिसके सीने में हजारों पैदा होने वाले इन्सान और ज़िन्दा होने वाले हैवानों की ज़िन्दगी की अमानतें और खज़ाने हैं, वह खुद मुर्दा पड़ी होती है, उसके होंटों पर सूख कर पपड़ियाँ जम जाती हैं, वह मिट्टी का एक बेहिस व बेजान लाश होता है जिसमें न खुद जिन्दगी होती है और न किसी और चीज के लिए सामान, लेकिन जब उसके होंटों पर पानी की बूँदें गिरती हैं और उसके गले से होकर सीने तक पहुँच जाती हैं, तो वही ज़मीन मौत

की नींद से अचानक जाग जाती है, उसमें जीवन की लहर दौड़ जाती है, वह झूम उठती है, उसका मुँह दौलत हरियाली और ज़िन्दगी का खजाना उगल देता है। लहलहाती खेती, भूतल पर रेंगने वाले कीड़े, साँप, नेवले आदि पृथ्वी के अन्दर जीवन और जीवनदायी का पता देते हैं। बरसात और बहार के मौसम में ज़मीन की इस ज़िन्दगी का दृश्य किसने अपनी आँखों से नहीं देखा?

ज़िन्दगी के बाद मौत के गवाह व दृश्य हर जगह देखे जा सकते हैं और हर एक उसको देख सकता है। अल्बत्ता एनाटामिस्ट, ज्योलाजिस्ट और जिसने जीव विज्ञान तथा वनस्पति के उदय व विकास का अध्ययन किया है उसके लिए इसकी पुष्टि व मरणोपरान्त जीवन के अनुमान का अधिक अवसर है, इस कारण पवित्र कुर्आन में अल्लाह तआला ने विभिन्न स्थानों पर इन दोनों वास्तविकताओं को मरणोपरान्त जीवन के प्रमाण के लिए प्रस्तुत किया है और इनकी ओर ध्यान आकर्षित कराया है। एक स्थान पर कहता है!

अनुवाद– *ऐ लोगों! यदि तुमको मरने के बाद जिंदा होने पर संदेह है तो विचार कर लेना कि हमने तुमको मिट्टी से बनाया है, फिर नुफ्का (टपकती बूँद) फिर खून का लोथड़ा बना दिया फिर गोश्त की बोटी बना दी कभी सूरत का नक्शा बना दिया, कभी अधूरी छोड़ दी अपनी कुदरत जाहिर करने के लिए यह साफ–साफ बयान जारी कर रहे हैं, एक निर्धारित अवधि तक मातृ गर्भ में जिस नुत्फा (बूँद) को चाहें ठहरा देते हैं, फिर बच्चा बनाकर निकालते हैं तुमको , ताकि भरपूर जवानी को तुम पहुंचो, कुछ लोग तुममें से वे लोग होते हैं जो जवानी ही में उठा लिये जाते हैं, कुछ वे लोग होते हैं जो बुढ़ापे वाली निकम्मी आयु तक पहुंचा दिये जाते हैं, परिणाम स्वरूप ज्ञान व बुद्धि की प्राप्ति के*

बाद वह सठिया कर अज्ञान होकर रह जाता है, दूसरा प्रमाण यह है कि तुम धरती को सूखा देखते हो फिर जब हम उस पर बारिश करते हैं। तो वह ताज़ा हो जाती है तथा फूलती है भाँति–भाँति के आकर्षक हरियाली उगाती है, यह सब इसी लिए है कि अल्लाह की हस्ती ही सत्य है और वह मुर्दों को जीवित करेगा तथा वह हर चीज़ पर सक्षम है तथा निःसंदेह क़यामत (महाप्रलय) आने वाली है, इसमें कोई संदेह नहीं और अल्लाह तआला क़ब्र वालों को ज़रूर उठाएंगे।

(सूरः हज ५–७)

अनुवाद– *और हमने इंसान को मिट्टी के निचोड़ (जौहर) से बनाया, फिर टपकती बूँद बनाकर एक सुरक्षित स्थान (अर्थात गर्भाशय) में रखा, फिर हमने उस बूँद को जमा हुआ खून बना दिया फिर उस जमे हुए खून को गोश्त का टुकड़ा बना दिया फिर उस गोश्त के टुकड़े में हड्डियां बनाई फिर हमने उन हड्डियों पर गोश्त चढ़ा दिया, फिर हमने (उसमें रूह डाल कर) एक नई सृष्टि (मखलूक़) बना दिया, बस बड़ी शान वाला है अल्लाह जो सबसे बेहतर बनाने वाला है, फिर इसके बाद जरूर मरोगे और फिर निःसंदेह क़यामत (महाप्रलय) के दिन जिंदा करके उठाए जाओगे।*

(सूरः अल–मुअ्मिनून १२–१६)

धरती के जीवन तथा पानी के एहसान की हालत को कुर्आन ने अपने चमत्कारी शब्दों में विभिन्न स्थानों पर व्याख्यान किया है।

अनुवाद– *अल्लाह ही हवाओं को भेजता है, फिर वह बादलों को उठाती है, फिर वह जैसा चाहता है बादलों को आकाश में फैला देता है और उसको टुकड़े–टुकड़े कर देता है। फिर तुम उसके बीच से बारिश को निकलते हुए देखते हो, तो जब वह अपने जिन बन्दों को*

चाहता है बारिश पहुँचा देता है तो प्रसन्न हो उठते हैं, जबकि इस वर्षा से पहले वे निराश होते हैं। अल्लाह की रहमत (कृपा) की निशानियों को तो देखो कि धरती की मौत के बाद वह कैसे उसे जीवित कर देता है? इस हकीकत में तनिक भी संदेह नहीं कि अल्लाह ही मुर्दों को जिलाने वाला है और वह हर चीज़ पर कुदरत रखता है।

(सूरः रूम ४८–५०)

अनुवाद– *अल्लाह ही है जिसने हवाएं भेजीं, तो वे बादल को उठाती है, फिर हम उसे किसी बेजान (सूखे) शहर की ओर हांक देते हैं। फिर हम उसके ज़रिये उस धरती को मौत (सूखने) के बाद जीवित कर देते हैं (सुन लो) इसी तरह दोबारा उठाया जाएगा।*

(सूरः फातिर ९)

अनुवाद– *उसकी खुली निशानियों में से यह है कि तुम धरती को बेजान सूखा जीवन के लक्षणों से खाली देखते हो, फिर जब हम उस पर पानी बरसा देते हैं तो वह तरो ताज़ा हो जाती है और फूलती है, अवश्य वही अल्लाह है जिसने मुर्दा धरती को जीवन प्रदान किया वही मुर्दों को दुबारा जीवित करेगा, वह हर काम करने में सक्षम है।*

(सूरः हा–मीम सजदा ३९)

अनुवाद– *वह अल्लाह है, जिसने आसमान से पानी बरसाया एक विशेष मात्रा में, फिर उसके द्वारा जीवन प्रदान किया किसी मुर्दा क्षेत्र को, बस ऐसे ही तुम उठाए जाओगे।*

(सूरः जुखरूफ ११)

इन दो निशानियों तथा खुले हुए दोनों नमूनों के अतिरिक्त भी ब्रह्माण्ड का यह विशाल व महान कार्यक्षेत्र मरणोपरान्त जीवन के नमूने तथा दृश्य दिन रात प्रस्तुत करता रहता है, यहाँ पलभर में जो चीज

बन कर बिगड़ती है और टूट–फूट कर बनती रहती है, एक बेजान व संवेदनहीन चीज से अच्छी खासी जीती जागती, जीवन धारक हस्ती तथा एक अच्छी खासी जानदार हस्ती से बिल्कुल बेजान और मुर्दा हस्ती निकलती है। बहुत सी वस्तुओं से ऐसे विलोम लक्षण व परिणाम सामने आते हैं, बहुत सी सृष्टियाँ दुबारा पैदा की जाती हैं, जिसने सृजनहार की इस असीम क्षमता, सृष्टियों की प्रारम्भिक पैदाइश तथा बनाने व पैदा करने की विशाल प्रक्रिया का कुछ भी अध्ययन किया है उसको एक क्षण के लिए भी मरणोपरान्त जीवन में संदेह नहीं हो सकता और उसके लिए इसमें कोई बौद्धिक संदेह नहीं है।

अनुवाद– *क्या उन लोगों ने नहीं देखा कि अल्लाह किस तरह सृष्टि को पहली बार पैदा करता है, फिर वह उनको दोबारा पैदा करेगा, यह काम अल्लाह के लिए बहुत सरल है। आप उनसे कहिए कि धर्ती पर चल फिर कर देखो कि अल्लाह ने सृष्टि को किस प्रकार पैदा किया, फिर वही अल्लाह आख़िरी बार भी पैदा करेगा, निःसंदेह अल्लाह हर चीज़ पर सामर्थ्य रखता है।*

(सूरः अन्कबूत १९–२०)

अनुवाद– *अल्लाह ज़िन्दा को मुर्दा से निकालता है और मुर्दा को जिन्दा से और धरती को मुर्दा होने (सूख जाने) के बाद जीवन प्रदान करता है, अतः इसी प्रकार कयामत में उठाए जाओगे।*

(सूरः अर्रूम १९)

अल्लाह के लिए किसी वस्तु को अस्तित्व प्रदान करना और फिर उसको दोबारा जीवन प्रदान करना दोनों समान रूप से सरल हैं, लेकिन इंसान के लेहाज़ से किसी वस्तु को दोबारा बनाना उसके पहली बार बनाने से अधिक सरल है। इसलिए जिसने एक बार

अल्लाह के गुण 'सृष्टा' को स्वीकार लिया उसके लिए इस गुण का दोबारा मानना कोई कठिन कार्य नहीं (यानी यही अल्लाह मरने के बाद दोबारा ज़िन्दा करेगा)।

अनुवाद– *वही है जो पहली बार पैदा करता है फिर वही दोबारा पैदा करेगा, और यह दोबारा पैदा करना उसको ज़्यादा आसान है और आसमान और ज़मीन में उसकी शान सर्वोत्तम है और वह ज़बरदस्त युक्तिवान है।*

(सूरः अर्रूम २७)

अनुवाद– *क्या क़यामत का इन्कार करने वाला इन्सान इस वास्तविकता को नहीं जानता कि हमने उसको नुत्फे (वीर्य) से बनाया, तो अब वह खुलकर आपत्ति करने लगा है तथा हमारी शान में अजीब बात कही और अपनी पैदाइश को भूल गया, कहता है, मुर्दा हड्डियों को कौन ज़िन्दा कर सकता है, जब कि वह बोसीदा (चूर–चूर) हो चुकी होंगी? "कह दीजिए उनको वही ज़िन्दा करेगा जिसने उनको पहली बार पैदा किया था और वह हर प्रकार की पैदाइश को ख़ूब जानता है, (वही है) जिसने तुम्हारे लिए हरे भरे वृक्ष से आग पैदा की, फिर तुम उससे आग जलाते हो" क्या वह जिसने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया इस बात की क़ुदरत (सामर्थ्य) नहीं रखता, कि इन जैसों को पैदा करे? क्यों नहीं और वह तो बड़ा पैदा करने वाला, महाज्ञाता है। उसकी शान यह है कि वह जब किसी चीज़ का इरादा करता है तो उसे हुक्म देता है, कि हो जा, तो वह हो जाती है।*

तो पाक (महिमावान) है वह जिसके हाथ में हर चीज़ का पूरा अधिकार है, और उसी की ओर तुम लौट कर जाओगे।

(सूरः यासीन ७७–८३)

अनुवाद— *और अल्लाह ने तुम्हें ज़मीन से* ***ख़ास तरीक़े से पैदा*** *किया* ***फिर वह*** *तुम्हें उसी में ले जाएगा और (क़यामत में)* ***वही*** *तुम्हें उसी से* ***बाहर निकालेगा।***

(सूरः नूह १७–१८)

फिर जिसने इस संसार में खुदा **के गुणों का स्पष्ट** रूप देखा है और जो उसकी कुदरत और हिकमत से वाक़िफ़ है उसके लिए यह क्या अजीब चीज़ है:—

अनुवाद— *क्या उनको इसकी जानकारी नहीं कि जिस अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया और उनके पैदा करने से थका नहीं, वह अवश्य इसकी शक्ति रखता है कि मुर्दों को ज़िन्दा कर दे, क्यों नहीं! वह हर चीज़ पर कुदरत (सामर्थ्य) रखता है।*

(सूरः अहकाफ ३३)

अनुवाद— *क्या उन लोगों ने अपने ऊपर आसमान को नहीं देखा! हमने उसको कैसे बनाया और (तारों से) सजाया, और इसमें कोई रख़ना (दरार) नहीं और ज़मीन को हमने फैलाया और इसमें पहाड़ जमा दिये और हर तरह की इसमें सुन्दर चीज़ें उगायीं, इसमें अल्लाह की ओर झुकने वाले बन्दे के आँख खोलने तथा विचार करने का साधन है।*

और 'हमने' आसमान से बरकत वाला पानी उतारा, फिर उससे बाग और फसल के अनाज और लम्बी–लम्बी खजूर के वृक्ष उगाए जिनके गुच्छे तह पर तह होते हैं। यह सब बन्दों की रोज़ी के लिए है और हमने उस (पानी) से मुर्दा ज़मीन को ज़िन्दा कर दिया, इसी तरह क़यामत के दिन निकलना होगा।

(सूरः क़ाफ़ ६–११)

अनुवाद– हमने तुमको पहली बार पैदा किया, तो तुम (हमारे दोबारा पैदान करने को) सच क्यों नहीं मानते? तो क्या तुमने विचार किया जो चीज (नुत्फे) तुम गर्भाश्य में टपकाते हो? क्या तुम उसे आकार प्रदान कर देते हो या हम हैं आकार देने वाले? हमने तुम्हारी मौत का समय मुकर्रर किया और हम आजिज़ (असमर्थ) नहीं हैं, कि तुम्हारी तरह के और लोग पैदा कर दें और तुम्हें ऐसी हालत में बना दें जिसे तुम जानते भी नहीं, और तुम तो पहली पैदाइश को जानते हो, तो फिर तुम (इसी से दोबार पैदा किये जाने को) क्यों नहीं समझ लेते। अच्छा फिर यह बताओ कि जो बीज तुम धरती में डालते हो तो क्या तुम उसे उगाते हो या हम उगाते हैं? अगर हम चाहें तो उसे चूर–चूर कर दें और तुम अचंभित रह जाओ, और कहने लगो कि हम तो तावान में पड़ गये बल्कि हम तो बिल्कुल महरूम (वंचित) रह गये।" अच्छा यह तो बताओ कि जो पानी तुम पीते हो? क्या तुमने उसको बादल से उतारा है, या उतारने वाले हम हैं? अगर हम चाहें तो खारा कर दें, फिर तुम शुक्र क्यों नहीं करते? क्या तुमने उस आग को देखा जिसे तुम सुलगाते हो? क्या तुमने उस वृक्ष को पैदा किया है, या उसके पैदा करने वाले हम हैं।

(सूरः अल–वाकिआ ५७–७२)

अनुवाद– क्या इन्सान यह समझता है कि उसे यूँ ही छोड़ दिया जाएगा? क्या वह वीर्य की एक बूँद न था? जो (गर्भाश्य में) टपकाया गया? फिर वह खून का लोथड़ा हो गया, तो अल्लाह ने उसको शरीर बनाया और उस (के अंगों) को दुरुस्त किया, फिर उससे जोड़ा बनाया, मर्द और औरत, क्या वह इस पर क़ादिर नहीं कि मुर्दो को जिन्दा कर दें?

(सूरः कियामः ३६–४०)

इस दुनिया पर ध्यान देकर चिन्तन करने से इन्सान की अन्तर आत्मा स्वयं गवाही देती है कि इस दुनिया के बाद एक दूसरी दुनिया और इस ज़िन्दगी के बाद एक दूसरी ज़िन्दगी होनी चाहिए जो इस दुनिया का उपसंहार हो। जिसमें इस ज़िन्दगी के कर्मो के परिणाम सामने आए, अगर यह दूसरी ज़िन्दगी नही तो दुनिया और यह सारा कारख़ाना बे मक़सद है। कुर्आन में मानव–स्वभाव को सम्बोधित करके फरमाया गया:–

अनुवाद– *क्या इन्सान यह समझता है कि उसे यूँ ही छोड़ दिया जाएगा?*

(सूरः अल्–क़ियाम ३६)

अनुवाद– *क्या तुमने यह समझा था कि हमने तुमको बेकार पैदा किया है, और तुमको हमारी ओर लौट कर नहीं आना है?"*

(सूरः अल्–मुमिनून ११५)

ज़मीन व आसमान के बारे में फरमाया:–

अनुवाद– *और हमने आसमान और ज़मीन को और उनके बीच के ब्रह्माण्ड को बेकार और बेमक़सद नहीं पैदा किया है।*

(सूरः सादः २७)

अनुवाद– *और हमने आसमानों व ज़मीन को और उनके बीच की चीज़ों को तमाशे के तौर पर नहीं बनाया।*

(सूरः अद–दुख़ान ३८)

ज़मीन व आसमान और उनके अजायबात पर गौर करने से मनुष्य का अन्तःकरण स्वयं गवाही देता है और उनकी जबान स्वयं इसका इकरार करती है:–

अनुवाद– बेशक आसमानों और ज़मीन की पैदाइश में और रात–दिन के अदल–बदल में, अक्ल वालों के लिए (बड़ी) निशानियाँ हैं, जो खड़े, बैठे और अपने पहलुओं पर लेटे (हर हाल में अल्लाह को याद करते हैं। और आसमानों, और धरती की पैदाइश पर गौर करते हैं, ऐ हमारे रब! तूने यह सब बेकार नहीं पैदा किया है, 'तू' पाक है, तो हमको दोज़ख के अज़ाब से बचाइए, ऐ हमारे रब! 'तूने' जिसे आग (जहन्नम) में डाला उसे रुसवा किया और ज़ालिमों का कोई मददगार नहीं।
(सूरः अलि–अिम्रान १९०–१९२)

आख़िरत पर ईमान की विशेषतायें

एक पक्का अकीदा **(विश्वास) एक सही और** बे ऐब बीज की तरह है जब दिल की ज़मीन में यह **बीज पड़** जाये और ज़मीन इसको कुबूल कर ले और फिर इसे पानी भी मिले और देख भाल भी हो तो इससे एक हरा–भरा पौधा ज़ाहिर होता है, फिर वह पेड़ बनता है जो पूरी ज़िन्दगी को अपने साया में ले लेता है।

आख़िरत पर ईमान भी एक बीज है जो अपनी स्वयं की विशेषतायें रखता है जब इस बीज की सही बढ़त हो जाती है तो आचरण व आमाल, सीरत व किरदार, चाल–ढाल, बात–चीत कोई चीज़ इसके असर से वंचित नहीं होती। आख़िरत के एक मानने वाले और उसके इन्कार करने वाले की ज़िन्दगी और सीरत में वही फर्क होता है जो विभिन्न बीजों से पैदा होने वाले पेड़ों की डालों, पत्तों और फलों में होता है। यह दो अलग–अलग साँचे हैं जिनमें दो अलग–अलग प्रकार की सोचें ढल कर निकलती हैं।

इन दोनों में सैद्धान्तिक अन्तर यह होता है कि आस्था रखने

वाला जल्दी मिलने वाली चीज की तुलना में देर से मिलने वाली चीज़, नक़द के मुकाबले में कर्ज, मिट जाने वाली खुशी के मुकाबले में हमेशा की राहत का इच्छुक होता है। कुर्आन मजीद ने इस सैद्धान्तिक अन्तर को अपनी आयतों में बार–बार स्पष्ट किया है दुनिया को वह आजिला (जल्दबाजी) कहता है और मौत के बाद की ज़िन्दगी को आख़िरत कहता है और दोनों में वह चयन की इजाज़त देता है।

अनुवाद– *जो व्यक्ति जल्द मिलने वाली (दुनिया) का इच्छुक हो तो हम उसमें से जिसे चाहते हैं और जितना चाहते हैं जल्द दे देते हैं, फिर हमने उसके लिए दोज़ख को निश्चित कर रखा है जिसमें वह दाख़िल होगा इस हाल में कि तिरस्कृत ठुकराया हुआ होगा, और जो व्यक्ति आख़िरत का इच्छुक होगा और उसके लिए कोशिश करेगा जैसी कोशिश करना चाहिए, शर्त यह है कि वह ईमान वाला भी हो, तो उनकी कोशिश कुबूल की जाएगी।*

(सूरः इस्राः १८–१६)

यह दो अलग–अलग प्रकार की खेतियाँ जो अभी बोई जाये और आख़िरत में काटी जाय, दूसरी जो तुरन्त बोई जाये और तुरन्त काट ली जाय। कुर्आन ने जहाँ दोनों खेतियों का उल्लेख किया है, वहाँ एक बड़ा बारीक फर्क रखा है। फरमाया है कि जो आख़िरत की खेती चाहेगा हम उसमें बरकत बढ़ोत्तरी अता फरमायेंगे, और जो दुनिया की खेती चाहेगा हम उसको उसमें से दे देंगे, अर्थात एक का नतीजा तुरन्त सामने और दूसरे के नतीजे के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

अनुवाद– *जो व्यक्ति आख़िरत की खेती का इच्छुक हो, हम उसकी खेती को बढ़ाते हैं। और जो दुनिया की खेती का इच्छुक हो, हम*

उसमें से उसे कुछ देते हैं और आख़िरत में उसका कोई हिस्सा नहीं।
(सूरः अश्–शूरा २०)

आख़िरत का इन्कार करने वाले की इस जल्दबाजी की मानसिकता को साफ़–साफ़ बयान किया गया है:–

अनुवाद– *कदापि नहीं! तुम तो दुनिया को चाहते हो, और आख़िरत को छोड़े हुए हो।*
(सूरः क़यामः २०–२१)

अनुवाद– *निःसंदेह यह लोग बस दुनिया से प्रेम करने वाले हैं और अपने आगे आने वाले बड़े भारी दिन का ध्यान छोड़े हुए हैं।*
(सूरः अद्–दह्र २७)

इन्हीं लोगों के बारे में कहा गया–

अनुवाद– *फिर उनके बाद उनके वह उत्तराधिकारी आए, जो किताब (तौरात) के वारिस हुये और (इसी के द्वारा) इसी दुनिया का सामान समेटने लगे, इसको मामूली गुनाह समझने लगे और कहा, हमें तो ज़रूर माफ़ कर दिया जाएगा और अगर इस जैसा और सामान भी उनके पास आ जाए तो वे उसे भी ले लेंगे, क्या इनसे किताब में इसका अह्द (प्रतिज्ञा) नहीं लिया गया कि अल्लाह पर सत्य के अतिरिक्त कोई बात न गढ़े और उन्होंने इस ग्रन्थ के आदेशों को पढ़ा भी है और आख़िरत तो उन लोगों के लिए बेहतर है, जो डर रखते हैं, क्या तुम अक़्ल से काम नहीं लेते?*
(सूरः अल्–अअ्राफ़ १६६)

दोनों के लक्ष्य और मक़सद में भी अंतर होता है:–

अनुवाद– *और कुछ लोग ऐसे हैं, जो प्रार्थना करते हैं 'ऐ हमारे रब! हमको (जो देना हो) दुनिया में दे दे "और ऐसे लोगों का आख़िरत*

(परलोक) में कोई हिस्सा नहीं और उनमें कुछ ऐसे हैं, जो दुआएं मांगते हैं, कि ऐ हमारे रब! हमें दुनिया में भी अच्छा जीवन दे और आख़िरत में भी अच्छा जीवन प्रदान कर दे और हमें आग के अज़ाब (यातना) से बचा।

(सूरः अल्--बकरह् २००--२०१)

ज़िन्दगी और दुनिया के बारे में दोनों की सोच एक दूसरे से सैद्धान्तिक रूप से अलग–अलग होती है, एक कहता है:–

अनुवाद– *ऐ मेरी क़ौम! यह दुनिया की जिन्दगी तो बस थोड़े फायदे की चीज़ है, और आख़िरत ही असल ठिकाने का घर है।*

(सूरः अल्–मोमिन ३६)

दूसरा कहता है :–

अनुवाद– *यहाँ हमारे लिए बस यह सांसारिक जीवन है और हमें इसी दुनिया में मरना और जीना है और हम दुबारा जीवित नहीं किये जायेंगे।*

(सूरः अल्–मोमिनून ३७)

आख़िरत के अक़ीदे के साथ घमण्ड, बड़ा बनने का शौक और ज़मीन में दंगा व फसाद और तोड़–फोड़ की भावना इकट्ठा नहीं हो सकती। इन उद्देश्यों व चरित्र का इस अक़ीदे (विश्वास) की प्रकृति से कोई संबंध नहीं। कुर्आन ने साफ–साफ कह दिया:–

अनुवाद– *आख़िरत का यह घर (स्वर्ग तथा उसकी नेमतें) हम उन लोगों के लिए ख़ास करते हैं जो न तो ज़मीन पर अपनी बड़ाई चाहते हैं और न फसाद और अच्छा अंजाम केवल परहेज़गारों के लिए है।*

(सूरः क़सस ८३)

इसी लिए एक आख़िरत को मानने वाले के जवीन में बड़ा बनने की भावना पैदा नहीं होती, सत्ताधारी होने पर भी उसकी बन्दगी व विनम्रता की आदत नहीं जाती, बल्कि जितना उसे सरबुलन्दी हासिल होती है उतना अधिक वह विनम्र होता है उसको जब ताक़त और दौलत हासिल होती है तो वह एक आख़िरत का इन्कार करने वाले (क़ारून) की तरह नहीं बोल उठता कि:–

अनुवाद– *यह तो मुझे अपनी क़ाबिलियत (व्यक्तिगत ज्ञान) की वजह से मिला है।*

(सूरः क़सस ७८)

बल्कि एक सच्चे और आख़िरत को मानने वाले (सुलैमान अलैहिस्सलाम) की तरह कहता है:–

अनुवाद– *"यह मेरे रब का फ़ज़ल (अनुग्रह) है, ताकि वह मुझे आज़माए कि मैं शुक्र करता हूँ अथवा नाशुक्री।*

(सूरः अं–नमल ४०)

वह जब अपने हाथों को खुला हुआ और अपने राज्य को फैला हुआ देखता है तो फ़िरऔन की तरह यह नहीं कह उठता:–

अनुवाद– *क्या मिस्र का राज्य मेरा नहीं और क्या यह नहरें मेरे नीचे नहीं बह रही हैं।*

(सूरः–अज़्ज़ुख़रूफ़)

कौन मुझसे अधिक शक्तिमान है।

बल्कि एक पैग़म्बर बादशाह की तरह उसका दिल ख़ुदा की तारीफ़ और उसके शुक्र से झुक जाता है और सहज पुकार उठता है:–

अनुवाद– *ऐ 'रब'! तौफ़िक़ (सामर्थ्य) दे कि मैं तेरे उन पुरस्कारों का शुक्र अदा करता रहूँ जो तूने मुझ पर और मेरे माँ–बाप पर किया है, और यह कि मैं ऐसे अच्छे काम करूँ जो तुझे पसंद आएं और अपनी रहमत से मुझे अपने भले बन्दों में दाख़िल कर।*

(सूरः–अं नमल १६)

वह दुनिया की इस सत्ता पर संतुष्ट नहीं होता, वह जानता है कि असल इज़्ज़त आख़िरत (परलोक) की इज़्ज़त है, और असल दौलत ख़ुदा की सच्ची गुलामी की दौलत है, इसलिये वह ख़ुदा के इनामों के शुक्र के साथ, जिस आख़िरी चीज़ की इच्छा करता है वह यह है कि दुनिया से एक सच्चे आज्ञापालक की तरह उठे और ख़ुदा के नेक बन्दों में शामिल हो। हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम कहते हैं–

अनुवाद– *ऐ मेरे रब! तूने मुझे हुकूमत दी और सपनों की तअबीर (स्वप्नार्थ) का ज्ञान दिया और उसके द्वारा वास्तविकताओं को समझने की प्रतिभा भी प्रदान की।। ऐ आसमानों और ज़मीन के पैदान करने वाले, दुनिया और आख़िरत (लोक परलोक) में तू ही मेरा संरक्षक है, अब तू मुझे इस्लाम की हालत में दुनिया से उठा ले और मुझे भले बन्दों में शामिल कर दे।*

(सूरः यूसुफ १०१)

आख़िरत पर अक़ीदा रखने वाला दुनिया की रूसवाई के मुकाबले में आख़िरत और हश्र के मौदान में रूसवाई से ज्यादा डरता है। वह उसे सोच कर काँप जाता है। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की दुआ है:–

अनुवाद– *हे अल्लाह! मुझे उस दिन रूसवा न करना, जिस दिन लोग दुबारा उठाए जाएंगे, जिस दिन न माल काम आएगा और न औलाद,*

*केवल वही लोग (उस दिन की रुस्वाई से बचेंगे) जो शुद्ध **मन लेकर** आएगा।*

(सूरः अश्–शुअरा ८७–८९)

मोमिन (आस्थावान) की दुआ

अनुवाद– *ऐ हमारे रब! तूने जिसे आग (नर्क) में डाला उसे **रूसवा** किया, और ऐसे ज़ालिमों का कोई मददगार नहीं......... और **क़यामत के** दिन हमें रूसवा न करना बेशक 'तू' अपने वादे के ख़िलाफ **नहीं** करता।*

(सूरः आलि–इमरान **१९२ व १९४**)

इसी का कारण है कि आखिरत के इस नितांत अज़ाब **(दण्ड)** और हश्र की इस ज़िल्लत व रूसवाई पर दुनिया की बड़ी से बड़ी तकलीफ और बड़ी से बड़ी रूसवाई व बदनामी को वह वरियता देता है, इस भय से न केवल उसको सहन करता है बल्कि कभी तो अपने गुनाह का इज़हार करके उसको खुद मोल लेता है।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के समय में एक मुसलमान पुरुष माइज़ और एक मुसलमान औरत ग़मिदियह ने बार–बार अपनी गलती का इज़हार किया और इच्छा की कि उनको दुनिया में सज़ा देकर आख़िरत के दाग़ से और जहन्नम के अज़ाब से बचा लिया जाये। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अनदेखी की लेकिन वे बार–बार सामने आये और उन्होंने इस सज़ा की प्रार्थना की। घटना इस प्रकार है:–

अब्दुल्लाह पुत्र बुरैदा अपने पिता से सुनकर **कहते हैं कि** एक **दिन** माइज़ पुत्र **मालिक अस्लमी** अल्लाह **के** रसूल **सल्लल्लाहु अलैहि**

वसल्लम की सेवा में आये। और कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! मैंने अपने पर बड़ा अत्याचार कर डाला, अर्थात मुझसे बलात्कार का पाप हो गया है, अतः मुझ पर हद जारी करके (दण्ड देकर) मुझे पाक कर दिया जाये। आपने उस दिन उनको वापस कर दिया अगले दिन वह फिर उपस्थित हुए और वही प्रार्थना की। आपने दूसरी बार भी उनको लौटा दिया। और उनके ख़नदान वालों को बुलवा के पूछा कि तुम्हें कुछ ज्ञात है। यह आदमी गलत तो नहीं कह रहा है। उन्होंने कहा जहाँ तक हमें मालूम है हम तो इसको समझदारी में अपनी क़ौम के अच्छे लोगों में ही समझते हैं। माइज़ तीसरी बार फिर हाज़िर हुए। आपने उनको उनके क़बीले वालों के पास भेज कर फिर उनके बारे में जानकारी करायी। उन्होंने यही कहा कि हमारे नज़दीक इसके होश व हवास ठीक हैं। फिर जब चौथी बार आये तो उनके लिए एक गड्ढा खुदवाया गया और हजरत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आदेश से उनको पत्थरों से मार डाला गया। फिर औरत आयी और उसने कहा ऐ अल्लाह के रसूल मैं बलात्कार की पापिन हूँ। अतः हद (दण्ड) जारी कराके मुझे इस गुनाह से पाक करा दीजिये। आपने उसे वापस कर दिया, अगले दिन वह फिर आई और कहा श्रीमान आपने मुझे क्यों लौटा दिया शायद आपने मुझे (शक संदेह के कारण) उसी प्रकार से वापस किया जैसे माइज़ को वापस किया था। अल्लाह की क़सम मैं गर्भवती हूँ। आपने फरमाया जब यह बात है तो इस समय हद नहीं जारी हो सकती। अतः तब आओ जबकि तुम्हारा बच्चा पैदा हो जाये। इस घटना को बयान करने वाले कहा करते हैं कि जब उसके बच्चा हो गया तो एक कपड़े में उस बच्चे को लेकर आई और कहा, यह बच्चा है जो मुझसे पैदा हो चुका है (अतः अब मुझ पर हद जारी करा दी जाये) आपने कहा नहीं। जाओ इसको दूध पिलाओ,

यहाँ तक कि यह रोटी का टुकड़ा खाने लगे। फिर जब उस बच्चे का दूध छूट गया और वह कुछ खाने लगा तो फिर यह उसको लेकर हाजिर हुई और उसके हाथ में रोटी का टुकड़ा था और कहा, ऐ अल्लाह के रसूल! मैंने इसका दूध छुड़ा दिया है और यह खाने लगा है, (अतः अब मुझ पर हद जारी करा दी जाये), आपने लड़के को लेकर मुसलमानों में से एक व्यक्ति के हवाले कर दिया। फिर आपके आदेश से उसके सीने तक का एक गड्ढा खोदा गया (जिसमें उसको सीने तक गाड़के) उसको लोगों ने पत्थरों से मार डाला। इन संगसार करने वालों में ख़ालिद पुत्र वलीद रज़ियल्लाहु अंहु भी थे, उन्होंने एक पत्थर उठाकर उसके सर पर मारा उस से जो ख़ून निकला तो ख़ालिद के चेहरे तक उसके छींटें आई। उन्होंने उसको कुछ बुरा भला कहा जिसको अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सुन लिया तो आपने ख़ालिद से फरमाया उसको बुरा–भला न कहो। कसम उस ज़ात की जिसके कब्जः में मेरी जान है उसने ऐसी तौबः की है कि अगर अवैध टैक्स वसूल करने वाला कोई ज़ालिम भी ऐसी तौबः करे तो बख़्शा जाये। फिर हुज़ूर के हुक्म से उसकी नमाज़ जनाज़ा पढ़ी गयी और वह दफन कर दी गयी। (सही मुस्लिम)

एक सर्वथा दुनिया परस्त और आख़िरत का इनकार करने वाले के नज़दीक यह कार्य पूर्णतया मूर्खता और पागलपन है। एक आदमी अपना ढका छिपा ऐब ज़ाहिर करे और अनावश्यक अपने शरीर को अज़ाब में डाले। लेकिन एक मोमिन के नज़दीक इससे बढ़कर कोई समझदारी का कार्य नहीं हो सकता कि आख़िरत के अज़ाब के मुकाबले में दुनिया के अज़ाब को सहन करे, इसलिए कि उसके नज़दीक आख़िरत का अज़ाब ज़्यादा बड़ा है, ज़्यादा लम्बा है, ज़्यादा रूसवा करने वाला और ज़्यादा कठोर है।

अनुवाद– और आख़िरत का अज़ाब बहुत कठोर और बहुत देर तक बाक़ी रहने वाला है।

(सूरः ताहा १२७)

अनुवाद– और आख़िरत का अज़ाब अधिक अपमानजनक है।

(सूरः हामीम सजदा १६)

अनुवाद– और आख़िरत का अजाब तो और भी सख़्त है, और वहाँ उनको कोई अल्लाह (के अज़ाब) से बचाने वाला न होगा।

(सूरः अर्रअद ३४)

और इस अक़ीदे का नतीजा यह होता है कि आदमी दुकेले अकेले में समान रूप से कानून का पाबन्द, सावधान और ख़ुदा परस्त रहता है और जहाँ उसको देखने वाला और उससे सवाल करने वाला कोई नहीं होता, वहाँ भी उससे आचरण व दियानत के खिलाफ कोई बात नहीं होती।

मदायन की विजय में लोगों ने मालेगनीमत (युद्ध के पश्चात मिला माल) में ईरान के बादशाहों का फर्श लिया जो लाखों रूपये की मालियत का था, और सुरक्षित सेनापति के पास पहुँचा दिया। इसी तरह एक मामूली सिपाही को किस्रा का बहुमूल्य जड़ाऊ वाला ताज हाथ आया, उसने भी इसको सरदार के हवाले कर दिया। हज़रत साद रज़ियल्लाहु अन्हु ने जब यह सामान हज़रत उमर को भेजा, और उन्होंने इसको माले–ग़नीमत में देखा तो उनकी ज़बान से सहज ही निकल गया "जिन लोगों ने इन बहुमूल्य चीज़ों को हाथ नहीं लगाया और उनकी नीयत ख़राब नहीं हुई निश्चय ही वह बड़े नेक लोग हैं।"

आख़िरत के अक़ीदे का एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव यह होता है

कि इन्सान में दुनिया की तकलीफों, ज़िन्दगी की कटुताओं और असफलताओं का सहन करने की जबरदस्त ताक़त पैदा हो जाती है, जो एक आख़िरत का इन्कार करने वाले में नहीं होती।

यह विश्वास रखना है कि केवल यही ज़िन्दगी नहीं है, बल्कि इसके बाद की एक दूसरी ज़िन्दगी है जो हमेशा रहने वाली है और जो सांसारिक जीवन के कानून के अधीन नहीं है। इसलिए अगर वह मोमिन है और अच्छे कर्म करता है तो उसको विश्वास है कि उसकी सारी तकलीफों का वहाँ बदला मिलेगा। यह चार दिन की ज़िन्दगी तो किसी न किसी तरह गुज़र जायेगी, फिर वहाँ इसका ख़्याल भी नहीं होगा।[1] और आख़िरत का अक़ीदा, अल्लाह के दर्शन का शौक़, जन्नत की ललक इन्सान में ऐसी लगन पैदा कर देता है जो दूसरी तदबीरों और वीर रस की कविताओं और दूसरे तरीकों से मुमकिन नहीं मोमिन अपनी जान को एक बिका हुआ सौदा समझता है जिसकी क़ीमत उसको जन्नत के रूप में मिलेगीः—

अनुवाद— *अल्लाह ने ईमान वालों से उनकी जान (प्राण) और उनके माल, जन्नत (स्वर्ग) के बदले में खरीद लिए हैं, यह लोग अल्लाह की राह में लड़ते हैं, तो मारते भी है और मारे भी जाते हैं, इसी पर सच्चा वादा है।*

(सूरः अत्तौबः १११)

इसी अक़ीदे ने मुसलमानों में जान देने के लिए वह बेक़रारी और इस्लाम के लिए जान न्योछावर कर देने की वह भावना पैदा कर दी जिसकी मिसाल नहीं मिलती। मुस्लिम शरीफ़ की रवायत है कि

[1] **इसीलिए इस्लामी देशों में आत्महत्या की संख्या पश्चिमी देशों की तुलना में शून्य है।**

दुश्मनों की मौजूदगी में हज़रत अबू मूसा अशअरी रज़ियल्लाहु अन्हु ने अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का यह कथन सुना कि, "जन्नत के दरवाज़े तलवारों के साये के नीचे हैं।" एक व्यक्ति जो परेशान हाल था, फटे कपड़े पहने हुए था, खड़ा हुआ और कहा कि ऐ अबू मूसा! क्या तुमने अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से सुना है? उन्होंने कहा हाँ! वह अपने साथियों के साथ लौट कर गया और कहा कि मेरा सलाम कुबूल करो, मैं चलता हूँ फिर तलवार का नियाम तोड़ा और ज़मीन पर फेंक दिया और तलवार लेकर दुश्मनों में घुस गया और खुदा की राह में जान दे दी।

एक बार अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कहाः—

अनुवाद— *"उठो चलो उस जन्नत की तरफ जिसकी चौड़ाई में तमाम ज़मीन और आसमान हैं।"*

उमैर पुत्र हुमाम अंसारी रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा, "ऐ अल्लाह के रसूल! ऐसी जन्नत जिसकी चौड़ाई आसमान और ज़मीन है या जिसकी चौड़ाई में ज़मीन व आसमान आ जायेंगे?" आपने फरमाया, "हाँ"! उन्होंने कहा, "ओ हो"। अल्लाह के रसूल ने फरमाया, "यह क्यों कहते हो"? उन्होंने कहा ए अल्लाह के नबी! सिर्फ इस उम्मीद में कहता हूँ कि शायद मैं भी उन जन्नत के लोगों में से हूँ। आपने फरमाया, "तुम उनमें हो!" वह अपनी थैली में से खजूर निकालने और खाने लगे। फिर कहा कि अगर मैं इन खजूरों के खाने तक ज़िन्दा रहूँ तो यह तो बड़ी लम्बी ज़िन्दगी है। फिर उन्होंने खजूरें फेंक दीं, और लड़ना शुरू किया, यहाँ तक कि शहीद हो गये।

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि अनस पुत्र नज़र

रज़ियल्लाहु अन्हु ने ओहद युद्ध में हज़रत साद पुत्र मआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु को देखा तो कहा कि 'नज़र के ख़ुदा की कसम मुझे जन्नत की ख़ुशबू ओहद के पहाड़ों के उस ओर से आ रही है। जब वह शहीद हुए तो उनके जिस्म पर कुछ ऊपर अस्सी ज़ख़्म (घाव) थे। तलवार के, बर्छे के और तीर के जख़्मों से छलनी हो जाने की वजह से उनको पहचाना भी नहीं जा सकता था मगर उनकी बहन ने उनकी सिर्फ एक उंगली की वजह से पहचान लिया जिसमें कोई ख़ास निशानी होगी।

आख़िरत के इन्कार के प्रभाव

आख़िरत के इन्कार का पहला स्वाभाविक प्रभाव यह है कि संसारिक जीवन और दुनिया की चीज़ों से स्वाद और लाभ का एक जुनून पैदा हो जाता है और यही जीवन का लक्ष्य करार पाता है जो सोसाइटी यह अक़ीदा (विश्वास) रखती है वह 'खाओ पियो मस्त रहो' में भूली रहती है। और इसी में मुक़ाबला होता रहता है। वास्तव में आख़िरत के इन्कार के बाद यह जुनून सर्वथा बुद्धिमता है, जो इस जीवन के बाद किसी दूसरे जीवन की कल्पना से ख़ाली हो, वह इस जीवन का आनन्द लेने और दिल की आग बुझाने में क्यों कमी करें। और भोग विलास को किस दिन के लिए उठा रखें। इसी लिए कुर्आन कहता है:—

अनुवाद— *और जिन लोगों ने इन्कार किया, वे आख़िरत से निश्चिन्त हो कर फायदे उठा रहे हैं, और इस तरह खा रहे हैं जिस तरह जानवर खाता है और उनका ठिकाना अग (नर्क) है।*

(सूरः मुहम्मद १२)

उन्हीं लोगों से क़यामत के दिन कहा जायेगा—

अनुवाद– तुम अपने हिस्से की अच्छी चीज़े दुनिया की ज़िन्दगी में ले चुके और उनसे खूब फ़ायदा भी उठा चुके, तो आज तुम्हें अपमानित करने वाला अज़ाब (दण्ड) दिया जाएगा, क्यों कि तुम ज़मीन में बिना किसी हक़ के घमंड करते थे।

(सूरः अल्–अह्क़ाफ़ २०)

आख़िरत के इन्कार का स्वाभाविक नतीजा है कि यह दुनिया, इसकी चीज़ें, इसमें काम आने वाले कर्म अधिक लुभावने बन जाते हैं। निगाह भौतिकवादी और ओछी हो जाती है जो वास्तविकताओं तक नहीं पहुँच सकतीः–

अनुवाद– जो लोग आख़िरत पर ईमान नहीं रखते, 'हमने' उनके काम उनके लिए खुशनुमा (सुन्दर) बना दिये हैं तो वे परेशान (सत्य मार्ग से) भटकते फिरते हैं।

(सूरः अं–नम्ल ४)

अनुवाद– कह दीजिए, "क्या हम तुम्हें उनकी ख़बर दें, जो अपने अमल की दृष्टि से सबसे बढ़कर घाटा उठाने वाले हैं? यह वह लोग हैं, "जिनकी पूरी कोशिश दुनिया ही की ज़िन्दगी में बरबाद हो कर रही, और वह अपने आप को यही समझते रहें, कि वह अच्छे काम कर रहे हैं। यही वे लोग हैं; जिन्होंने अपने रब की आयतों और उसके सामने हाज़िर होने को न माना तो उनके काम भी किसी काम न आये। फिर क़यामत के दिन हम उन्हें कोई वज़न न देंगे। उनका बदला वही दोज़ख है, इसलिए कि उन्होंने कुफ़्र (इन्कार) किया, और हमारी आयतों, और हमारे रसूलों की हँसी उड़ाई। जो लोग ईमान लाए, और भले काम किये उनकी मेहमानी के लिए जन्नत के बाग़ हैं। जिनमें वे हमेशा रहेंगे वहाँ से और कहीं न जाना चाहेंगे।"

(सूरः अल्–कहफ़ १०३–१०८)

इसका एक नतीजा यह भी होता है कि जीवन में हक़ीक़त और संजीदगी (गम्भीरता) का हिस्सा कम और लहुव लइब (वह खेल–कूद और बात जो धार्मिक कामों से रोके) का हिस्सा ज़्यादा होता है। उनके जीवन के एक बड़े हिस्से को तफरीह और मौज मस्ती की व्यस्ततायें घेरे रहती हैं और बड़े–बड़े गंभीर समय और खतरों में भी उनके इस तफरीही कामों में कोई अंतर नहीं आता। कुर्आन कहता है:–

अनुवाद– और आप उन लोगों को उनके हाल पर छोड़ दीजिए जिन लोगों ने अपने दीन को खेल और तमाशा बना रखा है, और दुनिया की ज़िन्दगी ने उन्हें धोखे में डाल रखा है।

(सूरः अल्–अन्आम ७०)

इसका एक नतीजा यह भी है कि घटनाचक्र के वास्तविक कारण पर उनकी नज़र नहीं पड़ती, बल्कि कुछ ज़ाहिरी चीज़ों में उलझ कर रह जाती है, वह मामलात की गहराई तक नहीं उतर सकते जिसका नतीजा यह होता है कि ठीक बर्बादी के समय भी उनकी तफरीही व्यस्तता और गफलत कम नहीं होती। वह इन घटनाओं की कोई तावील (किसी बात का ऐसा फल बताना जो करीब–करीब ठीक जान पड़े) कर लेते हैं और उनकी कोई फर्ज़ी और गैर हक़ीक़ी वजह तलाश करके संतुष्ट हो जाते हैं। और उनके रवैये में कोई बड़ी तब्दीली नहीं आती। निम्न आयत साक्षी है:–

अनुवाद– जब हमारी ओर से उन पर अज़ाब (दण्ड) आया तो फिर क्यों न गिड़गिड़ाए तथा क्यों न रोए व हमसे सम्पर्क साधा? लेकिन बात यह है कि उनके दिल तो कठोर हो गये हैं और जो कुछ वे करते थे, शैतान ने उसे उनके लिए मुज़य्यन (मनमोहक) बना दिया था।

(सूरः अल्–अन्आम ४३)

आख़िरत के इन्कार का एक नैतिक नतीजा यह होता है कि नैतिक क्रियाओं का कोई उत्प्रेरक बाक़ी नहीं रहता और उन अख़लाक़ व आमाल (नैतिकता व अच्छे कार्य) की कोई आमादगी पैदा नहीं होती जिनमें कोई दुनियावी फायदा नज़र नहीं आता, या उनके करने के लिए इन्सान मजबूर नहीं होता।

अनुवाद– *क्या आपने उस व्यक्ति को देखा जो बदला व दण्ड को झुठलाता है? यह वही है जो यतीम को धक्के देता है और मिस्कीन मुहताज को खिलाने की तर्ग़ीब (प्रोत्साहन) नहीं देता।*

(सूरः अल–माऊन १–३)

और अगर वह ऐसे कोई कार्य करते भी हैं तो दिखावे के लिएः–

अनुवाद– *और जो लोगों को दिखाने के लिए अपने माल ख़र्च करते हैं और अल्लाह पर ईमान नहीं रखते न आख़िरत के दिन पर, जिस किसी का साथी शैतान हो, तो वह बहुत ही बुरा साथी है।*

(सूरः अ–निसा ३८)

अनुवाद– *उस व्यक्ति की तरह (बर्बाद न कर दो), जो लोगों को दिखाने के लिए अपना माल ख़र्च करता, अल्लाह और आख़िरत (परलोक) पर ईमान नहीं रखता।*

(सूरः अल–बक़रह् २६४)

आख़िरत के इन्कार की एक विशेषता यह है कि आदमी घमण्डी हो जाता है, जो अपने से ऊपर किसी हाकिम या ताक़त और सर्वगुण सम्पन्न मालिक की अदालत और इस जिन्दगी के बाद किसी ज़िन्दगी और बदले के दिन का यक़ीन नहीं रखता। उसको एक बे नकेल ऊँट और एक सरकश इन्सान बनने से क्या चीज रोक सकती है।

दुनियावी क़ानून और मसलहत व अवरोध किसी हद तक उसके रास्ते में रूकावट बनेंगे, लेकिन यह अवरोध जब दूर हो जायेंगे या इन पर जहाँ वह हावी हो सकेगा तो वहाँ वह फ़िरऔन बन कर भी प्रकट होगा। कुर्आन में आख़िरत के इनकार के साथ, इसी लिये, अक्सर तकब्बुर (घमण्ड) का ज़िक्र किया गया है:–

अनुवाद– *तो जो आख़िरत पर ईमान नहीं रखते उनके दिल इन्कार कर रहे हैं और वे अपने आपको बड़ा समझ रहे हैं।*

(सूरः अं–नहल २२)

फ़िरऔन और उसके लश्कर के बारे में कहा गया:–

अनुवाद– *और वह और उसकी सेनाओं ने धरती में नाहक घमण्ड किया, और समझा कि उन्हें हमारी ओर लौटना ही नहीं है।*

(सूरः अल्–क़सस ३६)

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के उस कथन में जो कुर्आन में किया गया है, इस क़िस्से की तरफ़ इशारा किया गया है:–

अनुवाद– *और मूसा ने कहा, मैं हर घमंडी के मुक़ाबले में जो हिसाब के दिन पर ईमान नहीं रखता अपने और तुम्हारे रब की पनाह (शरण) ले चुका हूँ।"*

(सूरः अल्–मूमिन २७)

आख़िरत का इन्कार करने वाला सामान्यतः इस दुनिया में भी एक आध्यात्मिक अज़ाब (पीड़ा) और मनोवैज्ञानिक उलझन से ग्रसित रहता है। इनमें जिन लोगों की आत्मा मर नहीं गई है, उनको यह खटक हर हाल में तकलीफ़ देती रहती है कि जीवन बहरहाल सीमित है, उम्र कितनी ही लम्बी हो, भोग विलास का सामान कितना ही

अधिक हो, मौत यक़ीनी है और इस आनन्द भवन से एक दिन ज़रूर ही निकलना पड़ेगा और इस भोग विलास को अनिवार्यतः छोड़ना पड़ेगा। दिल की यह फांस और आँखों की यह खटक उनके ऐश को किरकिरा कर देती है और उन्हें बेचैन रखती है। दुनिया में वह बड़े निराश होते हैं और हक़ीक़त में उनसे बढ़कर कौन निराश हो सकता है:—

मुनहसिर[१] मरने पे हो जिसकी उम्मीद,
ना उम्मीदी उसकी देखा चाहिए।

इसलिए इनमें से बहुत से लोग अपने दिल को मौत के ख्याल से बचाते रहते हैं, और इसका ख्याल किसी तरह आने नहीं देते। मौत के नाम से वह घबराते हैं, और कुछ इसका इन्तेज़ाम करते हैं कि उनको किसी तरह भी यह नागवार (अप्रिय) हक़ीक़त याद न आये इसलिए वह लोग नशे का इस्तेमाल करते हैं ताकि उन पर हमेशा बेख़ुदी (बेहोशी) छायी रहे—

मय[२] से गरज़ निशात[३] है किस रू सियाह[४] को
एक गूनः[५] बेख़ुदी[६] मुझे दिन—रात चाहिए।

फिर इनकी यह हालत होती हे कि सारी उम्र उनको यह कड़ुवा यथार्थ कभी नहीं याद आता और उनका यह आलम होता है:—

सदा ख़्वाबे ग़फ़लत में मदहोश रहना,
दमे मर्ग[७] तक ख़ुद फ़रामोश[८] रहना।

उनकी आँखें उस समय खुलती हैं जब वह हमेशा के लिए बन्द

(१) निर्भर (२) मदिरा (३) ख़ुशी (४) गुनाहगार (५) किस्म (६) बेहोशी (७) मौत (८) स्वयं को भूल जाना

होने लगती हैं:–

अनुवाद– *वे लोग बड़े घाटे में हैं जो अल्लाह के सामने पेशी को झूठ बताते व समझते हैं। यहाँ तक कि जब अचानक उन पर क़यामत (महाप्रलय) आ जाएगी, तो वे कहेंगे "हाय! अफ़सोस, उन कोताहियों पर जो इस क़यामत की तैयारी में हमसे हुई" और हाल यह होगा कि अपने पापों के बोझ अपनी पीठों पर उठाए हुए होंगे, देखो। सावधान! बहुत बुरे वह बोझ होंगे जिनको वह उठाए हुए होंगे। बुरा बोझ है जो यह उठाए हुए हैं।*

(सूरः अल्–अन्आम ३१)

अनुवाद– *और यह दुनिया की ज़िन्दगी तो केवल खेल–तमाशा है, और आख़िरत का घर ही अस्ल ज़िन्दगी है, क्या ही अच्छा होता कि लोग इस वास्तविकता को जान लेते?*

(सूरः अल–अन्कबूत ६४)

—— समाप्त ——

इस्लाम

—मुकम्मल दीन
मुस्तक़िल तहज़ीब

मौलाना अबुल हसन अली नदवी

मजलिसे तहक़ीक़ात व नशरियाते इस्लाम
पो० बाक्स नं० 119, लखनऊ।

प्रकाशन :

मजलिसे तहक़ीक़ात व नशरियाते इस्लाम
पोस्ट बाक्स नं० 119, नदवा, लखनऊ
(भारत)

Series No. 219

प्रथम संस्करण
1989

मुद्रक :
नदवा प्रेस, लखनऊ

दो शब्द

मौलाना अबुल हसन अली नदवी का यह रिसाला उर्दू में सन् 1972 ई० में मजलिसे तहक़ीक़ात व नशरियात इस्लाम लखनऊ ने शाया किया था। मुल्क के हालात और मौजूदा जरूरत के पेश नज़र हिन्दी जानने वाले मुसलमान भाई-बहनों के लिए इसे यहाँ हिन्दी में पेश किया जा रहा है। अल्लाह तआला इससे फ़ायदा पहुंचाये। आमीन।

मोहम्मद हसन अंसारी

किला बाज़ार, रायबरेली
11·4· 1405 हिज्री
4·1·1985 ई०

पेश लफ्ज

बाख़बर हज़रात जानते है कि हमारे मुल्क में अरसे से बाज़ हल्क़ों की तरफ़ से वहदते अदियान की दावत दी जा रही है। दूसरी तरफ़ सरकारी व सियासी हल्के क़ौमी एक-जहती की तहरीक चला रहे हैं। मुल्क के बहुत से दानिशवर, अख़बारात व रसायल इस की तशरीह ऐसी करते हैं जिससे "मन व तू" का इम्तेयाज़ और मुख़तलिफ़ फ़िरक़ों के तहज़ीबी ख़सायस बिल्कुल ही ख़त्म हो जायें। हिन्दुस्तान के मुसलमान इस वक्त जिस एहसास कमतरी और शिकस्ता दिली के शिकार हैं उससे अन्देशा मालूम होता है कि वह इस तहरीक का असर लेकर उन हुदूद को भी पार कर जायेंगे जिनके बाद मुसलमान का मुसलमान रहना भी मुश्किल है।

यह अन्देशा इसलिए भी सही है कि ख़ुद मुसलमानों में बहुत से पढ़े लिखे लोग इस्लाम को सिर्फ चन्द अक़ायद व आमाल व रसूम का मजमुआ समझते हैं। और वह किसी मुस्तकिल तहज़ीब के कायल नहीं। इस बात ने इसका खतरा पैदा कर दिया है कि हिन्दुस्तान में फिर एक नई शक्ल में अकबरी अहद का आग़ाज़ हो। बहुत से नफ़सियाती व सियासी असबाब की बिना पर इस दौर में मुसलमानों के इससे कहीं ज्यादा असर लेने और अपनी इनफिरादियत खो देने का ख़तरा है जितना उस वक्त था।

इसलिए उन सब हज़रात को इस मसअले की तरफ़ ध्यान देने की जरूरत है जो दीन को समझते हैं और जो इस्लाम के साथ इस्लामी तहज़ीब व कल्चर को भी ज़रूरी समझते हैं। इस रिसाले की इशाअत इस सिलसिले की एक हक़ीर कोशिश है। हम कोशिश करेंगे कि इस तरह के और मज़ामीन भी शाया करते रहें।

मोहम्मद राबे नदवी
सेक्रेट्री
मजलिसे तहकीकात व नशरियात
इस्लाम, लखनऊ

मई 15, 1972 ई०

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

हमारा ईमान है कि अल्लाह तआला ने इन्सानों की रहनुमाई के लिए और अपनी ज़ात की मारफ़त अता करने के लिए नबियों के गिरोह को मुन्तख़ब फ़रमाया। अपने कलाम और पैग़ाम के ज़रिये पहले उनको, फिर उनके ज़रिये अपनी मखलूक़ को अपनी ज़ात व सिफात का इल्म अता फ़रमाया और अपने अहकाम और जिन्दग़ी गुज़ारने के पसन्दीदा तरीके से आशना किया। अल्लाह तआला क़ुरआन मजीद में फ़रमाता है:—

तर्जुमा : "अल्लाह का यह तरीक़ा नहीं है कि तुमको ग़ैब पर मुत्तला करदे, ग़ैब की बातें बताने के लिए तो वह अपने रसूलों में जिसको चाहता है मुन्तख़ब कर लेता है।" (सूरः आले इमरान—179)

अल्लाह तआला की ज़ात व सिफ़ात, उसकी बन्दगी का सही तरीक़ा और जिन्दगी गुज़ारने का पसन्दीदा तरीक़ा मालूम करने का इन पैगम्बरों की तालीमात के अलावा और कोई ज़रिया नहीं। यह अक्ल व ज़ेहानत, क़यास आराई व तबा आज़माई, ख्वाहिशात और कौमी रस्म व रिवाज का मैदान नहीं। इसके लिए इसके सिवा कोई तरीक़ा नहीं कि इस दुनिया का पैदा करने वाला ख़ुद इसकी ख़बर दे और वह इसकी ख़बर पैगम्बरों ही के ज़रिये देता है। इसलिए इस इल्म व

हिदायत का ज़रिया सिर्फ़ नबियों का गिरोह है क़यामत तक के इन्सानों की हिदायत, ज़िन्दगी गुज़ारने का तरीका इसी गिरोह के साथ जुड़ा है। इन्हीं के बताये हुए अक़ायद, इन्हीं की अता की हुई अल्लाह की मारफ़त इन्हीं की तरीक़-ए-ज़िन्दगी, इन्हीं की माशरत व इख़लाक अल्लाह तआला को महबूब व मक़बूल हैं। और सारे इन्सानों को उनकी तक़लीद और इक़तदा करने और उनको अपने लिए नमूना बनाने की हिदायत और ताकीद है। कुरआन मजीद का फ़रमान है :–

तर्जुमा : "यह थी हमारी वह हुज्जत जो हमने इब्राहीम को उसकी क़ौम के मुक़ाबले में अता की। हम जिसे चहते हैं बलन्द मर्तबा अता करते हैं, हक़ यह है कि तुम्हारा रब निहायत दाना और अलीम है। फिर हमने इब्राहीम को इस्हाक़ को और याक़ूब अ० जैसी औलाद दी, और हर एक को राहे रास्त दिखाई (वही राहे रास्त जो) इससे पहले नूह अ० को दिखाई थी। और उसी की नस्ल से हमनें दाऊद, सुलेमान, अय्यूब, यूसुफ, मूसा और हारून अ० को हिदायत बख़्शी। इस तरह हम नेककारों को उनकी नेकी का बदला देते हैं। (उसी की औलाद से) ज़करिया, यहया, ईसा और इलियास अ० को (राहयाब किया) हर एक उनमें से सालेह था। (इसी के खानदान से) इस्माईल, अलयसआ और यूनुस और लूत अ० को (रास्ता दिखाया) उनमें से हर एक को

हमने तमाम दुनिया वालों पर फ़ज़ीलत अता की और उनके आबा व अजदाद और उनकी औलाद और उनके भाई बन्दों में से बहुतों को हमने नवाज़ा, उन्हें अपनी ख़िदमत के लिए चुन लिया, और सीधे रास्ते की तरफ उनकी रहनुमाई की, यह अल्लाह की हिदायत है, जिसके साथ वह अपने बन्दों में से जिसकी चाहता है, रहनुमाई करता है, लेकिन अगर कहीं उन लोगों ने शिर्क किया होता, तो उनका सब किया कराया ग़ारत हो जाता वह लोग थे जिनको हमने किताब और हुक्म और नबूवत अता की थी, अब अगर यह लोग इसको मानने से इन्कार करते हैं, तो (परवाह नहीं) हमने कुछ और लोगों को यह नेमत सौंप दी है जो इससे मुनकिर नहीं हैं। ऐ मोहम्मद! वही लोग अल्लाह की तरफ से हिदायत याफ्ता थे, उन्हीं के रास्ते पर तुम चलो, और कह दो कि मैं (इस तबलीग़ व हिदायत के) क़ाम पर तुमसे किसी अज्र (बदला) का तालिब नहीं हूं। यह तो एक आम नसीहत है तमाम दुनिया वालो के लिए"

[सूर: अन आम 83–91]

यह अल्लाह तआला के बन्दों का वह महबूब गिरोह है जिसकी हर बात अल्लाह तआला को महबूब है। अक़ायद व इलाहियात से लेकर मरग़ूबात, इख़लाक़ व माशरत और तहज़ीब उनकी हरचीज महबूब है। उन्हीं के अक़ायद, इखलाक

व तहज़ीब व माशरत के मजमूआ को "इस्लाम" और उस निज़ामे ज़िन्दगी को जो उसके मुतवाज़ी है "जाहिलियत" से ताबीर किया जाता है।

नबियों के गिरोह में अल्लाह तआला ने सय्यदना इब्राहीम अ० को अपनी महबूबियत और नस्ल इन्सानी की इमामत से सरफ़राज फ़रमाया और उन्हीं की औलाद में नबियों के सिलसिलें को जारी किया। क़ुरआन मजीद में अल्लाह तआला का इरशाद है:–

तर्जुमा : "और अल्लाह तआला ने इब्राहीम को अपना ख़ालिस दोस्त बना लिया" (सूरः निसा–125)

तर्जुमा : "(अल्लाह तआला ने) फ़रमाया कि मैं तुमको लोगों का पेशवा बनाऊँगा" [सूरः बक़रः 124]

तर्जुमा : " बेशक इब्राहीम ही थे, राह डालने वाले हुक्म बरदार अल्लाह के, एकसू, और मुशरिको में से न थे, हक़ मानने वाले उसके एहसानों के, अल्लाह ने उनको मुन्तख़ब कर लिया, और चलाया सीधी राह पर, और हमने उनके दुनिया में भी ख़ूबी दी थी और वह आखिरत में भी अच्छे लोगों में होंगे, फिर हमने तुम्हारी तरफ 'वही' भेजी कि दीन इब्राहीमी की पैरवी करो जो बिल्कुल एकसू थे और मुशरिकों में से न थे।

[सूरः नहल 120–123]

इब्राहीम अ० के बाद से उन्हीं की इमामत का दौर और पेशवाई है। और इब्राहीमी दौर क़यामत तक क़ायम रहेगा।

इसी दौर के आख़िरी पैग़म्बर मोहम्मद स० और इस दौर की आख़िरी उम्मत "मुसलमान" हैं। मुसलमानों को खेताब कर के क़ुरआन मजीद में साफ़ कहा गया है :–

तर्जुमा : "उसने तुमको पसन्द किया, और नहीं रखी तुम पर दीन में कुछ मुश्किल। दीन है तुम्हारे बाप इब्राहीम का, उन्होंने तुम्हारा नाम रखा "मुसलमान" (हुक्मबरदार)" (सूर: हज 78)

इब्राहीमी इमामत और दावत की खुसूसियत तौहीदे ख़ालिस और शिर्क से नफ़रत और बेज़ारी है क़ुरआन मजीद में हज़रत इब्राहीम अ० के वह अल्फ़ाज़ नक़ल किये गये हैं जो उन्होंने अपने जमाने के मुशरिकीन से कहे:–

तर्जुमा : "हम तुम से और जिनको तुम अल्लाह के सिवा माबूद समझते हो उनसे बेज़ार हैं, हम तुम्हारे मुनकिर हैं और हममें तुम में हमेशा के लिए अदावत और बुग्ज़ ज़ाहिर हो गया, जब तक तुम एक अल्लाह पर ईमान न लाओ" (सूर:मुमतहिना 4)

अपने और अपनी औलाद के लिए उनकी दुआ इन अल्फ़ाज़ में मनक़ूल है:–

तर्जुमा : "मुझे और मेरी औलाद को इस से दूर ही रख कि हम कभी बुतपरस्ती में शामिल हो जायें"

(सूर: इब्राहीम 35)

इब्राहीमी दौर के सबसे बड़े और आख़िरी पैग़म्बर मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं जिनको अल्लाह तआला ने हज़रत इब्राहीम ही की नस्ल में अरब की सरज़मीन और

मक्का के उस शहर में पैदा फ़रमाया जहाँ उनके जद्द अमजद हज़रत इब्राहीम अ० ने खुदा का घर (काबा) इसलिए तामीर किया था, कि वह क़यामत तक के लिए तौहीद और हिदायत का मरक़ज़ बने। हज़रत इब्राहीम अ० ने जिस सिलसिले को शुरू किया था अल्लाह के रसूल मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसकी तकमील फ़रमाई और उसे दुनिया के कोने कोने तक पहुंचा दिया। आप पर नबूवत का सिलसिला ख़त्म और आपके ज़रिये इनामे इलाही की तकमील हो गई। और अब दुनिया में हिदायत और आख़िरत में कामयाबी का दारो-मदार आप ही की पैरवी पर है। आप की वफ़ात से क़रीब तीन महीने पहले अरफ़ा के दिन अरफ़ात के मैदान में क़ुरआन शरीफ़ की यह आयत नाज़िल हुई:—

तर्जुमा : "आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन मुकम्मल कर दिया और तुम पर अपनी नेमत तमाम कर दी, और इस्लाम को तुम्हारे लिए बहैसियत दीन के पसन्द कर चुका" (सूरः मायदा—3)

अब आप के लाये हुए दीन और अक़ीदा को क़ुबूल करने, आपकी पसन्द की हुई तहज़ीब व माशरत और आपके इख़लाक़ हमीदा को अपनाने से सिर्फ़ अल्लाह की मुहब्बत ही नहीं बल्कि वह मक़ाम हासिल हो सकता है जिससे ऊँचा कोई मक़ाम नहीं। फ़रमाया गया:—

तर्जुमा : "ऐ मोहम्मद (स०) उनसे कह दीजिये अगर तुमको अल्लाह के साथ मुहब्बत है तो मेरी चाल चलो अल्लाह तुमको महबूब बना लेगा और तुम

को बख्शा बख्शाया बना देगा।"

(सूर: आलेइमरान 31)

इस्लामी शरीअत और इब्राहीमी तहज़ीब

अब दुनिया में जहाँ तक हिदायत और अल्लाह तआला की रज़ा और क़ुबूलियत का तअल्लुक है, सय्यदना इब्राहीम अ० और मोहम्मद स० का ही दौरे इमामत है। उन्हीं के बताये हुए अक़ायद भी मोतबर हैं। अल्लाह की ज़ात व सिफ़ात और उसकी वहदानियत का जो अक़ीदा उन्होंने बताया वही सही अक़ीदा है। इख़लाक़ और माशरत के जिन तरीकों को उन्होंने अपनाया वही ख़ुदा के नजदीक सही और पसन्दीदा हैं। जिस चीज की उन्होंने पाबन्दी की और जिसकी तरफ़ उनकी फ़ितरत हमेशा के लिए मायल हो गई उसी को ख़ुदा ने आखिरी दीन का शेआर और हिदायतयाफ़ता इन्सानों की तहज़ीब क़रार दिया। इसी को हदीस की जबान में "ख़सायले फितरत" और शरीअत की इस्तलाह में "सुन्नत" कहा जाता है। इन्सान के दोनों हाथ अल्लाह के बनाये हुए हैं, लेकिन दाहिने हाथ को बायें हाथ पर क्यों फ़ज़ीलत है? और अच्छे कामों में उसके इस्तेमाल करने की क्यों हिदायत है? इसलिए कि यह नबियों की आदत है। और इब्राहीमी व मोहम्मदी तहज़ीब की पहचान है।

यह तो मैंने समझने के लिए एक छोटी सी मिसाल दी। इब्राहीमी तहज़ीब अपनी एक अलग शख्सियत रखती है। इसका मेज़ाज, उसकी पसन्द व ना पसन्द दूसरी तहज़ीबों से

अलग और जानी पहचानी है। इस पर बड़ी बड़ी किताबें लिखी गई हैं। यहाँ इसकी दो नुमायाँ खुसुसियतों को बयान करता हूँ जो हर जगह देखी जा सकती हैं और आसानी से समझ में आ सकती हैं।

साफ़ सुथरा रहना, नहाना धोना, उजले और साफ़ कपड़े पहनना दुनिया की तमाम तहज़ीबों और शाइस्ता इन्सानों में पाया जाता है। इस्लामी इब्राहीमी तहज़ीब में भी इसको बड़ी अहमियत हासिल है, इसको एक लफ्ज़ "नज़ाफ़त" से अदा किया जा सकता है। लेकिन 'नज़ाफ़त' और "तहारत" में फ़र्क़ है। और जहाँ तक मुझे मालूम है 'तहारत' इब्राहीमी तहज़ीब की खुसूसियत है और वह इस बारे में जितनी सेन्सेटिव है और इसका मेआर इसके बारे में जितना बुलन्द हैं, मेरे इल्म में किसी और तहज़ीब में इसकी मिसाल नही मिलती। बदन और कपड़े की पाकी कपड़े या बदन पर पेशाब की एक छींट पड़जाये या कोई गन्दी चीज़ लगजाये तो इसको पाक किये बिना मुसलमान न नमाज़ पढ़ सकता है और न उसको इतमीनान हासिल हो सकता हैं। चाहे उसके कपड़े दूध की तरह सफेद और उसका बदन आइना की तरह साफ़ हो। यही हुक्म पानी, खाने, बर्तन, फर्श, ज़मीन और उन सब चीज़ों का है जो मुसलमान के इस्तेमाल में आती हैं।

जानवरों के गोश्त के इस्तेमाल के बारे में भी इसकी शरीअत और क़ानून दूसरों से मुखतलिफ़ हैं। यहाँ भी मुरदार व जायज़ और हराम व हलाल का फर्क़ है। इस्लामी शरीअत में कई जानवर हराम हैं और आमतौर पर यह वही हैं जिनको

इन्सान की सही फ़ितरत ना पसन्द करती है। और जो हलाल और जायज़ हैं उनको भी ज़िबह करने और ज़िबह करते वक्त अल्लाह का नाम लेने की शर्त है।

लाज़वाल इमामत और आलमगीर दावत

अल्लाह तआला ने इब्राहीम अ० के लिए लाज़वाल इमामत और लाफ़ानी दावत का फ़ैसला फ़रमाया है। उसने उनकी नस्ल में नबूवत, विलायत और दीनी रहनुमाई का मँसब हमेशा के लिए रख दिया है। उनके पूरे ख़ानदान पर बल्कि उनके हर मेहमान पर हक़ के लिए जिहाद, बातिल का मुक़ाबला, ख़ुदा की तरफ़ दावत और हर तरह के मुख़ालिफ़ हालात में इन्सानियत के बेड़े को पार लगाने की ज़िम्मेदारी है उनका फ़र्ज़ है कि हक़ के इस चराग़ को किसी हाल में भी बुझने न दें। यह वह बुनियादी बात है जो इन्सानियत की भलाई, बरबादी से उसकी हिफाज़त और जहन्नम से नजात के लिए काम कर रही है। इस लिए आज हमारी दावत वही होनी चाहिए जो अपने ज़माने में हज़रत इब्राहीम अ० ने दी थी। और जिस को अल्लाह ने हमेशा के लिए सनद दी है।

तर्जुमा : "और यही बात (इब्राहीम) अपने पीछे अपनी औलाद में छोड़ गये, शायद वह ध्यान देते रहें"

(सूरः ज़ुख़रफ़ 28)

यह दावत बुत परस्ती और शिर्क के खिलाफ़ है:–

तर्जुमा : "बस बचते रहो बुतों की गन्दगी से और बचते रहो झूठी बात से, सिर्फ एक ख़ुदा के होकर

और उसके साथ शरीक न ठहरा कर"

(सूरः हज 30-31)

इस दावत का अक़ीदा हमेशा यह रहा है :-

तर्जुमा : "यह आलमे आख़िरत हम उन्हीं लोगों के लिए ख़ास करते हैं, जो दुनिया में न बड़ा बनना चाहते हैं और न फ़साद करना, और नेक नतीजा मुत्तक़ी लोगों को मिलता है"।

(सूरः क़सस 83)

यह वह दावत है जो इन्सान और इन्सान में और वतन और वतन में कोई फ़र्क़ नहीं करती और रंग व नस्ल और ज़बान के मामलें में कोई जानिबदारी नहीं बरतती और न किसी तरह के एग्रेसन की इजाज़त देती है। इसके नज़दीक रंग, नस्ल, ज़बान और कल्चर की बुनियाद पर किसी इन्सान का किसी इन्सान से नफ़रत करना, उसकी जान या इज़्ज़त के पीछे पड़ना, उस पर ज़ुल्म करना बुत परस्ती की ही एक क़िस्म और जाहिलियत की यादगार है:-

तर्जुमा : "जब काफ़िरों ने अपने दिलों में ज़िद की और ज़िद भी जाहिलियत की"।

(सूरः फतह 26)

अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया :-

तर्जुमा : "मेरे बाद बिल्कुल क़ाफिर ही न हो जाना कि एक दूसरे की गर्दन बेधड़क मारने लगो"।

उसके नज़दीक सारे इन्सान आदम की औलाद हैं और आदम मिट्टी से बने हैं। किसी अरबी को अजमी पर, किसी

अजमी को अरबी पर कोई फ़ौक़ियत नहीं, मगर सिर्फ़ तक़्वा की बुनियाद पर :—

तर्जुमा : "लोगों हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया, और तुम्हारी क़ौम और क़बीले बनाये ताकि एक दूसरे की पहचान करो, और ख़ुदा के नज़दीक तुम में ज़्यादा इज़्ज़त वाला वह है जो ज़्यादा परहेज़गार है"।

(सूरः हुजरात-13)

आख़री नबी मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि, "जिसने किसी असबियत की दावत दी वह हम में से नहीं, जो असबियत के लिए लड़ा वह हम में से नहीं जो असबियत पर मरा वह हम से नहीं"। आपने एक मौके पर जब बाज़ लोग अन्सार और मुहाजिरीन के नाम पर नारा लगाने लगे थे, यह फ़रमाया, "इसको छोड़ो यह बड़ी गन्दी बात है"।

इब्राहीमी दावत की असल बुनियाद अक़ीदा में तौहीद पर, सोसाइटी में इन्सानियत के एहतराम और मसावात पर इख़लाक़ियात के मैदान में तकवा, हया और तवाज़ो पर, अमल के मैदान में आख़िरत के लिए कोशिश और जिहाद व क़ुरबानी पर, जँग के मैदान में शुजाअत के साथ रहम दिली और शफ़क़त पर, हुकूमत के दायरे में हिदायत के पहलू को मालियात व आमदनी पर तरजीह देने और ख़िदमत लेने के बजाय ख़िदमत करने, और नफ़ा उठाने के बजाय नफ़ा पहुंचाने पर है।

यह दावत इन्सानियत की सन्जीदा और सच्ची ख़िदमत और जाहिलियत के हमलों से इन्सानियत की हिफ़ाज़त में पूरी तारीख़ में मुमताज़ है।

कसरत में वहदतः–मिट्टी की निस्बत के एतबार से जिसकी एक असल और हक़ीक़त है, जिसकी हमारे दिल में क़दर व मुहब्बत है, और इस्लाम भी इससे इनकार नहीं करता और इसे ख़त्म करने का हुक्म नहीं देता, मिट्टी की इन निस्बतों के एतबार से जिनकी असल 'मिनहा ख़लक़नाकुम' है, हम बर्मी हैं, हम हिन्दुस्तानी हैं, हम तुर्क हैं, और इसी एतबार से हम सय्यद हैं, मुग़ल हैं, पठान हैं, लेकिन ईमानी और इख़लाक़ी हैसियत से, दिमाग़ी और ज़ेहनी हैसियत से हम इब्राहीमी हैं, हम मोहम्मदी हैं, और हम मुस्लिम हैं।

हमको अपनी इब्राहीमी व मोहम्मदी सिफत का साफ़ साफ़ इज़हार करना चाहिए। इसका सबूत देना चाहिए कि हम ज़ेहनी, ईमानी और रूहानी एतबार से, और इन निस्बतों की हैसियत से जो ज्यादा कीमती हैं सिर्फ इब्राहीमी हैं सिर्फ मोहम्मदी हैं सिर्फ मुसलमान हैं, चाहे हम हिन्दुस्तान में रहते हों चाहे पाकिस्तान में, चाहे इन्डोनेशिया में, चाहे चीन के रहने वाले हों चाहे मराकश के। तमाम दुनिया से निराले और अनोखे एक नये क़िस्म के खानदान के हम फर्द हैं। अपनी क़ौमियत और अपनी जबान की हैसियत से हम कितने ही मुख़तलिफ़ क्यों न हों हम सब एक हैं। मराकश के मुसलमान, मलाया के मुसलमान, बर्मा के मुसलमान, हिन्दुस्तान के मुसलमान, अलजज़ायर के मुसलमान सब की एक तहज़ीब है।

हो सकता है कि हमारे पहनावे मुख़तलिफ़ हों, मसलन हिन्दुस्तान में शेरवानी पहनी जाती है, लेकिन दूसरों मुल्कों के मुसलमान हरगिज़ इसके पाबन्द नहीं कि वह शेरवानी पहनें। इस्लाम ने लेबास की तराश ख़राश और उसकी काट एक तरह की नहीं दी। नबियों ने भी यह हुक्म नहीं दिया कि एक ही तरह के लेबास पहनो। हम देखते हैं कि अगर दुनिया भर के मुसलमानों को किसी जगह जमा करके देखा जाये तो उनका पहनावा अलग-अलग किस्म का होगा यह इख़तलाफ़ तहज़ीब का इख़तलाफ नहीं कहलायेगा।

इब्राहीमी तहज़ीब दर असल उन हुदूद का नाम है जिन्हें नबियों ने मुक़र्रर किया। और इसी वजह से वह दुनिया के इस सिरे से उस सिरे तक मुश्तरक हो सकती है। इन हुदूद के अन्दर आज़ादी है, जिन्दगी गुज़ारने के लिए बड़ा मैदान है। एक सही फ़ितरत का इन्सान बड़ी आसानी से इसमें जिन्दगी गुज़ार सकता है लेकिन हुदूद का पाबन्द रहना पड़ेगा। मर्द रेशम न पहनें, बेपर्दगी और बेजाखर्च न हों, पाजामा या लूंगी टख़नों से नीचे न हो। घटनों से ऊपर न हो, बेहयाई न हो, फ़ज़ूल खर्ची न हो।

हुदूद के इश्तराक के एतबार से अगर हम तहज़ीब की वहदत देखना चाहते हैं तो इसकी एक बहुत साफ मिसाल यह है कि बर्मा, मलाया, इन्डोनेशिया के मुसलमान दाहिने हाथ से खाते हैं, हिन्दुस्तान के मुसलमान भी दाहिने हाथ से खाते हैं और सारी दुनिया का मुसलमान हर अच्छा काम दाहिने हाथ से करता हैं, बाये हाथ से सिर्फ वही काम करता है जिनका

तक़ाजा जरूरत या फ़ितरत करती है। यह चीज़ उन हुदूद में से है जिन्हें नबियों ने मुक़र्रर किया है। इब्राहीमी व मोहम्मदी तहज़ीब में हर चीज़ के कुछ हुदूद हैं। अज़दवाजी जिन्दगी के कुछ ज़ाब्ते हैं, सोसाइटी के बारे में कुछ हिदायतें हैं। इसके बाद हमारा जो जी चाहें खायें, जिस तरह चाहें पकायें, कोई मुखालिफ़त नहीं करेगा। अल्लाह ने साफ मना कर दिया है कि कोई किसी के पहनावे पर मज़ाक न उड़ाये, किसी के खाने पीने और रहन सहन के तरीके का मज़ाक न उड़ाये, कोई किसी की ज़बान का मज़ाक न उड़ाये :–

तर्जुमा : "कोई क़ौम किसी क़ौम की खिल्ली न उड़ाये, मुमकिन है कि वह लोग इन से बेहतर हों। और न औरतें औरतों का मज़ाक उड़ायें, मुमकिन है कि वह उनसे अच्छी हों। और अपने मोमिन भाई को ऐब न लगाओं और न एक दूसरे का बुरा नाम रखो"।

(सूर : हुजरात–11)

वतन की मोहब्बत और इब्राहीमी तहज़ीब में दुराव नही

हमको मुल्क की तामीर व तरक्की में हिस्सा लेना चाहिए और एक दूसरे से बढ़ चढ़ कर तामीरी सलाहियत का सबूत देना चाहिए। हमको अपनी क़ाबिलियत, ईमानदारी, इन्तेज़ामी लियाक़त, सदाक़त, इस्तेक़ामत और सीरत की बुलन्दी और पुख्तगी का सबूत देना चाहिए। हम इस तरह मुल्क की ख़िदमत करें कि हमारी क़ीमत महसूस की जाये और हमारे वजूद को

इस मुल्क के लिए जरुरी समझा जाये।

हमको अपने मुल्क की ज़बानों की तरफ भी ध्यान देना चाहिए। हम न सिर्फ़ यहाँ की ज़बानें पढ़ें बल्कि उसमें महारत हासिल करें यहां तक कि हमारी ज़बान सनद मान लीजाये, हम इसके माहिर माने जायें। हम ज़बानें जो चाहें अपनायें, मगर इब्राहीमी तहज़ीब हम पर यह पाबन्दी आयद करती है कि झुठ न बोलें। हमारी लिखावट दायें तरफ से शुरु है या बायें तरफ़ से। बायें तरफ से लिखने पर इस्लामी शरीअत में कोई एतराज़ नहीं लेकिन यह पाबन्दी ज़रुर है कि हमारी तहरीर सच्चाई और नेक नियती पर मबनी हो। इसमें झूठ, फ़रेब, ज़ुल्म व ना इन्साफी न हो, बेहायी की बात न हो। झूठ, फरेब, गुनाह और हर वह चीज़ जिस से इन्सान पर ज़ुल्म होता हो, इन्सानियत ज़लील होती हो, दुनिया में बद अमनी फैलती हो, अरबी या फारसी रसमुल ख़त में लिखी जायेगी, वह ग़लत होगी, ख़ुदा की नाफ़रमानी होगी। इसके बरख़िलाफ़ हक़ व इन्साफ़ की बात अंग्रेज़ी या देवनागरी में लिखी जायेगी जो बायें तरफ से शुरु होती है, वह पसन्दीदा होगी, सवाब की और ख़ुदा की ख़ुशनूदी की बात होगी।

अरबी बेशक इस्लामी शरीअत की सरकारी ज़बान है इसमें क़ुरआन मजीद नाज़िल हुआ है, इसी में नमाज़ पढ़ी जाती है। इसके बाद सब ज़बानें बराबर हैं।

यह दूसरी बात है कि दायें तरफ़ से शुरू होने वाली ज़बानों में इस्लाम की तालीमात का एक बड़ा ज़ख़ीरा है। इसलिए कि दायें से लिखी जाने वाली सामी या आरियन

ज़बानों में ऐसी नस्लें पैदा हुईं जिनको तारीख़ में इसका तवील मौक़ा मिला कि वह इस्लाम की ख़िदमत कर सकें। उन्होंने इस ज़बान के ज़रिये इस्लाम को समझाया इस्लामी तालीमात को मुन्तक़िल किया। इस लिए हमारी निगाह में इन ज़बानों की किसी हद तक अहमियत है इसी बिना पर हम हिन्दुस्तान के अन्दर उर्दू की हिफ़ाज़त करना और अपनी आइन्दा नस्लों को इससे आशना करना अपना फ़र्ज़ समझते हैं। लेकिन इस से ज़बानों की पोज़ीशन पर कोई असर नहीं पड़ता और इससे किसी ज़बान की पाबन्दी नहीं आयद होती। यह ज़रूर है कि इस्लामी तहज़ीब यह पाबन्दी आयद करती है कि हम चाहे दायें से लिखें या बायें से इस में कोई झूठी दस्तावेज़ न हो, इसमें किसी की ग़ीबत न हो, बददियानती न हो। यह है इब्राहीमी तहज़ीब का ख़ुसूसी किरदार।

हिन्दुस्तान के इस मुल्क में जहाँ सैकड़ों तहज़ीबें, मज़ाहिब और फ़लसफ़े फले फूले और अब भी मौजूद हैं मुसलमान इब्राहीमी तहज़ीब के नुमाइन्दे और अलमबरदार हैं। इनके यहाँ रहने का मक़सद इसी दीन व तहज़ीब की हिफ़ाज़त होनी चाहिए और इसी में इस मिल्लत की हिफ़ाज़त और नुसरत का राज़ पोशीदा है।

हिन्दुस्तान में, जिसके ग़ालिब मज़हब और तहज़ीब ने बीसियों मज़ाहिब और तहज़ीब को अपने अन्दर समो लिया और इस तरह तहलील कर दिया कि उनका इम्तेयाज़ और उनकी इनफ़रादियत मिट गई, इस्लामी तहज़ीब के इतनी लम्बी मुद्दत तक बाक़ी रहने का राज़ यही है कि इसने इब्राहीमी तहज़ीब व

ख़सायल से अपना रिश्ता क़ायम रखा और अपने ख़ास अक़ीदे से हटना गवारा नहीं किया। अब भी इसकी हिफ़ाज़त इसी तरह मुमकिन है कि वह अपने मरकज़ से अपना रिश्ता क़ायम रखे और अपनी लाइन आफ डिमारकेशन (सरहदी ख़त) को मिटने न दे।

इब्राहीमी मिल्लत किसी का इजारा नहीं

मिस्र, अरब, मक्का के क़ुरेशी, यमन के ज़ैदी, मराकश के हसनी, जावा और सुमात्रा के हज़री का जितना इब्राहीमी मिल्लत पर हक़ है, उतना ही हक़ हिन्दुस्तान के मुसलमान, पाकिस्तान के मुसलमान, मलाया के मुसलमान और अफ़ग़ानिस्तान के पठान का भी है। यह हक़ कोई नहीं छीन सकता। एक हाशिमी क़ुरेशी के मुक़ाबले में जिसने अपनी बदक़िस्मती से हज़रत इब्राहीम और मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहिवसल्लम से अपना रिश्ता काट दिया हो, वह ब्रह्मनज़ादा हज़ारहा दर्जे अफ़ज़ल है जिसने अपना रूहानी, ईमानी, इख़लाक़ी, अक़ली और तहज़ीबी रिश्ता हज़रत इब्राहीम और मोहम्मद रसूलुल्लाह स० से क़ायम कर लिया :—

'क्या ख़ूब कहा सन्नूसी ने एक रोज़ शरीफ़े मक्का से
तू नाम व नसब का हिजाज़ी है, पर दिल का हिजाज़ी बन न सका'

अगर एक हिन्दुस्तानी का दिल हिजाज़ी है, तो उस हाशिमी से हज़ार दर्जे अच्छा है जो अपने ख़ानदान और नसब पर या जाहिलियत पर फ़ख्र करता है जो अबूजहल और

अबूलहब की औलाद होने पर फ़ख्र करता है और इब्राहीमी मिल्लत की तहज़ीब और खुसूसियात से उनको कोई दिलचस्पी नहीं है।

फ़ानी रिश्ते : दुनिया के सब रिश्ते फ़ानी हैं। न हाशिमी रहेगा न अरबी, न हिन्दुस्तानी रहेगा न मलायन, न इन्डोनेशी रहेगा न जावी। बस अल्लाह का नाम बाक़ी रहेगा और अल्लाह के लिए खुलूस बाक़ी रहेगा। नाम व नसब के भेदभाव और ख़ानदानों की कमतरी और बरतरी सब फ़ानी और हेच हैं। अल्लाहतआला को दीन अज़ीज़ है, इख़लास अज़ीज़ है, इब्राहीमियत अज़ीज़ है और इसके बाक़ी रहने का अल्लाह ने फ़ैसला किया है :–

"जो करेगा इम्तेयाज़े रँग व ख़ूँ मिट जायेगा,
तुर्क ख़रगाही हो, या एराबी-ए-वाला गुहर"

हमारे दो फ़ैसले : हम मुसलमानों ने पूरे इरादे के साथ सोच समझ कर अपने वतन में रहने का फ़ैसला किया है। हमारे इस फैसले को अल्लाह के इरादे के सिवा कोई ताक़त बदल नहीं सकती। हमारा यह फ़ैसला किसी कम हिम्मती, मजबूरी या बेचारगी की बिना पर नहीं। हमने सोच समझ कर यह फैसला किया है।

हमारा दूसरा फैसला यह है कि हम इस मुल्क में अपने पूरे अक़ायद, दीनी शेआर और अपनी पूरी मज़हबी और तहज़ीबी खुसूसियात के साथ रहेंगे। हम इनके किसी एक नुक्ते से भी दस्तबरदार होने के लिए तैयार नहीं।

इस देश के वासी की हैसियत से हमें यहां आज़ादी और

इज़्ज़त के साथ रहने का पूरा हक़ हासिल है। यह इस देश की जमहूरियत और आईन का भी फ़ैसला है। लेकिन इसका यह मतलब हरगिज़ नहीं कि हम अपनी ख़ुसूसियात, अपने अक़ायद, शेआर, अपनी ज़बान व तहज़ीब और अपनी इन चीज़ों को छोड़ कर जो हम को अज़ीज़ है, इस मुल्क में रहें। इस लिए कि इस तरह रहने से यह वतन वतन नहीं बल्कि एक जेलख़ाना बन जाता है जिसमें गोया पूरी क़ौम को ज़िन्दगी की इज़्ज़तों और लज़्ज़तों से महरूम रखकर सज़ा दी जाती है। हमारा ख़मीर ज़रूर इस मुल्क की ख़ाक से तैयार हुआ है और यह ख़ाक हमको बहुत प्यारी है लेकिन हमारी तहज़ीब इब्राहीमी है। और मुसलमान जिस मुल्क में भी रहेगा उसकी वतनियत चाहे कुछ भी हो उसकी तहज़ीब इब्राहीमी होगी। हम यहाँ ज़िन्दा और बाइज़्ज़त इन्सानों की तरह रहना चाहते हैं। हम इस मुल्क में आज़ाद हैं। इसकी तामीर व तरक्की में शरीक और इसकी दस्तूरसाज़ी में दख़ल रखते हैं। इसलिए इस का कोई सवाल नहीं कि हम दूसरे दर्जे के शहरियों की तरह ज़िन्दगी बसर करें। अपने मुल्क में आज़ादी के साथ ज़िन्दगी गुज़ारना हर शख्स का फ़ितरी, इन्सानी, इख़लाकी और क़ानूनी हक़ है, और इस हक़ को जब छीनने की कोशिश की गई तो इसके हमेशा सँगीन नतायज निकले।

ज़िन्दगी और मौत इस्लाम पर

अल्लाह तआला ने मुसलमानों से इस बात का मतालबा किया है कि वह इस्लाम व ईमान पर क़ायम रहने की कोशिश

करें, इसी पर ज़िन्दगी गुज़ारें और जब मौत आये तो इसी दीन व मिल्लत पर आये। अल्लाह तआला का इरशाद है :–

तर्जुमा : तुमको मौत न आये मगर इस हाल में कि तुम मुस्लिम हो"। (सूर : आले इमरान–102)

तर्जुमा : "इसी तरीके पर चलने की हिदायत इब्राहीम ने अपनी औलाद को की थी, और इसी की वसीयत याक़ूब ने अपनी औलाद को की। उन्होंने कहा था कि "मेरे बच्चो ! अल्लाह ने तुम्हारे लिए यही दीन पसन्द किया है, लेहाज़ा मरते दम तक मुस्लिम ही रहना"।

(सूर : बक़ : 132)

इस्लामी शरीअत ने एक मुसलमान के लिए पैदाइश से लेकर मौत तक इस के इन्तेज़ामात किये हैं और ऐसा माहौल बनाने की कोशिश की है जिस में मुसलमान इस हक़ीक़त को फ़रामोश न करने पाये। उसको हर वक्त याद रहे कि उसका तअल्लुक़ उस दीन व मिल्लत से है जिसकी दावत देने वाले इब्राहीम अ० थे जिसकी बुनियाद तौहीद पर है और वह एक अलग "उम्मत" हैं मुसलमान बच्चा जिस वक्त पैदा होता है, उसके कान में अज़ान दी जाती है, उसका इस्लामी नाम रखा जाता है, नामों में उन नामों की तरजीह दी गई है जिनमें अबदियत व हम्द का इज़हार है उससे इब्राहीमी सुन्नतें अदा करायी जातीं हैं और जब वह मरता है, तो सब इसके लिए मग़फ़रत की दुआ करते हुए अपने लिए और सब मुसलमानों के लिए दुआ करते हैं।

तर्जुमा : ऐ अल्लाह ! हम में से तू जिसको ज़िन्दा रखे उसको इस्लाम पर ज़िन्दा रखियो और जिस को तू मौत दे तो उसको ईमान के साथ दुनिया से उठाइयो"।

यहाँ तक कि क़ब्र में उतारते हुए और आख़िरी ठिकाने पर पहुँचाते हुए भी यही लफ्ज़ ज़बान पर होते हैं।

तर्जुमा : "अल्लाह के नाम पर और रसूलुल्लाह के दीन व मिल्लत पर"।

इस सब का मक़सद और पैग़ाम यह है कि हमें उठते बैठते, सोते जागते और ज़िन्दगी की हर मंज़िल पर इसको याद रखना है कि हम इब्राहीमी मिल्लत और मोहम्मद स० की उम्मत के फ़र्द हैं।

इब्राहीमी मिल्लत और दीन मोहम्मदी की इस दावत को आज सराहत के साथ पेश करने की ज़रूरत है सोसाइटी व इख़लाक में इस दावत के कुछ ख़ास उसूल हैं इसका एक ख़ास अक़ीदा और किरदार है। यह मिल्लत फ़र्द की भलाई की ज़ामिन है।

नाज़ुक अमानत : आज मुसलमानों की ईमानी क़ूवत का भी इम्तेहान है और जेहानत का भी, फैसले की ताक़त का भी इम्तेहान है और ज़िन्दगी की सलाहियतों का भी। हमको साबित करना है कि हम ईमान के साथ ज़िन्दा रहने के क़ाबिल हैं या नहीं। हम जहाँ रहें इस देश की ख़ुसूसियात अपने अन्दर ख़ुशी से पैदा करें, वहाँ की ज़बानें सीखें, और बच्चों को पढ़ायें, अपने हिस्से की रसद हासिल करें, देश के एडमिनिस्ट्रेशन में

हिस्सा लें लेकिन साथ ही साथ दावत देने वाले भी रहें, मोमिन भी रहें, तौहीद का एलान भी करें और पैग़ाम पहुँचाने वाले भी बनें। ख़ुदा के यहाँ हम से सवाल होगा कि अल्लाह ने हम को सैकड़ों साल इस मुल्क में बाक़ी रखा लेकिन हज़रत इब्राहीम और मोहम्मद रसूलुल्लाह की दावत, और आपका दीन क्यों हमारे अन्दर महदूद रहा, इस को फैलना चाहिए।

मूसा अ० की क़ौम की नक़्ल से बचिये

अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में मूसा अ० की क़ौम बनी इस्राईल का एक इबरतनाक वाक़या बयान किया है जिसमें हमारे लिए बहुत बड़ा सबक़ है :–

तर्जुमा : "बनी इस्राईल को हमने समन्दर से गुज़ार दिया, फिर वह चले और रास्ते में एक ऐसी क़ौम पर उनका गुज़र हुआ जो अपने चन्द बुतों पर आशिक थी, कहने लगे 'ऐ मूसा ! हमारे लिए भी, कोई ऐसा माबूद बना दे जैसे इन लोगों के माबूद हैं।' मूसा अ० ने कहा, " तुम लोग बड़ी नादानी की बातें करते हो, यह लोग जिस तरीके पर चल रहे हैं वह तो बरबाद होने वाला है, और जो अमल वह कर रहे हैं वह सरासर बातिल है"। फिर मूसा अ० ने कहा, "क्या मैं अल्लाह के सिवा कोई और माबूद तुम्हारे लिए तलाश करूँ' हालाँकि वह अल्लाह ही है जिसने तुम्हें दुनिया भर की क़ौमों पर फ़ज़ीलत दी है।"

(सूर : एराफ 138–140)

अल्लाह तआला ने मूसा अ० के ज़रिये बनी इस्राईल को अपनी सही मारफ़त अता की और तौहीद वह दौलत दी जिस से बड़ी कोई दौलत नहीं। उनके अन्दर ईमान पैदा किया। वह यह समझे कि इस दुनिया में अल्लाह के सिवा कोई बन्दगी के लायक़ नहीं और उसके सिवा इस दुनिया में किसी की हुकूमत नहीं। लेकिन वह ऐसे नाक़दरदान और नादान थे कि उन्हों ने एक बार एक मेला देखा कि जिसमें लोग ख़ुदा के सिवा दूसरों को पूज रहे थे। इसे देखकर उनके मुंह में पानी भर आया कि अगर हमारे लिए भी ऐसे ही माबूद तजवीज़ कर दिये जाते तो कैसी रौनक़ और बहार होती। उन्हों ने कहा :–

तर्जुमा : ऐ मूसा ! हमारे लिए भी कोई ऐसा माबूद बना दे जैसे इन लोगों के लिए माबूद हैं"।

(सूर : एराफ़ 138)

ऐ मूसा ! ज़रा हमारे लिए ऐसे ही कोई ज़ाहिरी शक्ल में माबूद तजवीज़ कर दीजिये, जैसा कि उन के पास है। हज़रत मूसा अ० ने कहा, "तुम पहले दर्जे के नादान हो, तुम्हारी अक़ल पर पत्थर पड़ गया है, तुम्हें नजर नहीं आता। जो यह कह रहे हैं, वह ख़ाक में मिल जानें वाला है, वह कुछ काम आने वाला नहीं। इस के बाद उन्हों ने ज़रा समझा कर कहा :–

तर्जुमा : "क्या मैं अल्लाह के सिवा कोई और माबूद तुम्हारे लिए तलाश करूँ ? हालांकि वह अल्लाह ही है जिसने तुम्हें दुनिया भर की क़ौमों पर फ़ज़ीलत बख्शी है"। (सूर : एराफ 140)

अल्लाह के बन्दों ! ख़ुदा तुम्हारे हाल पर रहम करे ख़ुदा तुम्हे अक़्ल और समझ दे। मैं ख़ुदा को छोड़कर तुम्हारे लिए और कोई ख़ुदा लाऊँ। हालाँकि उसने तुम को तमाम दुनिया पर फ़ज़ीलत दी है, और तुम कहते हो कि इस फ़ज़ीलत देने वाले, एहसान करने वाले को छोड़कर जिसने फ़िरऔन की गुलामी से तुमको नजात दी मैं कोई आजिज़ और बेइख़्तेयार ख़ुदा तुम्हारे सामने लाऊँ।

हक़ के लिए सीना सिपर : इब्राहीमी ख़ानदान की एक ख़ुसूसियत यह है कि जहाँ भी रहेगा हक़ के लिए सीना सिपर रहेगा, तौहीद की सदा बुलन्द करता रहेगा। अल्लाह के रास्ते की तरफ सब को बुलाता रहेगा। जिसने अल्लाह के नाम का झँडा बुलन्द किया दुनिया के किसी कोने में अगर आप उसका पता लगायेंगे तो सय्यदना इब्राहीम अ० और सय्यदना मोहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से उसका रिश्ता मिलता होगा। दुनिया में बार-बार लड़ाईयाँ हुईं, दो आलमगीर जँगें हो चुकी हैं इन से दुनिया में बड़ी तबाही आयी लेकिन इसमें से कोई इब्राहीमी ख़ानदान की जँग नहीं थी। इस जँग में इब्राहीमी ख़ानदान की कोई शाख़ फ़रीक़ नहीं थी। यह पेट के लिए थी, यह बाजारों के लिए थी, मारकेट हासिल करने के लिए थी, हुकूमत और इक्तेदार के लिए थी, यह हवा व हविस की जँग थी, इस लिए कि यह इब्राहीमी मिल्लत की तरफ से नहीं लड़ी गई थी।

आज सारी दुनिया में जिसको देखेंगे कि वह अल्लाह के नाम की रट लगता है, ख़ुद भी लेता है दूसरों को भी तलक़ीन

करता है, अगर तहक़ीक करेंगे तो वह इब्राहीमी व मोहम्मदी निकलेगा। क़यामत तक के लिए तौहीद का एलान ईमान की दावत, खुदा के ख़ौफ़ और आख़िरत की फ़िक्र की दावत, क़यामत तक के लिए दीनी कोशिश को अल्लाह तआला ने इब्राहीमी ख़ानदान के सिपुर्द कर दिया है। हर जगह, हर ज़माने में इब्राहीमी ख़ानदान का कोई सर फिरा मल्लाह मौजों से टकराता रहेगा, धारे के ख़िलाफ़ किश्ती को चलाता रहेगा। बाज़ू थक जाते हैं, पतवार जवाब दे जाते हैं, मौजें गुस्ताख़ी करती हैं मगर इब्राहीमी ख़ानदान का मल्लाह है कि :–

हवा है गो तुन्द व तेज़ लेकिन चिराग़ अपना जला रहा है,
वह मर्द दरवेश जिसको हक़ ने दिये हैं अन्दाजे खुस्र वानः

———

सभ्यता और संस्कृति पर इस्लाम की छाप और उसकी देन

लेखक

मौलाना सय्यद अबुल हसन अली नदवी

"इस्लाम और मानव सभ्यता व संस्कृति" एक सच्चा और सजीव विषय है जिसका सम्बन्ध हज़रत मोहम्मद स० के अभ्युदय व इस्लामी सन्देश व शिक्षा ही से नहीं, जीवन की वास्तविकताओं, मानवता के वर्तमान व भविष्य तथा सभ्यता व सस्कृति की संरचना में इस्लामी उम्मत की ऐतिहासिक भूमिका से भी है। यह महत्वपूर्ण प्रकरण वास्तव में एक व्यक्ति के प्रयास के बजाय किसी सामूहिक प्रयास की अपेक्षा करता है। क्योंकि यह विषय अपनी व्यापकता में विश्वव्यापी है। यह व्यापक भी है ठोस भी। इसका काल पहली इस्लामी शताब्दी से लेकर वर्तमान शताब्दी तक, और इसका विस्तार दुनिया के एक किनारे से दूसरे किनारे तक है। अपने भावार्थ में यह विश्वास व आस्था से आचरण व व्यवहार तक तथा व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन से राजनीति व क़ानून और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों तक तथा चिन्तन, ज्ञानमयी व नैतिक उत्थान से लेकर कला कौशल तथा ललितकलाओं तक छाया है।

प्रयास किया गया है कि इस फैले हुए शीर्षक का दस भागों में वर्णन किया जाय जिससे दुनिया को इस्लाम के महान् और प्रदर्शित आभार व प्रभाव का कुछ अनुभव हो सके। (P. 120)

*

तूफ़ान से साहिल तक

लेखक : **मोहम्मद असद**

यह किताब एक 'सफ़रनामा' है, एक बेचैन बुद्धिमान और विचारवान् पश्चिमी विद्वान के पूरब दिशा के सफ़र व मशरिक़े उस्ता (अरब देशों) की यात्रा की कहानी। 'सफ़रनामा' अपनी नाना प्रकार की रूचियों, तरह-तरह की तसबीरों, रंग बिरगें दृश्यों, बिना हिचकिचाहट चित्रकारी, बेधड़क विचारों का स्पष्टीकरण और ज़िन्दगी व ज़िन्दादिली के साथ जो एक अच्छे और सफल "सफ़रनामा" की विशेषतायें हैं। (P. 216)